स्वर्गका खजाना

प्रकाशक—
लक्ष्मी साहित्य-पुस्तक माला
बनारस सिटी।

स्वर्गका खजाना

पन्नालाल गुप्त, व्यवस्थापक,
स० सा० पुस्तकमाला कार्यालय,
बनारस सिटी।

आप स्वयं स्थायी ग्राहक बनिये   अपने मित्रोंको भी बनाइए

मुद्रक
शिवराम सिंह
नेशनल प्रेस, बनारस कैण्ट।

प्रस्तावना

हमारे साहित्यमें आज सात्विकी सृष्टिकी बड़ी आवश्य-
[ता] है। पाश्चात्य साहित्यके अन्धानुकरणसे हमारी संस्कृति
[क्षी]ण होती जा रही है। भारत—जैसे अध्यात्म-प्रधान देशके
[लि]ए यह अत्यंत दुःखका विषय है। जड़वादके लिए यहाँकी
[भू]मि उपजाऊ नहीं कही जा सकती। लेनिनवादकी अपेक्षा
[गां]धीवाद ही इस देशमें अधिक स्थायित्व प्राप्त कर सकेगा, यह
[स्व]यं:स्वतः सिद्ध बात है। श्रद्धा और आस्तिकताको खोकर
[ह]में मिलेगा क्या? इनसे वंचित हो जाना मानों अपने मूल-
[ज]ीवनको खो देना है। अतएव आवश्यकता है, ऐसे सात्विक
साहित्यके सृजनकी, जिससे हम अपनी आस्तिकता-मूलक
संस्कृतिको सार्वभौमिक बना सकें।

ऐसे साहित्यका आरंभ हो तो गया है पर उसकी गति
अभी अत्यंत धीमी है। गुजराती भाषाके सफल लेखक श्रीयुत
अमृतलाल सुंदरजी पढ़ीयारकी एक पुस्तक 'स्वर्ग नो खजानो'
इसी प्रकारके साहित्य-सृजनकी शुभसूचना है। आस्तिकता
और श्रद्धाके भावोंकी रक्षा करनेसे मानव-चरित्र कैसा सुसं-
घटित हो जाता है इसकी बड़ी ही मनोहारिणी शैलीमें लेखकने

अपनी पुस्तकमें विवेचन किया है। साधारण और सरल दृष्टान्तोंके द्वारा ऊँचे-ऊँचे सिद्धान्तोंको लेखकने सफलताके साथ छोटे-छोटे निबन्धोंमें हृदयंगम करानेका प्रयत्न किया है, जिसमें वह सफल भी भलीभाँति हुआ है। दृष्टान्त सचमुच हमारे हृदयोंके भीतर सीधे बाणकी तरह चुभ जाते हैं। परमहंस रामकृष्णदेव दृष्टान्तोंके ही द्वारा आध्यात्मिक सिद्धान्तोंका विवेचना किया करते थे।

मेरे स्नेह-पात्र बा० मुकुन्ददासजी गुप्त बी. ए. ने इस पुस्तकका हिन्दीमें अनुवाद करके इस दिशामें एक अच्छी सेवा की है। अनुवाद साधारण रीतिसे अच्छा हुआ है। मूल-ग्रन्थमें हिन्दी-कविताओंके भी यत्र-तत्र कुछ अवतरण दिये गये हैं। अनुवादक महोदय यदि उन अवतरणोंको ज्यों-का-त्यों उद्धृत न करके उन्हें उनके शुद्धरूपमें दे देते तो अच्छा होता। आशा है, आगेके संस्करणमें इसका तथा भाषा-सम्बन्धी दो-चार त्रुटियोंका संशोधन वे कर देंगे।

हिन्दी-भाषा-भाषी जनतासे मेरा अनुरोध है, कि वह इस पुस्तकको अवश्य अपनावे।

वियोगी हरि

स्वर्गका खजाना

१

जिस प्रकार शृंगार किया हुआ घोड़ा बारातके घोड़ोंके साथ मस्तीसे चलता है, परन्तु पीछे उसे बदबूदार तबेलेमें मच्छरोंके साथ रहना पड़ता है; तुम्हारी भी आचरण न सुधारने पर वैसी ही हालत होगी

ईश्वरके कृपापात्र अद्भुत शक्तिशाली एक महान भक्तराज प्रसंगवशात् ऐसा मनोरंजक दृष्टान्त देते थे जिसका सब लोगों पर पूरा असर होता था। उन्होंने एक बार हरिजनोंकी मंडलीमें कहा कि बारातके घोड़ोंमें सुनहला साजवाला दंभी घोड़ा नाचता है, क्या इसे तुमने देखा है ? इस समय उसके पाजेबकी झंकार, उसके कलगीकी शोभा, उसके गर्दनका आकार, उसके कानोंकी तेज़ी, उसके पीठपरका सुन्दर ज़ीन, उसपर रेशमी झूलके घुंघरुओंकी झनझनाहट और उसकी हाव-भाव-पूर्ण चाल, यह सब बहुतही मनोमोहक तथा देखनेही लायक होता है; किन्तु यह सब थोड़ीही देरके लिए होता है। घंटे दो-घंटेमें जब घोडा बारातसे खाली हो जाता है, तब इसी घोड़ेको पीछे मक्खियों और मच्छरोंसे घिरे हुए बदबूदार अंधेरे तबेलामें जाना पड़ता है। इसी प्रकार भाइयो ! हमारा वैभव,

हमारा मान, हमारी नम्रता व सुशीलता, हमारी नाचपार्टी, हमारे सेठानिओंकी चटक-मटक, हमारे श्रीमतोंकी शेख़ी, हमारे अमलदारोंका क्रोध, हमारे युवकोंका मिजाज़, बुड्ढोंकी बड़बड़ाहट, सुशिक्षित बहनोंकी कोमलता, विद्यार्थियोंकी उच्छृङ्खलता, हमारे राजाओंका मौज उड़ाना और झूठा बड़प्पन दिखानेके लिए आत्म-श्लाघायुक्त ऊपरी धूमधाम, यह सब कब तक चलेगा? और किस काममें आयेगा? इसका तो ज़रा विचार करो! पानसे रंगे हुए तुम्हारे लाल होठकी लाली कितनी देर तक रहेगी? तुम्हारे उच्च कोटिके बीड़ियोंका धुआँ कहाँ तक जायगा? तुम्हारे सेन्ट और अतरकी सुगंधि तुम्हारे जीवनपर क्या असर डालेगी? रूपवान बनानेका मुँहपर पोतनेका तुम्हारा पाउडर कितनी देर तक टिक सकेगा तुम्हारी अंगूठीके हीराका प्रकाश कहाँ तक पहुँच सकेगा तुम्हारी तीव्रगामी गाड़ियाँ कितनी दूर तक दौड़ सकेंगी? तथा तुम्हारी लाडली स्त्रियोंका हाव-भाव कब तक काम आयेगा इसे तो ज़रा विचारो! भाइयो! याद रखो, यह सब शृंगार किये घोड़ोंके समान थोड़ीही देरका है और इसी प्रकार यदि अन्त तक रह जाओगे तो पीछे नरकमें ही जाना पड़ेगा; क्योंकि जिस प्रकार घोड़ा थोड़ीही देरके लिए बारातके लिए सजाया जाता है उसी प्रकार तुम्हारी जिन्दगी भी थोड़ीही देरकी है। उस परम कृपालु परमात्माने कृपा करके हमें बहुत प्रकारकी सुविधायें दी हैं। ध्यान रखो कि इसका अनुचित उपयोग न हो, और यदि ध्यान नहीं रखोगे तो जिस प्रकार बारात खाली होनेपर घोड़ेको तबेलेमें जाना पड़ता है उसी प्रकार ... पूरी होनेपर हमें नरकमें जाना पड़ेगा। इतना ही न

यदि हम अपने उत्पन्न करने वाले, आयुष्य, आरोग्यता, धन-धान्य, बुद्धि तथा अपार शक्ति देनेवाले परम कृपालु सर्व-शक्तिमान् निष्पक्ष न्यायी महान् प्रभुको भुलाकर अन्त तक अहंकारमें पड़े रहेंगे तो इन सब सुखोंके बीचमें भी इस जीवनमें ही अपने मनकी नीचतासे हमें नरक भोगना पडेगा, इससे भाइयो! इस प्रकार जीवित रहतेही नरक न भोगना पड़े, इसके लिए प्रभुके मार्गमें रहकर ऐसा कार्य करो जिससे प्रभुकी कृपा प्राप्त हो सके! प्रभु-प्रदर्शित मार्गका अनुसरण करके ऐसा कार्य करो जिससे प्रभुकी कृपा प्राप्त हो सके!

२

सबके साथ स्वतंत्रता पूर्वक उदार हृदयसे व्यवहार करना और यथासाध्य उसे निभा लेनाही तुम्हारा कर्त्तव्य है

एक जिज्ञासु गृहस्थने किसी महात्मासे पूछा—महाराज! रना जीवन सुधर सके, प्रभुके मार्गमें चल सकूं, अपने भाई ंधुकी सहायता कर सकूं, हृदयको दिलासा मिल सके, नम्रता पूर्वक बर्ताव किया जा सके और सब वर्ग, सब धर्म, देश, काल और सम्प्रदायोंमें जिसका प्रयोग हो सके ा धर्मका सबसे उत्तम नियम कौनसा है? महाराजने कहा : तप करना सबसे उत्तम नियम है। यह सबके पालन करने ाग्य सरल नियम है। यह ऐसा नियम है जिसका कि सब र्यानमें प्रयोग किया जा सकता है और इनसे अपना और सरेका दोनोंका भला हो सकता है, इतनाही नहीं, यह दूसरे ाधनोंकी सहायता बिना हो सकता है इसलिए तप करना र्वोत्तम कार्य है।

वयं कष्ट सहो, प्रभुके लिए अपने स्वार्थका भी अर्पण करदो और तपका हेतु यही है कि आत्मा-परमात्माकी एकता करके जगतका तथा ईश्वरका कर्तव्य पालन करनेमें अपना मन लगाओ। इस प्रकार करनेको तथा इसके साथ दूसरे और भी उत्तम कार्य करनेको मैं तप कहता हूँ और ऐसा व्यवहार करना संसारके प्रत्येक मनुष्यका कर्त्तव्य है; यह मनुष्य-मात्रका सामान्य धर्म है। इस प्रकार अपने मनको रोकनेके लिए न धनकी आवश्यकता है, न दूसरोंकी सहायताकी। न शरीरको परिश्रम ही करना पड़ेगा और न इसमें बहुत ज्ञानकी ही आवश्यकता है। बाहरी साधनोंकी सहायता बिना भी मनको रोकनेका अभ्यास किया जा सकता है; इससे महात्मागण कहते हैं कि तप करना अर्थात् मनको वशमें करना धर्मका सर्वोत्तम नियम है।

इतना जानकर अब तुम्हारे जानने योग्य बात यह है कि तुम्हारा तप कौनसा है? तुम किस प्रकार मनको रोक सकते हो? इसके लिये एक महान् मकराज महाराज कह गये हैं कि यदि तुम्हारा साला लुचा हो तो अपने मनको मारकर उसके साथ अच्छा बर्ताव करना, यह तुम्हारा तप है, यदि तुम्हारा भाई नालायक है तो भी उसे निभाते जाना तुम्हारा तप है। स्त्री देढ़ हाथकी जीभवाली हो तथा कजीया करनेवाली हो तो भी उसके कड़वे वचनको सुनकर कुछ न कहना तुम्हारा तप है; लड़का यदि नशा खानेवाला हो और बार बार तुम्हें हैरान करता हो तो उसपर क्रोध न करनाही तुम्हारा तप है; तुम्हारा पड़ोसी डाह करनेवाला हो और तुम्हें देखकर जल मरता हो तथा बिना कारण जहां तहां तुमपर बोली बोलता हो तो भी उससे वैर न करके उसके साथ बन्धुत्व रखना तुम्हारा तप है,

...म्हारा साझीदार निर्बल हो तो भी दिया न कर उसे निभाले ...नाही तुम्हारा तप है, नौकरके अनाड़ी होनेपर भी यथा... ...य उसकी जीविका न मारनाही तुम्हारा तप है, वृद्ध मा ...पका आचार विचार पसन्द न होनेपर भी उन्हें प्रसन्न रखना तुम्हारा तप है, और संसारकी विविध प्रकारकी उपाधियोंके बीचमें रहकर भी मनमें समता रखना और परमात्माके साथ तार न टूटने देनाही तुम्हारा तप है। इसलिए भाई !, बाहर अग्निकी धूनी न तापकर मनमें समता रखनेका तप करना सीखो। यह तप करना किस प्रकार सीखा जा सकता है, क्या यह तुम्हें मालूम है ? संत कहते हैं कि मन जब लोभमें पड़ जाय, उस समय इस प्रकार विचारना चाहिये कि प्रभु दाल रोटी देता है तब मैं अधर्म क्यों करूँ ? ऐसा सोचकर लोभमेंसे मन को पीछे खींचनाही तप है। मन जब क्रुद्ध हो जाय तब विचारना कि मेरा कितने लोगोंसे सम्बधही है ? कल सवेरे तो मुझे मर जाना है, सब लोग अपने अपने कर्मोंका फल भोगेंगे तब किसलिए मैं बुराई करूँ ? इस प्रकार क्रोधमेंसे मन फेरनाही तप है। इस प्रकार जिन जिन विचारोंमें या तुच्छ विषयोंमें मन जाय वहाँसे उसे लौटाना और समता रखकर प्रभुके मार्ग में चलनाही तप है। इससे भाई ! प्रभुने तुम्हें जिस स्थितिमें रखा हो उसी स्थितिके अनुकूल होकर उसमेंसे आनन्द लो, इससे परमकृपालु ईश्वर तुम्हारा तप स्वीकार करेगा और यदि समता रखोगे तो गृहस्थाश्रमके जंजालसे मुक्त होकर इसी जीवनमें शांति पा सकोगे और मृत्यु होनेपर प्रभु मोक्ष देगा। इससे भाइयो ! जैसे हो वैसे सबको निभा ले जाना सीखो, क्योंकि यही सर्वोत्तम तप है और यही ईश्वरकी इच्छा है।

३

प्रथम अड़चनों को सहकर भी भक्त बनो, समय आनेपर अनुकूलता अपने आपही प्राप्त हो जायगी

बहुत से मनुष्य कहते हैं कि यदि मुझे थोड़ासा भी पैसा मिल जाय तो मैं हाय हाय छोड़कर एकान्तमें भजन करूँ। कुछ लोग कहते हैं कि लड़का बड़ा हो जाय और सब समझ ले तो मैं शांति पूर्वक भजन करूँ, कुछ कहते हैं कि मेरी मां या बाप रोगग्रस्त हैं, इन्हें कुछ फ़ुरसत हो, तब मैं एकान्त में भजन करूँगा। कुछ कहते हैं कि हमारा गांव ही खराब है, वहांके मनुष्य मुझसे भजन ही नहीं करने देते, कुछ न कुछ बाधा डाल देते हैं, इसलिए जब मैं किसी तीर्थमें जाऊँगा तब एकान्तमें भजन करूँगा, कुछ लोग कहते हैं कि भजन करनेका तो बहुत मन करता है किन्तु करूँ क्या? मेरा धंधा इतना खराब है कि एक मिनटकी भी फुरसत नहीं मिलती और काम ऐसा है कि छोड़ भी नहीं सकता। कुछ कहते हैं कि हमारे घरके लोग इतने खराब हैं कि उनकी कुछ बात ही मत पूछो, थोड़ी देर भी चुपचाप बैठने नहीं देते, अरे! सुखसे रोटी भी नहीं खाने देते, तब भजनकी तो बात ही जाने दो! कुछ लोग कहते हैं कि हमारी नौकरी ऐसी खराब है कि तोबा! ऊपर आँख ही नहीं उठती, इसका और उपाय ही क्या है। बहुधा ऐसा मन होता है कि घड़ी दो घड़ी सत्संग करूँ, किन्तु नसीब ऐसा फूटा है कि अवसर ही नहीं मिलता, इससे अब भजन करनेका समय मिल सके, इस प्रकारकी नौकरीकी खोजमें हूँ किन्तु अब तक पता ही नहीं लगा है। कुछ लोग कहते हैं कि अभी देर है, ज़रा और वृद्ध हो जाऊँ तो भजन

आदि करूँगा। क्या जाने वृद्ध होनेका परवाना मिलही ग
हो। कितने लोग कहते हैं कि भजन ध्यान करनेकी तो मे
बड़ी इच्छा है किन्तु ऐसा गुरु ही कहाँ है जो मुझे सच्चा मा
देखा सके। ऐसे महात्माकी तलाशमें हूँ और वह जब त
नहीं मिलता तब तक घरमें बैठा हूँ। कुछ लोग कहते
करता तो बहुत कुछ है किन्तु जीव ऐसा अभागा है कि इससे
कुछ होता नहीं, कोई महात्मा कृपा करके यदि एक प्याल
पिला दे तो काम हो जाय, नहीं तो मुझसे तो कुछ होन
जाना नहीं है। कुछ कहते हैं कि हमारे जैसे लोग जबत
भजन आदि नहीं करते तब तक मुझसे भी सत्संग में नहीं
आया जायगा। मन तो बहुत चाहता है कि सत्संग करूँ त
अच्छा हो और समझता भी हूँ कि यह बहुत अच्छी बात है
किन्तु मुझे तो अपना पोजीशन (मर्त्तबा) न संभालना पड़ता
है। कुछ कहते हैं कि मेरी तबीयत ठीक नहीं रहती, इससे
कुछ नहीं कर सकता, यदि शरीर अच्छा होता तो सब कुछ
कर सकता था, और कुछ लोग कहते हैं कि मुझे तो पेटकी
हाय हाय पड़ी रहती है तो भजन कहाँसे करूँ। मेरा तो पेट
ही परमेश्वर है, इससे पेटकी बात बताओ पीछे भजनकी
बात करना।

भाइयो! परम कृपालु, प्राणदाता, अन्नदाता और मोक्ष
दाता सर्व शक्तिमान् महान् ईश्वरका भजन करनेमें बहुत
लोग पीछे रहते हैं और इस प्रकार कोई न कोई बहाना
निकाला करते हैं, किन्तु एक महात्मा कह गये हैं कि सर्वशक्ति
मान् महान् ईश्वरका भजन करनेमें इस प्रकार बहाना करना
मरे मनकी निर्बलता सूचित करता है, यह हमारा आलस्य
... रखो कि सब प्रकारकी अनुकूलता

लनेपर भजन करना न हुआ है और न आगे होगा, क्योंकि इस संसारमें आयसे व्यय बहुत अधिक है। फिर यदि सब प्रकारकी अनुकूलता मिलनेपर ही भजन किया जाता तब गरीबों और दुखियोंका क्या हाल होता? वे किस प्रकार भजन कर सकते? इन सब बातोंपर विचार करनेसे पता लगेगा कि भजन करनेका आधार बाहरकी अनुकूलतापर नहीं है बल्कि आन्तरवृत्तिपर है। यदि ऐसा नहीं है तो देखो कि तुम्हारे मित्रोंमें और ग्राम वासियोंमें ऐसे बहुतसे लोग हैं जिन्हें सब प्रकारकी अनुकूलता है, किन्तु उनमें से कितने लोग भजन करते हैं? कहो कोई भी नहीं। यदि अनुकूलतासे ही भजन हो तो ऐसा क्यों होता? भाइयो! भजनका सम्बन्ध अवकाश से नहीं है, बल्कि अंतःकरणके लगनसे है। जिसका जीव जागृत है, जिसने प्रभुकी महिमा समझा है, प्रभुप्रेमके आकर्षण से खिंचा गया है और जिसके अन्तरमें ईश्वरीय आनन्द भर गया है वह फांसीके तख्तेपर खड़े होनेपर भी भजन कर सकता है, वह भभकती हुई अग्निके बीचमें भी भजन कर सकता है और कालके मुँहमें पड़कर भी भजन कर सकता है, किन्तु जो बहाना निकाला करते हैं, जो आलसी बनकर पड़े रहते हैं और जिन्हें अपनी आत्माकी परवाह नहीं है उन्हें चाहे लाख रुपया दिया जाय, लाख आयुष्य मिले खूब तन्दुरुस्ती मिले, सब महात्मा मिल जायँ, सब प्रकारके अनुकूल साधन मिल जायँ और इन्द्रासनभी मिल जाय तौ भी वे भजन नहीं कर सकते, और यदि कभी सब प्रकारकी अनुकूलता मिलनेपर भजन करें भी तो इसमें उनकी बहादुरी ही क्या है? अड़चनोंके रहते हुए भी जो भजन करता है उसीकी बहादुरी कही जा सकती है, इससे याद रखो कि उपरोक्त

प्रकारकी यदि बाधायें पड़ें तो वे तुम्हारी कसौटी हैं और ऐसी कसौटीमेंसे उत्तीर्ण होनेपर ही सर्व शक्तिमान् महान् ईश्वर हमारे ऊपर प्रसन्न होता है और उसके प्रसन्न होनेपर ही अनुकूलता मिलती है, इससे अनुकूलता आनेकी बाट न देखकर बाधाओंके रहते हुए भी यथाशक्ति भजन करो, इससे समय आनेपर सर्वशक्तिमान् परम कृपालु महान ईश्वर अपने आपही अनुकूलता देगा क्योंकि, भक्तोंका कल्याण करनेके लिये वह प्रतिज्ञावद्ध है, इससे बाधाओंपर ध्यान न देकर भक्ति करनेमें लगे रहो ! भक्ति करनेमें लगे रहो ।

४

रोनी सूरत ऐसा मुँह बनाकर हरिकी सेवामें जाया नहीं जा सकता

मेलामें जब जाना होता है तब गहने पहनकर और प्रसन्न वदन होकर लोग जाते हैं, बारातमें जब जाना होता है तब जामा पहनकर इत्र आदि लगाकर बड़े ठाठ बाटसे जाते हैं, नाटकमें जाना होता है तो आई ग्लास, दुर्बीन, पंखा, नाटककी पुस्तक आदि लेकर खूब सुसज्जित होकर जाते हैं, किसी बड़ी पार्टीमें जाना होता है तो भडकीला कपड़ा पहनकर और हँसते हुए जाते हैं, श्वसुराल जाना होता है उस समय भी घर राजाके समान बनकर जानेका मन चाहता है और यदि किसी राजा महाराजासे मिलनेके लिये जाना होता है उस समयकी तो बात ही मत पूछो ! उस समयका आनन्द तो कुछ और ही होता है, किन्तु आश्चर्यका विषय यह है कि

सदा आनन्दस्वरूप सर्वशक्तिमान् अनंत ब्रह्माण्डके नाथ
न् ईश्वरसे मिलनेके लिये जाना होता है तब विशेषतः
। सूरत बनाकर उनके पास जाते हैं। वहाँ दुखोंको
गेनाया करते हैं, और दरिद्रता ही बताया करते हैं और
हार माननेके बदले मन बिगाड़ बिगाड़कर क्षणिक स्वार्थकी
वस्तुएँ माँगा करते हैं किन्तु याद रखो कि ऐसा करना
र ही बुरा है, ऐसा करना अधूरा धर्म है, ऐसा करना एक
ारसे ईश्वरका अपमान है और ऐसा करना हमारी
ापकी है, क्योंकि ईश्वरने हमारे ऊपर जो अनन्त उपकार किये
उनके बदलेमें उसके जीवोंकी सेवा न करके और उसने
हमें अपार सामर्थ्य दिया है उसका उपकार न मानकर
जो उसके पास दुखसे रोया करते हैं, यह हमारी नाला-
ी बतानेके बराबर है, इतना ही नहीं, यह बहुत बड़ा अधर्म
है। बड़े ही दुखकी बात है कि बहुतसे भक्त भी ऐसा ही
या करते हैं क्योंकि वे जानते नहीं कि हरिकी सेवामें रोनी
त लेकर नहीं जाना चाहिए। एक महात्मा जी नीचे लिखे
ुसार कह गये हैं:—

जब मैं बालक था और प्रथम पाठशालामें बैठा था तब
े पढ़ने जाना अच्छा नहीं लगता था। किन्तु मेरी माँ मुझे
बर्दस्ती पाठशाला भेजती, इससे मैं घरसे रोता हुआ ही
कलता था, पर जब मैं पाठशालाके पास पहुँच जाता था
ब चुप हो जाता था, आँखें धो डालता, नाक साफ करता,
ाायें ठीक कर लेता, मुँह पोछ डालता, और पाठशालामें
स प्रकार जाता मानों मैं रोया ही नहीं है, क्योंकि गुरु जीके
ास रोते हुए नहीं जाना चाहिये। यदि गुरु जी जान जायँ,
ि लड़का रोता हुआ आया है तो क्रुद्ध हों और रोनेके लिये

दो एक तमाचा भी लगावें और लड़के हँसी उड़ावें वह अलग
इससे यद्यपि मैं छोटा था और मुझे पढ़ने जाना अच्छा न
लगता था तोभी गुरु जीके पास रोता हुआ मैं कभी न
जाता था। अनन्तर दूसरा दृष्टान्त मैंने यह देखा कि तीन व
वयकी मेरी एक छोटी बहन थी, वह जब रोती तो मैं उस
यह कहता कि देख बहन, बाबूजी आये, अब चुप होजा। ब
जीके सामने रोना नहीं चाहिये। यदि तुझे रोते हुये देखें
तो बाबू जी समझेंगे कि यह लड़की तो मूर्ख है और तु
अपनी लड़की नहीं कहेंगे। बुद्धिमान लड़की क्या क
रोती हैं? बदमाश लड़के रोया करते हैं, अब जरा तू हँस
और बाबूजीसे पूछ कि क्या लाये हैं। इस प्रकार कहने
वह बालिका शर्मा जाती और रोना बन्द करके हँसती हुई त
तुतला कर बोलती हुई बाबूजीके सामने जाती। इसके पश्चा
तीसरा दृष्टान्त मैंने यह देखा कि जिस समय मेरे बाबा मरने ल
तब सब लोग आ आ कर उनसे पूछने लगे कि "बाबा कैस
तबीयत है?" उस समय वे श्वास भी अच्छो तरह नहीं
सकते थे तो भी कठोरतासे दृढ़ता पूर्वक वे कहते कि "अ
अच्छा है, सोच मत करो।" मैंने कहा—मुझे ऐसा लगता
कि आपको भीतरसे दुख हो रहा है तब आप अच्छा है क
कह रहे हैं? इसपर उन्होंने कहा कि मेरा दुख तुम लोग ब
थोड़े ही न सकते हो? जो उपाय किया जा सकता है जो
रहा है और जो होना होगा वह होहीगा तब मैं तुम्हें व्यर्थ त
लीफ क्यों दूँ? रोगके साथ ऊफ और हाय हाय है ही,
जो कोई अच्छे विचारसे भेंट करनेके लिये आये उससे
हँसकर बात करने दो। दुश्मनपर क्रोध किया जाता है,
मित्रोंपर नहीं? इस प्रकार वे कह रहे थे कि उनके

पुराने मित्र तबीयतका हाल पूछनेके लिये आये। उन्हें आते हुए देखकर, शरीरमें बल न होनेपर भी परिश्रम करके वे धीरे धीरे खाटपर बैठ गये और बहुत ही आनन्द पूर्वक उनसे मिले। इस समय वे अपना सब दुख भूल गये और उनके चेहरेकी रंगत ही बदल गयी। इसके थोड़े ही घण्टे बाद उनका स्वर्ग वास हो गया किन्तु अन्त समय तक उन्होंने किसीको दुखी नहीं किया और न अपना आनन्द मनाने वाला स्वभाव ही छोड़ा।

भाइयो! यह सब देखकर मुझे मालूम पड़ता है कि संसारमें जहाँ देखो लोग अपने को सुखी दिखानेका ही प्रयत्न करते हैं, यहाँ तक कि कुछ लोगतो तमाचा मारकर अपना मुँह लाल रखते हैं। इतना ही नहीं, छोटे छोटे बच्चे भी पिताके सामने रोते हुए शर्माते हैं, गुरुजीके सामने रोते सकुचाते हैं और आसन्नमृत्यु रोगी भी "मुझे कोई रोग नहीं है" यह दिखानेका प्रयत्न करता है, किन्तु अफसोस कि सर्व शक्तिमान, अनंत ब्रह्माण्डके नाथ, अखंड आनन्दस्वरूप, परम कल्याण कारी, मोक्षदाताके पास जानेके समय हम अपनी सूरत रोनी बना लेते हैं और वहाँ रोना ही रोते हैं, यह कौनसा धर्म है? यह हरिजनोंका कौनसा लक्षण है? कल्याणका यह कौनसा मार्ग है? अरे! ज़रा विचार तो करो, कि रोनी सूरत बनाकर प्रभुके पास जाना प्रभुको प्रसन्न करनेका उपाय है या प्रभुसे विमुख होनेका। याद रखो कि दुखका रास्ता नरकको जाता है और मुँह तो दुःमनके सामने बिगाड़ा जाता है, कुछ मित्रोंके सामने नहीं। अन्नदाता, प्राणदाता, मोक्षदाता, जगदकर्ता देवोंके देव, कल्याणकारी महान् ईश्वरके सामने कुछ मुह नहीं बिगाड़ा जाता। इससे भाइयो! ईश्वरीय आनन्द प्राप्त करनेके लिए सदा आनन्द

रहना सीखो और ऐसा उपाय करो जिससे सदा मैं रह सकें।

५

एक महात्मा कहते कि जीते हुए मृतके सदृश क्यों रहते हो!

मृत होकर भी जीवित रहो

एक भोले भाले भक्तने किसी ज्ञानीसे पूछा—महाराज! बहुत दिन हुआ हमारे गांवमें एक महात्मा हो गये हैं। बहुत लोग कहते हैं कि वे मरकर जीवित हुए थे, और इसके पश्चात् वे सबसे कहते कि भाइयो! जीते हुए क्यों मरते हो! किसलिए आत्मघाती होते हो? सच्चा अनुभव प्राप्त करना हो तो मरकर फिर जीवित हो। भाइयो! मरकर जीवित हो। इस प्रकार वे सबसे कहते। हे महाराज! यह बात क्या सत्य है! क्या जीवित रहकर भी मरा जा सकता है? और क्या मरकर पीछे जीवित हो सकते हैं? यह कैसे हो सकता है! मैं तो नहीं समझता कि ऐसा होता होगा, कृपा करके इसका भेद मुझे समझाइये।

यह सुनकर भक्तने कहा—हाँ भाई! उस महात्माकी बात सत्य है और यही हरिजनोंका लक्षण है, और जब ऐसा हो तभी समझना चाहिये कि जीवन सार्थक हुआ क्योंकि मरकर जीवित होनेपर ही अंतःकरण पवित्र होता है और अंतःकरणके पवित्र होनेपर ही ईश्वरका साक्षात्कार हो सकता है! भाई! जीवित रहते हुए भी मृतका अर्थ यह है कि जिस प्रकार मुर्दा कुछ कर नहीं सकता, उसी प्रकार उत्तम

मनुष्यावतार पाकर और अनुकूल साधन मिलनेपर भी यदि अपना कर्तव्य पालन न किया जाय तो वह जीते हुए भी मरनेके समान हैं। मुर्दा जिस प्रकार पराधीन रहता है उसी प्रकार जो कोई निष्कारण पुरुषार्थ नहीं करता और दूसरेपर बोझके समान होकर पड़ा रहता है, वह जीवित रहते हुए मरेके समान है। मुर्दा जिस प्रकार शीघ्र खराब हो जाता है और उसमेंसे दुर्गन्धि निकलने लगती है, उसी प्रकार इस जगतमें आकर जो अपने विकारोंको भाई बन्धुओंमें फैलाते हैं वे जीते हुए भी मरेके समान है, मुर्दा जिस प्रकार किसीका उपकार नहीं कर सकता, उसी प्रकार ईश्वर कृपासे अनुकूल साधन होते हुए भी जो प्रभुके लिए दूसरेका उपकार नहीं करते वे जीते हुए भी मुर्देके समान हैं, और मुर्दाको जिस प्रकार ज्ञान नहीं होता उसी प्रकार सर्वशक्तिमान परम कृपालु नाथके नाथ ईश्वरका ज्ञान प्राप्त न करके जो व्यर्थकी हाय हायमें अपना अमूल्य जीवन नष्ट करते हैं वे जीते हुए भी मुर्दाके समान हैं। इससे महात्मा लोग कहते हैं कि जीते हुए भी मुर्दा मत बनो, और शास्त्र कहता है कि आत्मघाती मत हो; किन्तु योगवासिष्ठमें वसिष्ठ महाराज भगवान रामचन्द्रजीसे जैसा कहते हैं और श्रीमद्भगवद्गीतामें श्रीकृष्ण भगवान भाग्यशाली अर्जुनसे जैसा कहते हैं वैसे ही मरकर जीवित हो अर्थात् जैसे प्रभु रखे वैसे रहो। जिस स्थितिमें तुम हो उस स्थितिके धर्मका पालन करो। यदि कोई काम तुम्हें अच्छा न लगता हो तो भी उसे अपना कर्त्तव्य समझकर प्रभुके लिए करो और छोटे बड़े काम, यश अपयश लाभ हानि आदिकी ओर मत ध्यान दो, बल्कि अपना कर्त्तव्य और प्रभुको देखकर काम करते जाओ

इस प्रकार अपना स्वार्थ-त्याग कर जो कर्त्तव्य समझ
और प्रभुके लिए ही कार्य करेगा, वह मरकर जीवित हु
कहा जायगा। जिस प्रकार मुर्दाको काम क्रोधादि विक
नहीं होते और मानापमानका ध्यान नहीं होता उसी प्रक
आसक्ति रहित होकर, अहंभाव छोड़कर, हमारा तुम्हारा
फलकी इच्छा त्यागकर जीवनका कर्त्तव्य पालन करने
लिए और प्रभुको प्रसन्न करनेके लिए ही जो कार्य कर
है वह मरजीवा (मरकर पुनः जीवित हुआ) कहा जाता है
मुर्दाको काँडीके साथ निर्दयतासे कसकर बांधा जाय
भी उसे दुख नहीं होता और यदि कोई उसे इत्र लगाव
बढ़िया कपड़ा पहनावे और फूल चढ़ावे तो भी उसे क
सुख नहीं मिलता, इसी प्रकार सुख दुख जो एक सम
समझता है वही मरजीवा कहा जाता है। मुर्दाको किसी
प्रशंसा करने या गाली देनेपर जैसे हर्षविषाद नहीं होता वै
ही संसारकी तुच्छ वस्तुओंमें जो रागद्वेष नहीं रखत
उसे ही मरजीवा समझो। मुर्दाके पास उसके सगे-संबन्धी
रोयें कलकलायें या छाती पीटें तो भी वह जैसे अपना पराज
नहीं मानता और न उसके मानमें बाजा बजने और बन्दू
छूटनेसे वह अपनी विजयपर फूलता है, वैसे ही संसारके विवि
बाजीमें अपनी हारजीतके समय भगवद् इच्छाके अर्प
होकर जो समता रखता है उस हरिजनको ज्ञानीगण म
जीवा कहते हैं। मुर्दा जिस प्रकार स्वभावसे ही पशुपक्षी
पंचमहाभूतका भोग हो जाता है, उसी प्रकार हरिजनों
जीवन स्वभावसे ही परमार्थके लिए होता है, इससे शा
में उसे मरजीवा कहा गया है। मुर्दा जिस;प्रकार अपने लि
कोई भी कार्य नहीं करता उसी प्रकार जो भक्त अभिम

हकर अपने सब कर्मोको प्रभुको अर्पण कर देता है उसे
लोग मरजीवा कहते हैं और जैसे मुर्दासे जीव अलग
कर ईश्वरके पास जाता है वैसे ही इस संसारके जंजाल
रहकर भी जिसका जीव मायासे विलग हो ईश्वर मय
कर रहता है उसे महात्मा गण मरजीवा कहते हैं। यदि
सार-सागरको पार करना हो, चौरासीके फेरोंसे
टकारा पाना हो, और अखंड आनन्दरूप अनंत-ब्रह्माण्डके
यकी सेवामें रहकर अनंत काल तक मोक्षका सुख
ोगना हो तो जीवित रहते मुर्दाके समान न बनो, बल्कि
रकर जीवित हो अर्थात् मरजीवा होकर रहो। जो ऐसा
रता है वही महात्मा है, उसीका जीवन सार्थक है, वही
ीवनका कल्याण करनेवाला है और वही ईश्वरका कृपापात्र
। इससे भाइयो! मरजीवा बनो, मरजीवा बनो।

६

भक्तोंके सदा आनन्दमें रहनेका कारण

मैंने देखा है कि भक्तोंके चेहरेपर एक प्रकारका आनंद
विराजमान रहता है, उनके मनमें विशेष प्रकारकी उत्सुकता
रहती है, उनके हृदयमें शांति रहती है, ईश्वरीय आकर्षणसे
उनका जीव भीतरसे उछला करता है और संसारसे बहुत
ी स्वतंत्रता पूर्वक, क्षमाशीलता से और उदारता
पूर्वक व्यवहार करते हैं; इतनाहीं नहीं, जहाँ हमें दुःखका
पहाड़ दिखायी पड़ता है वहाँ वे धर्मके बल सदा आनंदमें

रह सकते हैं क्योंकि—भक्तिमार्गका यह मुख्य सिद्धान्त है कि हरिजनोंको भगवद् इच्छानुसार रहना चाहिये अर्थात् जिस प्रकार प्रभु रखे आनन्द पूर्वक रहना चाहिये; अपनी स्थिति संतोष रखना चाहिये और इस संसारको ही स्वर्ग समझना चाहिये; क्योंकि सदा आनन्दमें रहना और इस संसारको ही स्वर्ग समझना, भगवद्इच्छाके अधीन होनेका फल है, यह भक्तोंका धर्म है और शास्त्रकथित भक्तोंका लक्षण है, इससे भक्तोंको सदा आनन्दमें रहना चाहिये।

भक्तोंका यह धर्म, शास्त्रकी ऐसी आज्ञा तथा महात्माओंका ऐसा उपदेश होनेसे भगवद्इच्छाके अधीनस्थ जागृत जीव कभी भी दुखी नहीं रह सकता। वह कभी भी सर्वशक्तिमान प्रभुसे शिकायत नहीं करेगा और अपनी स्थितिमें, चाहे वह अच्छी हो या बुरी, वह संतुष्ट रहेगा। प्यारासे भी प्यारा ब्रह्माण्डके नाथको सामने देखकर और उसके आनन्दमें मस्त होकर उसे तो सदा आनन्दमें ही रहना चाहिये, क्योंकि जो प्रभुमय जीव होता है वह तो अपने प्रभुमें ही सर्वस्व देखता है। उससे बाहर देखनेकी उसे फुरसत या आवश्यकता ही नहीं होती। वह तो प्रभुके सौंदर्यमें ही तल्लीन रहता है, अपने प्रभुके बड़प्पनमेंही मग्न रहता है, अपने प्रभुके अविनाशीत्वसे ही आश्चर्यान्वित बना रहता है, अपने प्रभुके सर्वव्यापकत्वमें ही सब कुछ देखता है, अपने प्रभुकी कृपाके भण्डारमें ही अपना कल्याण समझता है, अपने प्रभुकी इच्छाके अधीन होनेमें ही अपने जीवनको सार्थक हुआ जानता है और सच्चिदानन्द परमात्मामें ही अपना आनन्द देखता है; इससे प्रभुके अतिरिक्त और कुछ उसे दिखाईही नहीं पड़ता। इतनाही नहीं, जो

संसारका दिन होता है वहाँ उसकी रात्रि होती है अर्थात् व्यावहारिक लोग जिन विषयोंमें या जिन कामोंमें लगे रहते हैं उन विषयों या कर्मोंसे उसे कुछ मतलबही नहीं रहता और जब संसारकी रात्रि होती है तब उसका दिन होता है अर्थात् आत्मज्ञानके गंभीर तत्वोंमें जहाँ व्यावहारिक लोगोंकी दृष्टि नहीं पड़ती वहाँ उसका ध्यान जमा रहता है। ऐसी उच्चधारणावाले भक्तगण यदि आनन्दमें रहें तो नवीनताही क्या है ? यदि तुम्हें भी सदा आनन्दमें रहना हो तो धर्मका पक्ष रखकर और धर्मके नियमोंका पालन करके प्रभुमय होना सीखो।

७

हम अपने देहसे बहुत कम पाप करते हैं, किन्तु मनमें पापके विचार भरे रहते हैं इससे सच्चा आनन्द नहीं पा सकते।

एक भले मानसने किसी संतसे पूछा कि महाराज! बहुत दिनोंसे मैंने इस देहसे किसी प्रकारका भी पाप नहीं किया है, किन्तु तब भी मेरे मनको आनन्द क्यों नहीं मिलता ? भक्तोंके चेहरेपर जो शांति होती है वह शांति मुझमें क्यों नहीं है ? वैष्णवोंके हृदयमें जैसा प्रेम होता है वैसा प्रेम मेरे हृदयमें क्यों नहीं है ? निष्पाप मनुष्योंका मन निःशंक हो जाता है वैसा मेरा मन क्यों नहीं होता ? और भक्तगण अपना अहमत्व भूलकर परमार्थमें ही लग जाते हैं, वैसा मुझसे क्यों नहीं होता ? यह सुनकर संतने कहा—भाई ! तुम्हारा पाप अभी गया नहीं है इससे ऐसा होता है। तुमने शरीरसे होनेवाले पापोंको

छोड़ा है किन्तु अभी मनके पापोंको कहाँ दूर किया है! अ
मानसिक स्थितिके पापोंको कहाँ छोड़ा है? तुम अब कि
जीवकी हिंसा न करते होगे, चोरी या व्यभिचार न करते हो
झूठ न बोलते होगे, जूआ न खेलते होगे, शराब न पीते हो
किसीके साथ मारपीट न करते होगे तथा अन्य प्रकारके छ
प्रपंच न करते होगे, यह सत्य है, किन्तु इसमें कौनसी नवीन
है? ऐसे पाप तो अधम लोगही करते हैं। तुम्हारे समान म
कुछ ऐसे बड़े पाप नहीं करते। तुम्हारे समान उत्तम संस्का
तथा साधनवाले मनुष्य ऐसे पाप न करें तो इसमें उन
बड़प्पन नहीं कहा जा सकता। तुम्हें तो इससे भी अधि
करके दिखाना चाहिये क्योंकि तुम धर्मपथमें आ गये हो औ
अपना तथा जगतका कल्याण चाहते हो; तुम अच्छा बु
समझ सकते हो और प्रभुमय होना चहते हो; इससे तुम्हार
कर्त्तव्य बड़ा है, उत्तरदायित्व बहुत है क्योंकि तुम देवोंके दे
सर्वशक्तिमान महान् ईश्वरका प्रेम-पात्र होनेकी, अनतकाल
मोक्षका सुख प्राप्त करनेकी इच्छा रखते हो, इससे प्रभुको तु
किसी विशेष प्रकारका भोग चढ़ाना चाहिये।

यह भोग कैसा है? इस भोगका अर्थ यह नहीं है
बहुतसा धन लुटा दो, इस भोगका अर्थ यह नहीं है
घरकी चीज़ें बेचकर तीर्थ करो, इस भोगका अर्थ यह न
है कि कामकाज छोड़ दो, न यही अर्थ है कि स्त्री-बच्चोंको छ
दो और इसका न यही अर्थ है कि गुदड़ी पहन लो, बल्कि
भोगका अर्थ केवल इतना ही है कि जिस प्रकार शरीर
पाप करनेसे बचाते हो उसी प्रकार मनको भी बचाओ
अपने आचरणोंको सुधारो और ऐसा उद्योग करो कि तुम

और सर्वशक्तिमान प्रभुमें लगा रहे। यह सब अन्तःकरणकी पवित्रतासे होता है और मनमें उठनेवाले बुरे विचारोंमें बचनेसे ही अन्तःकरणकी पवित्रता होती है इससे देह द्वारा होनेवाले बाहरी पापोंको छोड़नेके पश्चात् तुम्हें जो कुछ करना है वह यह है कि बार बार मनमें आनेवाले बुरे विचारोंसे बचनेका प्रयत्न करो। तुम अब शरीरसे पाप नहीं करते यह बात सत्य है, किन्तु मनसे कितने पाप करते हो, इसकी कुछ खबर है? तुम नियमानुसार बड़ी चोरी नहीं करते, किन्तु इस प्रकार छोटी छोटी चोरियां बहुत करते हो जिसकी तुम्हें खबर ही नहीं पड़ती। इसे तो जरा विचारो! तुमने अनीति तो शायद एक आध किया होगा अथवा न किया होगा, किन्तु अनीतिके विचारोंके साथ तुम कितना खेला करते हो! इसको तो जरा सोचो! तुम मारपीट नहीं करते किन्तु तुम्हारे मनमें क्रोधके विचार कितने उदय हुआ करते हैं! इसे तो जरा देखो! तुम स्पष्ट किसीकी बुराई नहीं करते किन्तु दूसरोंसे बचाकर अपने मनमें कितने विचार भरे रहते हो। और शास्त्रमें निषिद्ध कही हुई चीजें चाहे तुम न खाते हो किन्तु उन्हें खानेके लिये तुम्हारा मन कितना लालायित रहता है! और इसके लिये सब कामोंको छोड़कर मन ही मनमें कितनी दौड़ धूप मचाते हो! इस पर तो विचार करो! यदि इसपर विचार करोगे तो पता लगेगा कि ऐसे मनको शान्ति न मिले तो कोई अचरजकी बात नहीं है। यदि तुम इस प्रकार अपने हृदयको खोजना सीखोगे तभी समझमें आयेगा कि मनुष्य पापका कार्य बहुत कम करते हैं पर पापका विचार बहुत किया करते हैं, इसीसे वे नरकमें पड़े रहते हैं। इससे भाइयो! यदि सच्ची शान्ति

पाना हो, आत्मिक आनन्द लेना हो, पवित्र जीवनकी खूबी देखना हो, सत्य ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करना हो और हरिकी सेवामें रहकर मोक्षका सुख लेना हो तो जिस प्रकार बाहरी पापोंका त्याग करते हो उसी प्रकार अंतरके पापके विचारोंको कम करनेका प्रयत्न करो। ऐसा उद्योग करो जिससे पापके विचार कम हों।

८

हमारी परीक्षा लेनेके लिये ही प्रभुने इस दुनियामें ललचाने वाली वस्तुएँ उत्पन्न की हैं

यदि इस संसारमें मनुष्योंकी कसौटी ही न हो तो ठस और पोला सब एक समान हो जाय और ऐसा होनेपर अच्छे खराबका मूल्यही क्या रहेगा? ऐसा न होने देनेके लिये परम कृपालु प्रभुने अपने भक्तोंको बड़प्पन देकर आगे बढ़ानेके लिये इस संसारमें उनकी अनेकों प्रकारकी परीक्षा रखा है क्योंकि हम देखते हैं कि यदि लोग स्लेटपर लिखनेके टुकड़ेकी पेन्सिल लेने जाते हैं तो उसे चुनचुनकर लेते हैं और अधेलेकी हड़िया भी ठोंक बजाकर लेते हैं, गाय घोड़े आदि हम खरीदते हैं तो उसे अच्छी तरह देखभाल लेते हैं और नये लड़कोंकी और नौकरोंकी भी पहले परीक्षा करके ही उनपर यथायोग्य विश्वास किया जाता है। जब इतनी छोटी छोटी वस्तुओंके लिए इतनी जांच पड़ताल की जाती है तब हरिकी सेवामें अनंतकाल तक, मोक्षसुख भोगनेके लि

ाते समय क्या परीक्षा न ली जायगी ? अवश्य ली जायगी । ह परीक्षा चाहे जितनी कठिन हो, उसे मनुष्योंको भुगतना ी पड़ेगा, अखंड आनन्द प्राप्त करनेके लिये कितनाही दुख यों न सहन करना पडे उसकेलिये यह कोई बडी बात नहीं । किन्तु परमात्मा अतिशय दयालु है, उसने अपने भक्तोंके लिये कोई भी कठिन परीक्षा नहीं रखा, केवल इतनाही जानना चाहता है कि लड़का चोर है या नहीं ? उसकी परीक्षा लेनेके लिये मां बाप बराबर ऐसे स्थानोंपर जहां उसकी नज़र पड़सके पैसा अथवा और कोई साधारण वस्तु रख देते हैं । यदि उस पैसेको लड़का न ले या लेकर मां बापको दे दे तो वह सच्चा समझा जाता है, और उस पैसेको मां बापको लौटानेपर, वे उसका विश्वास करके हज़ारों व लाखों रुपयेका माल उसे सौंप देते हैं और अंतमें अपना सर्वस्व उसे सौंप देते हैं । उसी प्रकार हम सर्वशक्तिमान अनंत ब्रह्माण्डके नाथ अखंड-सच्चिदानन्द परम कृपालु परमात्माके लड़के हैं । उन्होंने हमारी परीक्षा लेनेके लिये जगतमें मोहक वस्तुएं पैदा की हैं, यदि हम इन मोहक वस्तुओंसे लुब्ध हो जायँगे तो अनंतकालके मोक्ष धामका अलौकिक सुख त्याग देना होगा । क्योंकि जिस प्रकार मां बाप चोरी करनेवाले लड़कोंका और सेठ चोरी करने वाले नौकरोंका विश्वास नहीं करते उसी प्रकार मायामें लिपटजाने वाले लोगोंका प्रभु भी विश्वास नहीं करता । भाइयो ! सावधान हो जाओ कि ऐसी चोरी न होने पाये, क्योंकि बहुत देरतक हैरान होनेपरही ऐसी चोरीसे थोड़ी देरके लिये तुम्हारे विकारोंको उत्तेजन मिलेगा किन्तु जिस प्रकार अग्निमें घी डालनेसे वह बुझती नहीं बल्कि और भी बढ़ती जाती है, उसी प्रकार विकारोंसे तृप्ति नहीं हो

सकती बल्कि तृष्णाकी आग बढ़ती जाती है और वह भी क
तक ? अन्त नरक तक। अब विचार करो कि प्रभुके घरकी चो
करनेसे क्या मिलता है ? यदि मनको छूट नहीं रखोगे औ
मायासे लुब्ध हो आओगे तो आँख, आँत, पेट, मस्तिष्क औ
हृदय भी बिगाड़ना पड़ेगा। इससे पहले तृष्णाकी आग वि
झंझावात, तब मानसिक दुख, तब शरीरके रोग और अंत
रौरव नरकके दुःख भोगना पड़ेगा, और तुम्हारी परीक्षा
लिये उपस्थितकी हुई वस्तुका यदि खराब उपयोग नहीं करो
तो स्वर्गका अमृत, देवोंके राजा इन्द्रका इच्छित फल देने वाले
कल्पवृक्ष और सदाकालके लिये मोक्षधामका सुख, स
तुम्हारेही लिये है। इससे थोड़ी देरतक रहनेवाली माया
चीज़ोंसे लुब्ध न होकर सर्व शक्तिमान महान् ईश्वर
परीक्षामें उत्तीर्ण होनेका प्रयत्न करो।

६

प्रभु कहते हैं कि यदि मेरी सेवामें आना चाहते हो तो अपने
दुश्मनोंका भी भला करो।

बहुतसे मनुष्य ऐसा समझते हैं कि अपने कुटुम्बसंबं
कर्त्तव्यका पालन कर देनेसेही हमारा कार्य समाप्त हो जाता
इससे अधिक हमसे होही क्या सकता है ? इतनाही हो जा
तो बहुत है। इनसे आगे बढ़े हुए लोग अपने मित्रों, साथि
तथा गरीबोंकी रक्षा करनाही अच्छा समझते हैं। इससे आ
बढ़े हुए लोग अपनी जाति तथा अपने गाँवकी भलाई कर

चाहते हैं। इनसे आगे बढ़े हुए लोग अपना देश, अपना राज्य तथा अपने धर्ममें सुधार करना चाहते हैं और इनसे भी जो आगे बढ़े हुए रहते हैं वे संसारका और प्राणिमात्रका भला करना चाहते हैं, किन्तु विचार भूमिमें तथा शब्दरचनामें दूर तक पहुंचे हुए लोग भी नहीं जानते कि अपने दुश्मनोंके साथ किस प्रकार बर्त्तना चाहिये। मैंने देखा है कि संसारको क्षार मानकर योगी हो जाने वाले लोग भी अपने दुश्मनोंको क्षमा प्रदान नहीं कर सकते। "आत्मवत् सर्वभूतेषु" सिद्धांतको माननेवाले लोगभी अपने अपमान करने वालेको क्षमा नहीं कर सकते। बड़े बड़े टीका लगाने वाले तथा लम्बी लम्बी कंठी माला धारण करनेवाले भक्त भी अपने बुरा चेतनेवाले मनुष्यको क्षमा नहीं कर सकते और त्यागी वैरागी भी अपने विरोधीकी बातोंको सहन नहीं कर सकते। ऐसे प्रसंगोंपर वे ऐसे शब्द बोल बैठते हैं जो उन्हें शोभा नहीं देता, क्योंकि मनुष्य बहुत सी चीज़ें छोड़ सकता है किन्तु मानकी इच्छा और अभिमानको अन्ततक नहीं छोड़ सकता। किसी न किसी रूपमें वह रही जाता है, इससे और बहुत बहुतसी वस्तुओंका त्याग करनेपर भी अधिकांश मनुष्य अपने शत्रुओंको क्षमा नहीं कर सकते, क्योंकि इसमें अपने मानको नीचे नवाना पड़ता है और अपने अहमत्वको दबा देना पड़ता है। जबतक पूर्ण वैराग्य तथा पूर्ण प्रेम न हो तबतक ऐसा होना बहुत कठिन है, और जब तक ऐसा न हो, तबतक समझना चाहिये कि हमारा सब धर्म अधूरा है। शत्रुको क्षमा प्रदान करना सबसे अंतिम तथा सर्वोत्तम धर्म है। इससे जबतक इस धर्मका पालन न किया जा सके तबतक समझना चाहिये कि अभी मानकी इच्छा गयी नहीं है, अभी अभिमान गया नहीं है और हमारेमें अभी सच्चा

साडी तो ले आये हो किन्तु रोज़ पहरनेकी चोलीका पंद कहां है? मीनाकारी कामवाला नया घाघरा तो आया किन्तु पुरानेमें एक घुंघरू टूट गया है उसे नहीं टकाते बनता! और प्रतिदिन अंगूर, अनार आदि आता है, क्या कभी मेरे गांवमें पैदा होनेवाले लाल लाल बेर या बड़हड़ भी मँगाया है? हां मैं तो कहनाही भूल गयी कि पान बहुत खा गयी इससे गाल सूज आया है, उसके लिए तो दवा मँगाओ। यह सब कुछ तो करते ही नहीं हो और कहते हो कि आनन्दसे रहो, आनन्दसे रहो; किन्तु आनन्दसे रहूँ कैसे? न कहीं जा सकती हूँ न आ सकती हूँ, न मनमाना खा पी सकती हूँ, यहाँ तो सब बातें नियमसे बँधी हुई हैं, इनका कैसे पालन करूँ! आपसे विवाह करके मैं तो भंझटमें फँस गयी! यह सब सुनकर राजा बहुत दुखी होते और कहते कि इस मूर्ख अभागिनीको तो देखो? इसके भाग्यमें जूठा टुकड़ाही लिखा है। इसे मैं ऊपर बहुत चढाना चाहता हूँ किन्तु यह अपनी जातिपर गये बिना रहती नहीं। इसकी सेवा टहलके लिए मैंने एक शाहज़ादी रख दिया, इसपर इसने कहाकि मैं इसे नहीं चाहती। इसकी बातें न तो मैं कुछ समझ सकती हूँ और न इसे मैं चाहती हूँ। मेरे पास तो मेरी जातिवालीको रखो। इसके लिए बहुमूल्य तथा नया कपड़ा लाता हूँ और उससे पुराना कपड़ा गरीबोंको दे देनेके लिए मैंने कह दिया है। तब उसने कहा कि हाय! ऐसा अच्छा कपड़ाभी क्या गरीबोंको दिया जाता है? इसे तो मैं रखूँगी। हे ईश्वर! इसे तो दरिद्रता दुख और मेरी भूल खोजनाही अच्छा लगता है। मेरी इच्छाके विरुद्ध अपनी इच्छानुसार चलना इसे अच्छा लगता है, यह मेरा उपकार

हीं, मान सकती। मैं क्या करूँ? इस प्रकार राजा दुखी ते, इससे दिन दिन उनका प्रेम कम होता गया।

भाइयो! आप भी इसी भिखारिनके समान आचरण करते। राजाकी कृपासे जिस प्रकार रानी बनी थी उसी प्रकार चौरासी लाख प्राणियोंमें उत्तम जो मनुष्यावतार है वह आपको मिला है। उस रानीको जैसे सुन्दर महल मिला था वैसेही आपको संसार मिला है। उस रानीको जिस प्रकार हीरेका हार और सेवाके लिए बहुत खिदमतगार मिले थे उसी प्रकार आपको अनत सामर्थ्य तथा सेवा करनेके लिए परमकृपालु ईश्वरने अनेकों प्रकारकी शक्तियाँ दी हैं, किन्तु इन वस्तुओंके लिए राजाका उपकार माननेके बदले वह रानी बनी हुई भिखारिन निष्कारण अपने मनमें दुखी रहा करती थी और अपने पास बहुमूल्य वस्तुओंके रहते हुए भी छोटी वस्तुएँ माँगती थी, उसी प्रकार सर्वशक्तिमान परमेश्वरने अद्भुत बलवाली इन्द्रियाँ दी हैं, महाशक्तिवाला मन दिया है, ब्रह्माण्ड रच सकनेवाली बुद्धि दी है और ईश्वर तक पहुँचकर ईश्वर-स्वरूप हो सकनेवाला आत्मिक बल दिया है, इसके लिए ईश्वरका उपकार माननेके बदले और इन दिव्य शक्तियोंका उपयोग करनेके बदले मुर्दाके सदृश मुँह बनाकर रोते-रोते ईश्वरसे हम कहते हैं कि मुझे धन कम क्यों दिया है? मेरे लडकेको लडका क्यों नहीं देता? मुझे मान क्यों नहीं मिलता? मेरा कहना लोग क्यों नहीं मानते? मेरी इच्छा अनुसार कार्य क्यों नहीं होता? मेरी लडकी माँदी क्यों है? और मुझे अजीर्ण हुआ है वह क्यों नहीं दूर होता? यह सब नहीं होता तो मैं आनन्दसे कैसे रहूँ? भाइयो!

अभागे जीवका स्वभाव तो देखो! जीवन दिया यह ब
अलग रह गयी, उत्तम मनुष्यावतार दिया यह बात भूल गय
आपके आँखोंके सामने सैकड़ों मनुष्य मर गये, किन्तु आप
अब तक जीवित रखा यह उपकार न माना; कृपा कर
लड़का दिया, उसे जीवित रखा, उसका विवाह आदि कि
इसकी कुछ बातही नहीं है और उसे लड़का नहीं हुआ
आपपर बड़ा दुख पड़ गया! दुनिया का मज़ा तो देखो
मनुष्योंके मनकी निर्बलता तो देखो! और आप अपने धर्म
कितने विमुख हैं, इसपर तो ज़रा विचार करो।

इस दुनियामें कितने मनुष्य रोगी अपंग और भिखा
हैं? कितने दोषी हैं, कितनेही दासताकीसी स्थितिमें है
कितनेही मूर्ख हैं, और कितनेही लोग पागल हैं। इसपर तो
थोड़ा विचार करो! कृपाकर इन सब आफतोंसे ईश्व
आपको बचाये हुए हैं। उसने इज्जत मान दिया है, आवश्य-
कतानुसार रोज़गार दिया है, शरीरको सुख दिया है, जीवनकी
आवश्यक वस्तुएँ दी हैं, और आप उसे भूल गये हैं, उसका
उपकार नहीं मानते, उसके पास रोनाही रोया करते हैं, और
उसकी आज्ञा विरुद्ध ही आचरण करते हैं। अरे! इस प्रकारके
दुखोंमें पड़े रहोगे तो आप सीमापर कब पहुँचोगे? भाइयो
तथा बहनो! याद रखो कि आपके दुखोंमें से निन्यानवे प्रति
शत इसी प्रकारकी अपनी मूर्खतासे उत्पन्न किये होते हैं,
और अफसोस कि अपने पवित्र धर्मको छोड़कर अखंड आनंद
स्वरूप महामंगलकारी सच्चिदानन्द-स्वरूप ईश्वरको बिसारकर
तथा अनंत सामर्थ्यवाली और अनंत शक्तिके संचयवाली
पवित्र आत्माके बलको भुलाकर कपोल-कल्पित तुच्छ रोना

में ही अपना अमूल्य जीवन नष्टकर देते हैं ! चौरासी लाखका फेरा स्वीकार कर लेते हैं और बार बार दुःखोंको वरण करके नरकमें जानेके लिए परवाना ले लेते हैं। ऐसा न होने पाये इसके लिये हे हरिजनों ! बार बार ईश्वरका उपकार मानकर सदा आनन्दमें रहना सीखो ! सदा आनन्दमें रहना सीखो !

११

जो बाजी लगाकर दौड़ता है और जीतता है उसीको पुरस्कार मिलता है, केवल मार्गमें खड़े रहनेवालेको कुछ नहीं मिलता, इसी प्रकार भक्तिमें भी जो बीचमें लटका रहेगा उसे नहीं बल्कि जो आगे बढ़ेगा उसे ही पुरस्कार मिलेगा

भाइयो ! पुरस्कार लेना तो सबको अच्छा लगता है। पुरस्कार किसको अच्छा नहीं लगता ! पुरस्कार मिलनेमें मान है, उसमें दूसरोंकी अपेक्षा अपना शौर्य दिखाना पड़ता है, उसमें जी लगाकर काम करके अपने बलसे आगे बढ़ना पड़ता है, उसमें जीवन सुधारनेकी कुञ्जी है और उसमें अपने भाई बहनोंको ऊँचे चढ़ानेका हुनर है। इससे पुरस्कार हमारी प्यारी वस्तु है; क्योंकि वह हमारे परिश्रम और प्रभुकी कृपाका फल है। पुरस्कारमें कुछ ऐसी खूबी है कि सबका मन ललचा जाता है कि हमें भी कुछ इनाम मिले, किन्तु इनाम कब मिलता है, इसकी भी कथा सुघर है ? जब बाजी जीतकर दूसरोंसे

आगे बढ़ जाते हो और दूसरोंकी अपेक्षा अधिक परिश्रम करते हो तभी पुरस्कार मिलता है, जब पुरस्कार देनेवालेको विश्वास दिला देते हो कि हम पुरस्कार पाने योग्य हैं तभी मिलता है; जब बाजी जीतकर और प्रभुको साथ रखकर निर्भय हो अंतरके बलसे सत्य मार्गसे कार्य कर सको तभी पुरस्कार मिल सकता है। बिना परिश्रम किये पुरस्कार नहीं मिल सकता। संसारके साधारण पुरस्कारके लिए जब इतना करना पड़ता है और उसका इतना मूल्य समझा जाता है तब भाइयो! विचार तो करो कि शांतिके समुद्र, ज्ञानके भण्डार, आनन्दस्वरूप अनन्त ब्रह्माण्डके नाथका पुरस्कार कितना बहुमूल्य होगा? और उसे लेनेके लिए हमें कितना अधिक परिश्रम करना चाहिये। पर्व आदिके दिन प्रार्थना करनेके लिए मन्दिरमें जाते हैं और उसके बाद पखवाड़ों तक उधर झाँकते तक नहीं, इससे कहीं सर्वशक्तिमान प्रभुका पुरस्कार मिल सकता है। कुछ श्लोक या पद रटकर पढाये हुये सुग्गोंके सदृश बिना उसका अर्थ समझे हुए पढ़नेसे भावके भूखे ईश्वरका पुरस्कार नहीं मिल सकता। एकादशी, अमावस्या, पूर्णमासीको मन्दिरमें जाकर थोड़ी देर तक हरि कथा सुन आनेसे एवं एक कानसे सुनकर दूसरे कानसे निकाल देनेसे अन्तर्यामी प्रभुका बड़ा पुरस्कार मिल नहीं सकता। स्वार्थवश अथवा कुछ कारणवश कुछ रुपया खर्च करके लोग लहर लेते हुए हवा खाने जाते हैं उसी प्रकार पैसेके ज़ोरसे दो चार स्थानोंकी यात्राकर आनेसे कहीं प्रभुका इनाम नहीं मिल सकता। आठवें पंद्रहवें दिन फुरसत मिले तब मनको ठिकाने करनेके लिए घड़ी दो घड़ी मत-मतांतरसे भरे हुए सत्संगमें जाकर हो आनेसे कहीं निरंजन, निराकार, सर्वव्यापक सर्वज्ञ

हान् ईश्वरका इनाम नहीं मिल सकता, और कुल ग्राम या शकी या बाहरी धर्मकी परंपरागत रीतिके अनुसार भक्तिके बाहरी आडंबरोंके करनेसे परमकृपालु पवित्र पिता सच्चिदानन्द परमात्माका अलौकिक इनाम कहीं भी मिल नहीं सकता, इससे भाइयो! यदि भक्तिकी बाजीमें आगे बढ़ना हो और सर्वशक्तिमान परमेश्वरका पुरस्कार लेना हो तो सच्चे भावसे तथा पूर्णबलपूर्वक प्रभुके मार्गपर धीरे-धीरे आगे बढ़ो, इससे इस संसारी पुरस्कारोंसे करोड़ों गुना बहुमूल्य पुरस्कार प्रभु स्वयंही तुम्हें देंगे।

१२

प्रभुके मार्गपर सदैव चलनेका और प्रभुके जीवनमें जीनेका अर्थ क्या है?

भाइयो! शास्त्र और महात्मा कहते हैं कि धर्मही प्रभुका मार्ग है और इस दुनियामें तथा स्वर्गमें जितने प्रकारके सद्गुण हैं तथा इन सद्गुणोंमेंसे उत्पन्न होने वाले जितने भी शुभ काम हैं वे सब प्रभुके पास जानेकी सीढ़ी हैं। जैसे सत्य, ब्रह्मचर्य, अहिंसा, दान, तप, पवित्रता, दया, ज्ञान भक्ति, वैराग्य, योग, निष्कामकर्म, इन्द्रिय-निग्रह, और परमार्थ आदि बहुत प्रकारके सद्गुण तथा उनमेंसे उत्पन्न होनेवाले ईश्वरीय स्नेहके उत्तम काम जैसे पाठशाला, धर्मशाला, देवालय, दवाखाना, कूप, तालाब, अनाथाश्रम, गौशाला, कलाकौशल सिखानेके स्कूल, व्यापार बढ़ानेके साधन, गरीबों तथा दुखियोंकी सहायता देनेके कार्य और जगतमें भाईचारा बढ़ानेके जितने भी प्रकारके

राम, पुत्र सदृश कैसे आज्ञापालक, पतिस्वरूप कैसे
स्नेहमय, राजा प्रजाके कैसे शुभेच्छुक, भाईके स्थानपर
भाइयोंसे कैसा प्रेम रखने वाले, योद्धारूपमें कैसे बहादुर,
शिष्य रूपमें गुरुमें कैसा पूज्यभाव रखने वाले, बाल समयमें
कैसे निर्दोष, खूबसूरत, और आदर्शवान, मित्रतामें कैसे
सहृदय, अपने नौकरोंका कैसा भला करने वाले, पिता होने
र पशुओंपर कैसा वात्सल्यभाव रखने वाले, एक पत्नीव्रतका
सा सच्चा पालन करनेवाले, वचनपर कैसे दृढ रहनेवाले,
ष्टोंको दण्ड देनेमें कैसे तत्पर, महात्माओंकी सेवा करनेमें कैसे
उत्साही एवं जीवनका प्रत्येक कर्त्तव्य कैसी उत्तमतासे पालन
रनेवाले थे। इसे समझकर तथा इसी प्रकार दूसरे अवतारी
रुषोंका उनमें चरित्र देखकर तथा उनका रहस्य समझकर
सी प्रकार उत्तम धर्मके मार्गमें पवित्र रीतिसे अपना जीवन
ताना ही प्रभुमय जीवन जीना है। भाइयो! याद रखो कि
रीतिसे प्रभुमय जीवन व्यतीत किये बिना, केवल बातों
से ही कुछ होना जाना नहीं है, इससे यदि मोक्ष पानेकी
च्छा हो तो प्रभुके मार्गमें चलनेका प्रयत्न करो।

वैद्यकशास्त्र आयुष्य बढ़ानेके लिए, पाकशास्त्र जिन्दगी बचाने लिए, खेतीबारीकी विद्या ज़िन्दगीको सहायता देनेके लिए व्यापारकी कला जीवनको सुखी करनेके लिए और जगतकी दूसरी सब विद्यायें मनुष्य जातिको सुखी करनेमें सहायता पहुँचानेवाली हैं। इतना ही नहीं, तन्दुरुस्ती विभागके लोग कहते हैं कि रास्ता, घर साफ़ रखो, गंदगी मत रखो, सर्दी गर्मीसे बचो, आलस्य मत करो, भोजनोपरांत परिश्रम मत करो, विषयोंके गुलाम मत बनो, पेट साफ़ रखो, माथा ठंडा रखो, हाथ पैर गरम रखो, कसरत करो, छोटे-छोटे जन्तुओंसे बचो, नियमपूर्वक अच्छे पदार्थ खाओ, पूरी नींदसे सोओ, कपड़ा, शरीर साफ़ रखो, अशुद्ध वायुसे बचो, ऋतु-ऋतुके फल खाओ, उद्योग करो तथा वैद्यकके नियमोंसे चलो। इस प्रकारकी शिक्षा देनेवाली हज़ारों पुस्तकें हैं। राज्यके बहुतसे कानून बने हुए हैं, बहुतसे प्रकारके हथियार तथा साधन हैं और लाखों विद्वान इसी प्रकारका ज्ञानका प्रचार करनेके लिए भी भिन्न-भिन्न प्रकारसे कार्य कर रहे हैं। भाइयो! यह सब किस लिए कर रहे हैं? इस जगतमें किस प्रकार जीवन निर्वाह करना चाहिए, यह केवल बतानेके लिए ही। बेशक ये सब बहुतही आवश्यक वस्तुएँ हैं क्योंकि जीवनसे ही सब कुछ है, जिन्दगी रहनेसे ही सब सुख भोगा जा सकता है, जिन्दगी रहनेसे ही परमार्थ और धर्म किया जा सकता है। जीवित रहनेपर ही ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है और तभी मोक्ष भी मिल सकता है। इससे जीवनको सुरक्षित रखनेके नियमोंका ज्ञान लेना बहुत ही आवश्यक है; किन्तु याद रखो कि चाहे हम कितने ही दीर्घायु [illegible] तो है ही। इसे काशी

को भूलना न चाहिये, इससे जिस प्रकार सुखपूर्वक जीवित रहनेकी विद्या सीखते हैं उसी प्रकार आनन्दसे मरनेकी भी विद्या हमें सीखना चाहिये, क्योंकि कभी न कभी मरना तो निश्चित है ही। तब मौत सुधारना क्या आवश्यक नहीं है? शास्त्रोंमें कहा है कि यदि मौत बिगड़ जाय तो चौरासी लाखके ...रोंमें पड़ना होता है, यदि मौत बिगड़ जाय तो किया कराया ...ब मिट्टीमें मिल जाता है और यदि मौत बिगड़ जाय तो ...रकमें जाना पड़ता है। पुनः शास्त्रमें यह भी कहा है कि ...त्यु समय जैसी मति होती है वैसीही गति मिलती है, इससे ...ौत सुधारना एक बहुत ही आवश्यक बात है. तौभी हम ...खते हैं कि बहुत ही कम मनुष्य अपनी मौत सुधारनेकी ...च्छा रखते हैं। अधिकांश रोते-रोते, बिछौना बिगाड़ते मरते हैं, हृदयमें हजारों आपदायें भरकर मरते हैं, संसारका ...र लेकर मरते हैं, विशेषसे पागल होकर बकझक करते हुए मरते हैं और ईश्वरका उपकार माननेके बदले उसके तरफ़ मुँह बिगाड़ते बिगाड़ते मरते हैं। जैसे किसी भारी अपराध करनेपर तथा पुलिसके वारंट लेकर पकड़नेके लिए आनेपर अपराधी डरकर भागता है वैसेही वे भी डरते डरते मरते हैं। यह क्या दुःखकी बात नहीं है? यह क्या हमारी अयोग्यता और धर्मका अपमान करना नहीं है? मृत्युके समय इसप्रकार तनसे तथा मनसे दुःखी होकर मरना क्या भक्तोंका लक्षण है? नहीं! इसप्रकार मरना तो नीचे जानेका रास्ता है, इससे महात्मा कहते हैं कि जैसे जीवित रहनेकी विद्या सीखते हो वैसेही मौत सुधारनेकी भी विद्या सीखो।

मृत्युके समय भक्तोंकी कैसी स्थिति होती है यह क्या आप जानते हैं? मानो वे इनाम लेनेके लिए जा रहे हों, इस

प्रकार उनका चेहरा प्रफुल्ल रहता है, उनका मन शांत होता है, बुद्धि निर्मल होती है, उनका अंतःकरण तृप्त रहता है और उनकी आत्मा परमात्माके साथ तार लगा रहता है। वे इस समय जगतकी सब उपाधियोंको भूल जाते हैं, सबसे क्षमा मांग लेते हैं और सबको क्षमा कर जाते हैं, सबको आशीर्वाद दे जाते हैं और सबके अंतरका संतोष लेते जाते हैं। जगतको अपने उत्तम चरित्रका उत्तराधिकारी बना जाते हैं और अपने माननेवालोंका दुख हर लेते हैं तथा वे मानो पुराना वस्त्र उतारकर नवीन वस्त्र धारण कर रहे हों, इस प्रकार ईश्वरका उपकार मानते हुए अपना देह बदलते हैं। जिस प्रकार किसीको लेनेके लिए एक महाराजाधिराजकी पालकी आनेपर वह उसमें विनयपूर्वक गंभीरतासे बैठकर आनन्दित अंतःकरणसे सबका उपकार मानते हुए महाराजकी सेवामें जाता है वैसेही संत भी स्वर्गको जाते हुए आनन्दित हृदयसे मालूम पड़ते हैं।

भाइयो! क्या तुम्हें मालूम है कि ऐसी मौत कैसे हो सकती है ? उत्तम कर्म तथा धर्मका पालन करनेसे, पापसे बचनेसे, अपने जीवनके भले कर्मोंको ईश्वरको अर्पण कर देनेसे, जगतको मिथ्या समझकर वैसाही आचरण करनेसे, परमार्थ करनेसे, यथाशक्ति जगतके जीवोंकी एवं महात्माओंकी सेवा करनेसे, आत्मिक शक्तिको विकसित करनेसे, और परम कृपालु सर्वशक्तिमान ईश्वरकी भक्ति करनेसे तथा उनके स्वरूपका सत्यज्ञान प्राप्त करनेसे मौत सुधरती है। भाइयो! जैसे जीवित रहना सीखते हो वैसेही मरना भी सीखो, क्योंकि मौत सुधारनेके ऊपरही सब आधार है, इससे जैसे बने मौत सुधारनेका प्रयत्न करो।

१४

दुःखको याद करके रोया करनेसे प्रभु विमुख होते हैं।

हम देखते हैं कि बहुतसी स्त्रियाँ बड़ी भक्तिमान, धर्मभाववाली, नियमोंका पालन करनेवाली, सेवा करनेवाली और कष्ट-सहिष्णु होती हैं तिसपर भी वे सुखी नहीं रहतीं। क्या आप जानते हैं कि इसका परिणाम क्या होता है? जिस प्रकार ज़रासा पानी कच्चे रंगके बहुत अच्छे चित्रोंको भी खराब कर डालता है, उसी प्रकार धर्मभावनाके प्रारम्भके असमाप्त सुन्दर चित्रोंको हमारी आँखके आँसू धो डालते हैं। जिस प्रकार मकड़ी द्वारा कठिनतासे बनाये हुए जालाको बिना किसी परिश्रमके झाड़ू देनेवाला तोड़ डालता है, उसी प्रकार संसारके मोहके लिए आँखोंमेंसे गिरते हुए आँसू और हमारे मनके दुख हमारी धर्म-भावनाको तोड़ डालते हैं, क्योंकि अपने स्वार्थके लिए रोया करनेका अर्थ और क्या है? महात्मागण कहते हैं कि इसका अर्थ प्रभुके सन्मुख होना है। अपने आँखमेंसे स्वार्थका आँसू गिराना सूचित करता है कि हमारे धर्मका बल कम है। थोड़ी देरके लिए आए हुए सांसारिक दुखोंके लिए अपने आँखोंसे आँसू गिराना यही सूचित करता है कि जैसा चाहिये वैसा प्रभुमें हमारा विश्वास नहीं है। जगत तथा देहके साथ जुटे हुए स्वाभाविक दुखोंके लिए रोनेका अर्थ यही है कि हमने जगतका मिथ्यापन तथा महान प्रभुकी महिमा नहीं समझा है। स्थितिमें फेरफार होनेपर तथा संयोगोंके बदल जानेपर रोना यह सूचित करता है कि हम भगवद् इच्छाके अधीन नहीं हो सकते। मनमें आये हुए काम क्रोध या लोभकी तृप्ति न होनेपर रोनेका अर्थ यही है कि अभी

थोड़ेसे भी आँसू हमारी उत्तम भावनाओंको कड़ा धक्का पहुंचाते हैं। इतनाही नही जैसे तेलकी घानी एकरूप नहीं हो सकती वैसेही दुख कभी भी धर्मके साथ नहीं मिल सकता, इससे भावुक भाई बहनो! दुःखोंकी गिनती करते समय ज़रा विचार करना। जिस तिसके सन्मुख दुखका रोना रोनेके पहिले पवित्र धर्मपर विचारकरो और याद रखो कि बहुत देवदर्शन करनेपर नहाधोकर पवित्र हो तथा बाहरके आचार रखनेमें तथा मस्तिष्ककी चतुरता दिखानेमें बहुत सचेत रहने पर भी जबतक हृदयमें दुख और आँखोंमें आंसू रहेगा तबतक प्रभु हमारी सेवा अंगीकार न करेगा। जबतक हमारा ऐसा मन रहेगा तबतक हमारी भावना ठहर नहीं सकती, तब तक हमारा विश्वास जमता नहीं, प्रेम बढ़ता नहीं, हमें उत्तम ज्ञान होता नहीं और तब तक हमारी भक्ति हमें फलीभूत नहीं होती। इससे यदि सर्वशक्तिमान अनंत ब्रह्माण्डके नाथ, महामंगल कारी सदासुखरूप, शान्तिदाता पवित्र पिता सच्चिदानन्द परमात्माका आनन्द लेना हो तथा उनके साथ तार मिलाना हो तो यथासाध्य हृदयके दुखको निकाल डालनेका प्रयत्न करो।

१५

धर्मकी बाहरी भिन्नभिन्न क्रियाओंको मत देखो बल्कि हृदयके हेतुओंको देखो

एक जिज्ञासुने किसी संतसे पूछाकि महाराज! कोई कहता है कि बार बार स्नान करनेमें धर्म है, तो कोई कहता है कि अधिक पानी डालनेसे जीव मरते हैं, इससे नहानेसे पाप होता है। कोई कहता है कि चुन्दी रखनेमें धर्म है तो कोई

:हता है कि माथा मुड़ानेमें धर्म है । कोई कहता है कि ठाकुर
ीका प्रसाद खानेमें ही धर्म है तो दूसरा कहता है कि उप
ास करनेमेंही धर्म है, तो कोई कहता है कि घरमें अग्नि
तला रखनेसेही धर्म होता है तो दूसरा कहता है कि अग्निका
याग करनेसहो धर्म होता है । कोई कहता है कि मूर्ति पूजने
से धर्म होता है तो दूसरा कहता है कि नहीं, इससे पाप होत
हैं । कोई कहता है कि ईश्वर अवतार लेते हैं तो दूसरा कहता
है कि ईश्वरका अवतार होताही नहीं । कोई कहता है कि
तीर्थोंके अमुक स्थान पवित्र हैं तो दूसरे कहते हैं कि सब स्थान
एक समान हैं । कोई कम पूजते हैं तो कोई उसके पास जाते
घबड़ाते हैं । कोई कहता है कि अमुक महात्मासेही तर सकते
है, तब दूसरा कहता है कि तुम जिसे महात्मा कहते हो उसमें
कुछ तत्त्व नहीं है । कोई कहता है कि मरजाद लेकर सबसे
अलगही आनेसे प्रभु प्रसन्न होता है तो दूसरा कहता है कि
सबके साथ अभेद रखनेसे प्रभु प्रसन्न होते हैं । कोई कहता
है कि यज्ञ करनेसे प्रभु प्रसन्न होते हैं तो दूसरा कहता है कि
यज्ञ करनेसे पाप होता है । कोई कहता है कि गृहस्थाश्रम
रहकरही धर्मका पालन किया जा सकता है तो कोई कहता
कि त्यागी होने से, और कोई कहता है कि ईश्वर साकार है त
दूसरा कहता है कि वह निराकार है । इस प्रकार परस्पर हजारों
विरुद्ध बातें हैं । उनमें कौनसी सच्ची है और कौनसी झूठी
यह मेरी समझमें नहीं आया, इससे महाराज ! मुझे सत्य क्या
बताइये, मुझे अपना जीवन सुधारनेका उपाय बताइये ।

यह सुनकर उस संतने कहा—भाई ! यदि ऊपरी दृष्टि
देखो तो इन सबमें परस्पर बहुत अधिक विरोध दिखाई पड़
है किन्तु इनमेंसे किसीमें भी यदि गहरे पैठकर विचार कि

ाप तो प्रत्येक बातमें कुछ न कुछ तत्त्व अवश्य दिखाई पड़ेगा
योंकि ये बातें।फलके ऊपरकी छाल हैं किन्तु उनके भीतरका
ाग कुछ दूसराही है। इससे हमलोगोंसे जो मूल होती है वह
ह है कि हम सब लोगोंने भिन्न भिन्न रंगोंका चश्मा लगा
ाया है, इससे इन चश्मोंके रंगोंके प्रभावसे हमें बाहरकी
स्तुएं दिखाई पड़ती हैं और उसीके अनुसार हम बाहरी
ालके रूपरंगसे भीतरके तत्त्वका अनुमान करते हैं, जिससे
स्तुकी परीक्षा करनेमें हम ठगे जाते हैं, किन्तु यदि सच्ची
ीतिसे वस्तुको देखना हो तो हमें विचारकर देखना चाहिये कि
जिन-जिन बातोंकी हम निन्दा किया करते हैं वे सचमुचमें वैसी
ी हैं अथवा हमारे चश्मोंके रङ्गके समान वैसी केवल दिखाई
ेती हैं। यदि इस प्रकार विचार करोगे तो समझमें आजायगा
कि जो मनुष्य उपवास करता है वह अपनी हृदयकी भावनाको
तृप्त करनेके लिये तथा अपने कल्याणार्थ प्रभुके लिये ऐसा
करता है और जो मनुष्य ठाकुरजीको छप्पन भोग लगाकर
प्रसाद ग्रहण करता है वह भी अपने हृदयको तृप्त करनेके
लिये अपने कल्याणकी इच्छासेही ऐसा करता है। यद्यपि
ये दोनों कर्म भिन्न-भिन्न हैं किन्तु उनदोनोंकी मूल भावना
एकही है और ये दोनों इस प्रकारकी परस्पर विरोधी क्रियाओंको
महान प्रभुके लिएही करते हैं, इससे उनदोनोंको अपनी
अपनी भावना व पुरुषार्थके अनुसार सर्वरूपमें रहनेवाले
अंतर्यामी सर्वज्ञ परमात्मासे फल मिलता है। जो मनुष्य अग्नि
होत्री होकर सर्वदा अग्नि प्रज्वलित रखता है और विधि-विधान
पूर्वक होम करता है वह भी अपनी अन्तरात्माको सन्तुष्ट करनेके
लिए महान प्रभुके लिएही करता है और जो मनुष्य अपना
सर्वस्व दान देकर तथा सांसारिक सुखोंका बलि देकर

१६

धर्म क्या है? और धर्मके मुख्य कर्तव्य क्या हैं?

सनातन पवित्र आर्यधर्मका महान् सिद्धांत है कि आत्मा
मात्मामेंसे उत्पन्न हुई है। हमारी आत्मा परमात्माका एक
श है और हमारी आत्मामें परमात्माकी सत्ता व्याप रही है,
तनाही नहीं, हमारी आत्माके परमात्मामेंसे उत्पन्न होनेसे
र्वशक्तिमान परमात्मामें जो महान् गुण अलौकिक शक्ति है,
द्भुत आकर्षण, परिपूर्ण सौन्दर्य, अनंत ज्ञान, अखण्ड ऐश्वर्य
र्णस्नेह, आदि अन्त रहित अमरत्व एवं अखण्ड आनन्द हैं,
ही सब गुण हमारी आत्मामें और जगतके सब जीवोंमें
स्वभावतः अतिशय परिमाणमें विद्यमान हैं, क्योंकि हम पर-
मात्मामेंसे पैदा हुए हैं, हमारी आत्मामें परमात्मा व्याप रहे हैं,
और परमात्माकी सत्ताके कारणही हमारा जीवन है इससे
परमात्माके सब गुण तथा सब प्रकारकी शक्तियां हममें
विद्यमान हैं। उनमें अन्तर केवल इतनाही है कि परमात्मा
संपूर्ण है और हम अपूर्ण हैं; वह महासागररूप है और हम
एक बूंदके समान हैं, वह स्वतंत्र है और हम परतंत्र हैं, वह
मायाको वशमें रखनेवाला तथा मायासे परे है और हम मायाके
अधीन हैं और वह सृजनहार पालक पिता हमारा स्वामी
है, और हम उसके सेवक हैं। प्रकृतिसेही ऐसा होनेसे और
स्वभावतः हमारी आत्मामें उपरोक्त गुणोंके होनेसे जीवमात्रकी
प्रकृतिही ऐसी होती है कि बिना किसी कारणके स्वाभाविक
रीतिसे ईश्वरकी ओर वह खींचा जाता है। इस प्रकारसे जीव
और ईश्वरके बीच जो स्वाभाविक आकर्षण होता है उसे भक्ति

। मनुष्य हैं उनकी सेवा करना तथा सब जीवोंके कल्याणमें
लगाहीं हमारे पवित्र धर्मका दूसरा कर्त्तव्य है। अनन्तर
ध्यानमें अनुभव किये हुए ईश्वरीय ज्ञानसे तथा यदि जगतमें
लोगोंकी सेवाकी हो तो उनके आशीर्वादसे, सेवाके बलसे
प्राप्त आत्मिक शांतिसे और ज्ञान तथा सेवा इन दोनोंके
संयोगसे एक प्रकारका जो आकर्षण पैदा होता है, उस आक-
र्षणसे आकर्षित परमकृपालु परमात्माकी कृपासे मन ठहरने
लगता है। इस समय ज़रा पुरुषार्थ करके सब प्रकारके विषयोंमें
से उसे पीछे लौटाकर शांत करना तथा मन, वचन और
कर्मसे पाप-वासना छोड़कर जीवको प्रभुमय करना, और सुख
दुखमें हार-जीतमें तथा रागद्वेषमें समान वृत्ति रखकर सदा
सहज समाधिके जैसी स्थितिमें रहना, यह हमारे उत्तम
धर्मका महाकल्याणकारी तीसरा कर्त्तव्य है। इनतीनों कर्त्तव्योंको
ठीकसे पालन करनेका नाम धर्म है। इन तीन कर्त्तव्योंको
सीखनेके लिएही अनेक प्रकारके कर्मकांड भक्ति, ज्ञान और
शास्त्र हैं। इससे भाइयो! नाच तमाशेमें, थोड़ी देरके लिए
मूर्खोंको प्रसन्न करनेके लिए ढोंग रचनेमें, प्राचीन कालसे
चलेआतेहुए कपोल कल्पित आचार-विचारमें और मान प्राप्त
करनेके लिए तथा पेट भरनेके लिये धर्मिकोंके बिछाये हुए
स्वार्थकी जालोंमें न पड़कर, हृदयमें भगवद् आवेश आवे,
सर्वशक्तिमान महान ईश्वरका सच्चा ज्ञान हो, जगतके जीवोंकी
सहायता कर सकें और अपने मनको काबूमें रख सकें ऐसा
प्राचीन ऋषियोंके पवित्र सत्य धर्मका पालन करना सीखो।

रिणाम यह होता है कि मन बहुत दौड़ता है किन्तु देहके आलस्यके कारण वह कोई कामकर नहीं सकता और स्वयं बहुत चंचल स्वभावका होनेसे दृढतासे किसी एक विषयको कड़ नहीं सकता। घड़ी घड़ी वह नवीन विषय देखता है, न्तु अपनी चंचलताके कारण एक विषयको अच्छी तरह प्राप्त कर सकता नहीं तो भी प्रत्येक विषयमें कूदा करता । ऐसी अस्थिरता होनेपर भी वह चुपचाप नहीं बैठ सकता ौर स्वयं देहके अधीन होनेसे मनको उस प्रमाणमें काम हीं दे सकता, इसका परिणाम यह होता है कि मन आगे छेके नये पुराने विकारोंके साथ खेला करता है और इसीमें ग्न रहता है। मनका ऐसा स्वभाव होनेसे हम अपनी ज़रासी असावधानतासे विना कारण मनसे बहुतसे पाप करा डालते हैं। मनसे जितने पाप होते हैं उसकी तुलनामें देहसे बहुतही कम पाप होता है क्योंकि देहसे अनुकूलता प्राप्त होनेपर तथा आस पासके संयोगोंसे काम होता है। उसे दूसरोंकी लज्जा आदिका ध्यान रखना पड़ता है, सरकारके कानूनको मानना पड़ता है, सांसारिक विघ्नसे काम लेना पड़ता है, और थोड़ीही देर में वह बिगड़ जानेवाला भी है इससे उसकी आरोग्यतापर ध्यान देना पड़ता है; किन्तु हृदयमेंसे उत्पन्न विकारोंके साथ भीतरही भीतर मन खेला करता है, उसे इस प्रकारकी कोई भी अड़चन नहीं पड़ती; इससे वह बड़े बड़े पाप कर सकता है। इससे उसे सचेत रखनेकी बहुत आवश्यकता है और इसीलिए संसारके अनेक प्रकारके धर्म व क्रियायें बनी हुई हैं। तिसपर भी अपना मन अपने वशमें नहीं रहता, इसे रोकनेके लिए महात्मागण कहते हैं कि यथाशक्ति किसी भी भले काममें मनको स्थिर रखो। थोड़ी देरके लिए भी उसे

खाली रहने मत दो। याद रखो कि जब यह खाली रहता है तभी विकारोंके साथ मेला करता है क्योंकि चंचल होनेसे वह खाली नहीं बैठ सकता, किन्तु किसी अच्छे काममें लगे रहनेसे यह कहीं भटककर जा नहीं सकता। मनको रोकने सबसे सरल उपाय यही है कि उसे क्षणभरके लिए भी खाली मत रहने दो। शास्त्रोंमें कहे अनुसार आसन, प्राणायाम ध्यान-धारणा, तप, व्रत, जप, यज्ञ, तीर्थ और देवपूजा आदि धर्मके काममें यदि मन लगाया जा सके तो इससे बड़ी उत्तमतासे मन वशमें किया जा सकता है, किन्तु इस सम ज़माना बदल गया है। अब विविध प्रकारकी सांसारि उपाधियाँ बहुत बढ़ गयी हैं और दुनिया भरमें सबकी प्रवृ काम हो गयी है, इससे अधिकांश लोग इस समय सच्चे नियमोंक पालन नहीं कर सकते। मनमें उत्पन्न होनेवाले बुरे विकारोंसे बचनेके लिए अपनी अंतरवृत्तिकी प्रेरणा व प्राकृतिक शौक अनुसार, अपने भाई बहनोंके आवश्यकतानुसार तथा अप आसपासके संयोगोंके अनुसार अपने मनको भले कामों लगाये रहना चाहिये। यह काम चाहे धर्मका हो, देशहित हो, राज्यका हो, संसार-सुधारनेका हो, कलाका प्रचार करने लिए हो, गरीबोंकी स्थिति सुधारनेका हो, अनाथ प्राणि पर दया करनेका हो, दुखियोंकी सहायता करनेका हो अथ अपनी स्थिति सुधारकर आत्माका कल्याण करनेका। ऐसाही चाहे कोई भी काम हो, किन्तु किसी भी प्रका ऐसे भले कामोंमें मनको सर्वदा लगाये रहनेसे पापसे सकोगे। इसके अतिरिक्त मानसिक पापसे बचनेका आज दूसरा और कोई सरल उपाय नहीं है। इससे बहनों त

भाइयो ! ऐसा प्रयत्न करो कि मनपर विजय प्राप्त करनेके लिए प्रभुके लिए सर्वदा भले कामोंमेंही मन लगा रहे ।

१८

जब सत्संग होता है अथवा कोई भक्त मिल जाता है हम तब उसकी ओर रबरके सदृश खिंचजाते हैं, पीछा फेरनेही हम पुनः उसके सम हो जाते हैं

रबर तो तुमने बहुत बार देखा होगा। इसमें यह गुण होता है कि जैसे जैसे इसे ताना मिल लेतेही यह अपनी शक्तिभर लंबा होता जाता है किन्तु उसे छोड़ते ही पुनः जैसका तैसा सिकुड़ जाता है। इसी प्रकार जिस महान प्रभुके पवित्र नामकी लगन नहीं लगी है, जिसपर महात्मा सूरदास द्वारा कथित गोपियोंकी काली कमलियाके समान भक्तिका पक्का रंग नहीं चढ़ा है, और जिसने प्रभुप्रेमके अलौकिक भावको पहचाना नहीं है, वह भी रबरके समान है, क्योंकि जब वह हरिकथा सुननेके लिये आता है, पाठ पूजा करनेके लिए बैठता है, धर्म पर व्याख्यान सुनने आता है, किसी ज्ञानी साधु संत या पवित्र भक्तसे मिलता है, और जब उसे वैराग्य उत्पन्न होता है तब इतने समयके लिए वह बड़ा बुद्धिमान बन जाता है। इस समय उसे मालूम पड़ता है कि मायामें तत्त्व नहीं है, कायाका भरोसा नहीं है और पापका फल भोगना पड़ेगा, इसलिए उनसे बचनाही उत्तम है। अब हमें ऐसा कार्य शोभा नहीं देता। मेरे देखतेही देखते कितनेही लोग सुधर गये

किन्तु मैं अभी भी 'अतो भ्रष्टः ततो भ्रष्टः'.के सदृश बना हूँ; मुझेभी अब कुछ करना चाहिये। जिन्दगीका कुछ ठि नहीं है, मेरे सामनेही मेरे जान पहिचानके बहुतसे मनुष्य गये वैसेही मैं भी एक दिन मर जाऊँगा; इससे अब भी ठि आजाऊँ तो ठीक है। लोगोंमें मैं बुद्धिमान गिना जाता मान आबरूभी है, पैसाकीभी कमी नहीं है और लो बहुतही भलामानस प्रसिद्ध हूं, किन्तु अभी मेरे मनसे विचार, हृदयमें भरीहुई वासनायें और मेरातेरा दूर नहीं हु हैं; बाप दादाके समयका पुराना वैर अभी भी याद आ हैं, अभी भी मान इज़्ज़तकी इच्छा मदारीके बंदरके स मुझे नचाया करती है, मेरे लोभका कहीं अन्त दिखायी पड़ता, अभी भी मनको मोहित करनेवाली लालचोंमें लि जाता हूँ और अभीभी सद्भक्ति करनेका जो मैंने नि किया है उसका पालन नहीं कर सकता। हे प्रभु! ऐसी स्थिति है। इसमेंसे तूही निकाले तभी निकल सकता हूँ। कृपा बिना मेरा पार नहीं लग सकता। सत्संगके समय प्रकारके विचार आते हैं, किन्तु समय आतेही और कामका लगतेही यह सब हवा हो जाता है। उस समय सब भूल जाता है और यदि कुछ यादभी आये तोभी उस पालन नहीं कर सकते।

भाइयों! ज़रा विचार तो करो कि यह कितनी बुरी है? लंबा होकर सिकुड़ना यह रबरसे हो सकता है, आपको भी यह शोभा देता है? रबड़ तो जड़ है और हाेना तथा सिकुड़ना उसका प्राकृतिक गुण है, इस गुणसे जगतमें बहुत उपयोगी हुआ है, किन्तु हम तो ईश्वरके दाव उत्तम मनुष्य हैं, इससे यदि इस प्रकार बढ़ेंगे घटेंगे, उ

चढकर नीचे उतरेंगे तो यह हमारी नालायकी समझी जायगी। पीछे हटनेके लिए प्रभुने हमें यहाँ नहीं भेजा है बल्कि आगे बढ़नेके लिए उत्तम मनुष्य अवतार, पवित्र धर्म तथा अनुकूल संयोगोंको दिया है। इससे भाइयो! चेतो और खरके समान न बनकर जीवनको सार्थक करनेका प्रयत्न करो।

१६

महान प्रभु कहते हैं कि तुम मेरे हो जाओ, इससे जगतको मैं तुममय बनादूँगा

एक परम भक्त बड़ा वैभवशाली था, उसका ठाटबाट बहुत अधिक था और उसका चमत्कारभी आश्चर्यमें डालने वाला था। श्रीमंतोंकी और अधिकारियोंकी उसके यहां भीड़ लगी रहती थी, उसकी पालकी उठानेके लिए बड़े बड़े लोग तैयार हो जाते थे, उसके यहां सदाव्रत चला करता था, अनेकों राजा उसके चेला थे और बहुतसे राजा अपने मनमें इच्छा रखते थे कि यह भक्त हमारे यहां आकर रहे तो अच्छा हो। जो कुछ वे कहते थे उसे करनेके लिए लाखों मनुष्य तैयार हो जाते थे। यदि कोई आफत आपड़ती थी तो उसके बदलेमें हज़ारों मनुष्य अपना सिर कटानेके लिए तैयार हो जाते थे। लक्ष्मी तो उसके पैरपर लोटती थी। भूत भविष्यकी बातें वे बता सकते थे और फूंककर अथवा विभूति देकर असाध्य रोगको भी अच्छा कर देते थे। यह सब देखकर सब लोग बड़े अचम्भित होते।

प्रभुके पवित्र नामपर अचल विश्वास रखकर मैंने अपना सुख छोड़ा है, जिससे दूसरोंके दुःखोंको दूरकर सकता हूँ। अपनी इच्छाका त्याग कर भगवद् इच्छाके अनुसार रहता हूँ जिससे ऋद्धि-सिद्धि अपने आपही चली आती हैं। पहलेसे ही मैंने अपनी सब इच्छाओंको भजनकी आगमें जला डाला है, इससे जीवोंके कल्याणार्थ यदि कोई इच्छा करता हूँ तो वह पूर्ण होती है। भाई! मैंने स्वाद छोड़ा है इससे मुझे अमृत मिलता है, कुछ मांगता नहीं इससे सब कुछ मिलता है, मैं स्त्रियोंको कुदृष्टिसे नहीं देखता जिससे रानियाँ भी दासी बन मेरी सेवा करती हैं, मैं दूसरेका धन लेनेकी इच्छा नहीं करता इससे लक्ष्मी स्वयं मेरे पास चली आती हैं, मैंने पक्षपात छोड़ दिया है जिससे सबपर विजय प्राप्तकर सका हूँ और सर्वशक्तिमान अनंत ब्रह्माण्डके नाथकी शरणमें जाकर सब कुछ छोड़ दिया है जिससे सब कुछ मिला करता है, क्योंकि त्यागमें ही तीनों लोक हैं ऐसा वेदमें कहा है और प्रभुको अपनानेके लिए मैंने सबका त्यागकर दिया है, इससे मैं महात्मा हो गया हूँ और तुम्हें सांसारिक सर्व सौन्दर्यके स्वामी श्यामसुन्दरकी अपेक्षा तुम्हारी स्त्री अधिक अच्छी मालूम पड़ती है इससे तुम्हें दुख भोगना पड़ता है। लक्ष्मीके पति अनंत ब्रह्माण्डके नाथकी अपेक्षा धन तुम्हें अधिक भाता है जिससे तुम्हें गरीब बनना पड़ता है। अंतःकरणकी स्वाभाविक अखंड पवित्रताकी अपेक्षा तुम्हें क्षणभंगुर विकार अधिक अच्छा मालूम पड़ता है, जिससे हैरान होना पड़ता है। कोटि-कोटि जीवोंको उत्पन्न करनेवाले तथा तुम्हें और तुम्हारे कुटुम्बको जीवन देनेवाले परम कृपालु परमात्माकी अपेक्षा लड़का अधिक प्रिय लगता है जिससे तुम्हें रोना पड़ता है। सर्वशक्तिमान पवित्र पिता

ात्माके सर्वोत्तम चरित्रका गुण-गान करनेकी
के किस्से कहानी तुम्हें अधिक अच्छे लगते हैं इससे तु
से ही संतुष्ट हो जाते हो ! देवोंके देव, कालके काल औ
के भी भय ईश्वरसे तुम डरते नहीं, जिससे तुम्हें दूसरे लोगोंम
ाकसे, कानूनसे, वस्तुसे, परछाईसे तथा अपनी ही कल
ोंसे डरना पड़ता है । अखंड आनंदरूप, महामंगलकारी
तिदाता, परमकृपालु परमात्माके सुखकी अपेक्षा क्षण भर
ट हो जानेवाले पदार्थको खाने पीनेमें तुम्हें अधिक सुख मिलत
जिससे तुम्हें रोग होता है, और अजरामर, आदि-अंत-रहि
ाण-पुरुष नारायणकी सेवामें अनंत काल तक रहने
ानंदकी अपेक्षा क्षण-भंगुर देह तुम्हें अधिक अच्छा मालूम
ड़ता है, जिससे तुम्हें मायाका गुलाम बनना पड़ता है।

भाई ! हम दोनोंमें यही अन्तर है । इसके अतिरिक्त और
कुछ नहीं है । मैं कुछ स्वर्गमेंसे आया नहीं हूँ और न तुम
रकमेंसे ही आये हो । मैं न देव हूँ और न तुम राक्षस, औ
मैं न कुछ आत्मा हूँ और तुम न अनात्मा' हो, यह सब कुछ
नहीं है । हम सब एक समानही मनुष्य हैं । हम सब एक
पिताके बालक हैं और संसारके हम सब मनुष्य, मन, बुद्धि
और आत्मावाले हैं तथा ईश्वरके कृपापात्र हैं, इससे यदि
तुम प्रभुके हो जाओगे तो प्रभु तुम्हारा हो जायगा । भाई
यह बहुतही सरल बात है । केवल यह नौका भेद है । जरा
समझकर हिम्मत करो तो इस नौकाको खसकने कुछ भी दे
न लगेगी, अनन्तर प्रभु तो कहतेही हैं कि तुम मेरे हो जा
तो जगतको मैं तुम्हारे सपुर्द कर दूँगा, इससे यदि संसार
अपना अधिकार जमाना हो तो तुम प्रभुके हो जाओ, तु
प्रभुके हो जाओ।

२०

यदि आपसे भक्ति न हो सके तो दूसरोंकी भक्तिमें विश्वास रखिये

एक सेठने किसी भक्तसे कहा—महाराज ! आप बारंबार कहते हैं कि भक्ति करो। और बहुतसे लोग भी कहते हैं कि भक्ति करो और मेरा हृदय भी कहता है कि कुछ करना चाहिये, किन्तु महाराज ! ऐसे झंझटमें पड़ा हूँ कि कुछ हो नहीं सकता। रोजगार धंधामें देश परदेशके लोगोंकी चढ़ा ऊपरी, लाभ कम और जोखिम अधिक हो जानेकी हालत, तार आदि साधनोंके कारण घड़ीभरमें पड़जाने वाली उथल पुथल, बाहरी आडंबर, बढ़ती जाती हुई सजावट, प्रतिदिन निर्बल पड़ती जाती हुई तबीयत, परम्परागत रिवाजोंके कारण सिर-पर पड़ती हुई आफतें, मानप्राप्त करनेकी इच्छाके लिए निष्कारण खुशामद करना, सज्जनके साथ रहनेके लिए लम्बा खर्च और धर्मकी शिक्षा देनेका झूठा ढोंग आदि बातोंसे जीव ज़रासी भक्तिमें नहीं लग सकता और जब कभी आपके जैसे महात्माओंका सत्संग हो जाता है तब मन होता है कि कुछ अवश्य करना चाहिये, किन्तु यह विचार करताही हूँ कि कोई न कोई नयी आफत सिरपर आपड़ती है जिससे मन भटक जाता है और कुछ हो नहीं सकता। इससे महाराज ! हमसे हो सकने लायक कोई सरल मार्ग बताइये किन्तु उसे बताते समय हमारी जंजाल, निर्बलता, पद और धर्म सम्बन्धी हमारे ज्ञान आदि बातोंपर भी ध्यान रखियेगा और ऐसा करके यदि आप कोई मार्ग बताइयेगा तभी मुझसे कुछ हो सकेगा। किन्तु यदि

आप अपनी स्थितिके अनुसार बातें करेंगे तो मुझे कुछ नहीं है क्योंकि उसका मैं पालन कर नहीं सकता। मे हारमें कोई अड़चन न पड़े और सरलतासे भक्ति भी उ हो जाय ऐसा कोई सरल उपाय बतानेकी कृपा कीजिये।

तब उस भक्तने कहा कि सर्वशक्तिमान परमकृपालु मह परमेश्वरकी भक्ति करनेकी दो रीति हैं। उसमेंसे पहली सर्व उत्तम रीति स्वयं भक्ति करनी है और दूसरी रीति यह कि यदि स्वयं भक्ति न हो सके तो किसी दूसरे भक्ति रख वालेमें श्रद्धा रखो। इसके अतिरिक्त ईश्वरकी कृपा प्राप्त करने दूसरा कोई मार्ग नहीं है, इससे यदि तुमसे भक्ति न सके तो दूसरेकी भक्तिमें श्रद्धा रखो, इससे भी दयालु ईश् तुम्हारी भक्ति मान लेगा।

यह सुनकर उस सेठने पूछा—दूसरेकी भक्तिमें कै श्रद्धा रखी जा सकती है और दूसरेकी भक्तिमें श्रद्धा रख पर भी ईश्वर उसे कैसे स्वीकार करेगा? यदि ऐसा सकताहो तबतो माँ बापके लिए बहुत ही अच्छा है। तब उ भक्तने कहा—हाँ भाई! ऐसा हो सकता है। परमकृप परमेश्वर बड़ाही दयालु है और वह सब जीवोंपर बड़ा रखता है, इससे वह किसी न किसी प्रकारसे दया क चाहता है। वह हमारे साथ बहुतही सरलतापूर्वक व्यव करता है, हमारी ज़रासी इच्छाको भी वह बड़े आग्रहपू अपना लेता है, हमारी तुच्छ भेटोंको बड़े प्रेमपूर्वक स्वी करता है और हमारे पश्चात्तापपर भी ध्यान देता है क्यों हमारे ऊपर उसका अतिशय प्रेम है इससे किसी न कि बहाने हमारे ऊपर कृपाकी वर्षा किया करता है। ऐसा आ आनन्द-स्वरूप प्रभु यदि हमारी थोड़ीसी भक्तिको बड़ी मा

तो इसमें कुछ नवीनता नहीं है। ऐसे भी बहुतसे मनुष्य हैं जिनका जीव ईश्वरकी ओर खिंचा रहता है किन्तु सांसारिक झंझटोंसे वे ऐसा फँसे रहते हैं कि उनसे भक्ति नहीं हो सकती। इससे दयालु प्रभुने ऐसी स्वतंत्रता दी है जिससे दूसरेकी भक्तिमें श्रद्धा रखनेवालेका भी कल्याण होता है क्योंकि कुछ भी न करनेसे कुछ करना अच्छा है। इतनाही नहीं, जिनकी भक्तिमें हम श्रद्धा रखना चाहते हैं, उन्हें भी हमारी सहायताकी बड़ी आवश्यकता रहती है, क्योंकि जिनसे हम श्रद्धा चाहते हैं, उन्हें इसके बदलेमें जो वस्तु हम देते हैं वह उनके पास नहीं होती, इससे उन्हें उस वस्तुकी आवश्यकता रहती , इससे उनकी आवश्यकताओंकी पूर्त्ति करनेसे वे और श्रद्धा करते हैं। ऐसा करनेसे हम उनकी भक्तिमें भाग नेवाले हो जाते हैं उनकी भक्तिमें हम सहारा देते हैं और किसीके भक्तिमें सहारा देनेकी अपेक्षा उत्तम कार्य और कोई नहीं है। यदि तुमसे भक्ति न हो सकती हो तो दूसरेकी भक्तिमें श्रद्धा रखो अर्थात् दूसरे भक्तोंके मददगार बनो और उनकी भक्तिमें सहारा दो, इससे परमकृपालु परमेश्वर तुम्हारी भक्ति मान लेगा। यदि तुम्हारे पास धन है तो उस गरीब विद्यार्थीकी जो शास्त्रका अभ्यास करना चाहता है किन्तु धनके अभावसे नहीं कर सकता, सहायता करो, जो वक्ता देशदेशांतरमें भ्रमण करके हमारे धर्मके उत्तम रहस्यको समझाकर लोगोंको अपनी ओर मिलाना चाहता है, उसकी सहायता करो, उन लेखकों व कवियोंकी सहायता करो जो देशके साहित्य तथा धर्मकी सेवा करते हैं, जो स्वदेशी लोग व्यापार बढ़ानेके लिए परदेशमें जाकर कठिन प ओर हमारी भविष्यकी सन्तानोंके लिये पर-

देशका दरवाज़ा खोलते हैं, उनकी मदद करो। जो सदाचारी स्त्रि
निराधार हैं और जिन्हें पालन-पोषणका कुछ भी साधन नहीं
उनपर दया करो, उन छोटे बालकोंकी जो भिखारीरूपमें फ
पुराना पहने हुए मार्गमें घूमा करते हैं तथा मूर्खोंसे मूढ़ जा
देशपर बोझरूप हो रहे हैं, सुधारनेके कार्यमें सहायता करो
जो पवित्र धर्म-गुरु धर्मका सच्चा तत्त्व बताकर संसयानुम
लोगोंको जंजालसे छुटकारा देते हैं, उनके इस शुभ कार्यको आ
बढ़ानेके लिए मदद करो। जो उत्साहित कारीगर कला-कौश
सीखनेके लिए दूर देशोंमें जाते हैं तथा जो विद्वान नवी
आविष्कार करते हैं, उनकी मदद करो। वर्षामें भीगकर, ठं
ठरकर तथा गर्मीमें भूनकर अथाह परिश्रम करते हैं, तिस
जिन्हें पेटभर अन्न नहीं मिलता, ऐसे हमारे गरीब किसानोंकी
स्थिति सुधारनेका प्रयत्न करो। बहुतसे महारोगियोंके खाने
पीने तथा उठने बैठनेके लिए कोईभी प्रबन्ध न होनेसे बेचारे ब
दुखी रहते हैं, इनके लिए प्रबन्ध करनेवाली संस्थाओंकी सहा
यता करो। उपयोगी निर्दोष पशुओंका निष्कारण वध होता है
उन्हें बचानेका उपाय करो। बहुत स्थानोंपर बड़ी-बड़ी नदियों
का अथाह जल व्यर्थमें समुद्रमें चला जाता है, वह खेतीबारी
काममें लाया जा सके, ऐसा उपाय करो। बहुत स्थानप
विविध प्रकारके फल-फूल तथा औषधियाँ किसीके उपयोग
आये बिना व्यर्थ सड़-गल जाती हैं, बहुत स्थानोंपर ज़मीनके
पेटमें अटूट खज़ाना भरा हुआ है, वह काममें नहीं आ रहा
और अनेकों स्थानपर लाखों मनुष्योंकी ज्ञान तथा शक्ति व्य
जाती है, उन्हें सदुपयोगमें लानेके कार्यमें सहायता करो
ऐसा करनेसे सब भले कामोंमें तुम्हारा कुछ न कुछ भा
रहेगा। देशकी भलाईके लिए, धर्म तथा मनुष्य आदि

प्रतिके लिए जो भले काम किये जाते हैं वे भी भक्तिके एक मुख्य अंग हैं; इससे ईश्वरका ज्ञान व ध्यान-पूजा यदि तुमसे सीधे न हो सके, तो इस प्रकारके परमार्थके हज़ारों काम हैं जिनमें तन, मन, धन, वचन कर्म और बुद्धिसे अथवा दूसरे किसी प्रकारसे जिससे जैसे हो सके मदद करना चाहिये, क्योंकि ऐसा करनेसे ही दूसरोंकी इस प्रकारकी भक्तिमें हम भाग ले सकते हैं। इससे यदि सर्वशक्तिमान महान ईश्वरको प्रसन्न करना हो तथा अपनी आत्माका कल्याण करना हो तो तुम स्वयं भक्ति करो और यदि ऐसा न कर सको तो दूसरोंकी भक्तिमें श्रद्धा तथा भाग रखो अर्थात् दूसरोंको सहारा दो, यही कल्याणका मार्ग है। याद रखो कि इसके अतिरिक्त संसारसागर पार करनेका दूसरा कोई मार्ग नहीं है।

२१

ईश्वरके सच्चे भक्तोंको कैसा होना चाहिये

कितनेही साधु गायें रखकर चिपरी (गोबरके कंडे) पाथा करते हैं, कितनेही धनवानोंकी खुशामद किया करते हैं, बहुतसे अड्डा लगाया करते हैं, बहुतसे कंगालके समान बनकर जीवन भर भीखही मांगा करते हैं, बहुतसे कुत्ता या बंदर पालकर उसके ज़रिये अपना पेट पालते हैं, बहुतसे बिना वैद्यक शास्त्र पढ़े हुए कुछ जड़ी बूटी रखकर अत्तार बनकर दवाकी दुकान खोलकर बैठ जाते हैं, बहुतसे जन्तर मन्तरका ढोंग करते हैं, कुछ बिना कारण गाली देनेमेंही अपना बड़प्पन समझते हैं, कुछ मनुष्य-जातिसे अलग हो जानेमेंही अपनी

पवित्रता समझते हैं, बहुतसे अनेक प्रकारके भ्रष्टाचारोंमें ही अपना धर्म समझते हैं, कुछ अपनी इच्छानुसार स्वछन्दता पूर्वक रहनेमें ही बड़ाई समझते हैं, कुछ दूसरे संप्रदायवालोंसे द्वेष करने तथा उनके साथ लड़ाई करनेमें ही अपना जीवन व्यतीत कर देते हैं, बहुतसे अन्त तक तुच्छ बातोंमेंही पड़े रह जाते हैं, कुछ बिलकुल निरुपयोगी हो जानेमेंही अपनी महत्ता समझते हैं, बहुतसे चेला मूंड़नेमेंही बहादुरी मानते हैं, बहुतसे जटा, भस्म, माला आदि बाहरी आडंबरमेंही अपनी सार्थकता समझते हैं, बहुतसे मूर्खोंसे पूजा करानेमेंही गर्व समझते हैं, और भी ऐसेही बहुतसे ढोंग रचते हैं। ऐसा करनेसे वे धर्मके अगुआ गिने जाते हैं, पूज्य समझे जाते हैं, संत कहे जाते हैं, महात्मा कहे जाते हैं और बहुतसे लोग उनका कहना मानते हैं. क्योंकि वे ईश्वरके भक्त समझे जाते हैं। यह सब देखकर अच्छे मनुष्योंको ग्लानि होती है और लोगोंकी साधुओंपर अश्रद्धा हो जाती है जैसा कि शास्त्रमें कहा भी है:—

सर्वशक्तिमान महान प्रभुके भक्त प्रभुके समानही दैवी गुण वाले होते हैं क्योंकि शुद्ध अन्तःकरणसे मनुष्य जैसी भावना धरता है वैसाही उसे फल भी मिलता है और जिसका ध्यान रखता है वैसाही वह स्वयं भी होता जाता है। ऐसा प्राकृतिक नियम होनेसे तथा सच्चे भक्तोंका सर्वस्व अपने प्रभुमेंही होनेसे प्रभुका थोड़ा बहुत अंश उनमें आता जाता है, इससे संसारके साधारण व्यावहारिक मनुष्योंकी अपेक्षा हृदयसे हरे हुए भक्तोंके आचार-विचार बहुतही उच्च दशाको पहुंचे होते हैं क्योंकि वे जिसका सेवन करते हैं, ध्यान धरते हैं, गुण-गान करते हैं, ज्ञान प्राप्त करते हैं, जिसकी भावना रखते हैं और अपना सर्वस्व अर्पण करके जिसकी इच्छामें अपनी इच्छा

मिला देते हैं यह अनन्त ब्रह्माण्डका नाथ सर्वशक्तिमान परम कृपालु सच्चिदानन्द परमात्मा सबसे बड़ा, भला, सुन्दर, राजाओंका राजा, देवोंका भी देव, जीवोंको जीवन देनेवाला, सूर्यको प्रकाश देने वाला, अग्निको गर्मी देने वाला, ग्रहोंको घुमानेवाला, समुद्रपर आज्ञा चलानेवाला, वर्षा बरसानेवाला, तथा कालका भी काल है, सुखका भी सुख, आनन्दका भी आनन्द, आदिअन्त-रहित तथा मोक्षदाता है। उसमें क्या चीज़ नहीं है जिसे न पाकर उसके सच्चे भक्त दूसरे किसी वस्तुकी इच्छा रखें।

अब विचार करो कि ऐसे भक्त जो ऐसे महा आकर्षणमें खिंच गये हों, महा आनन्दमें लीन हो गये हों तथा ऐसी महाशक्तिके आगे अपना अहमत्व भूल गये हों, किसी बातके लिये कैसे दुखी हो सकते हैं? और उनके हृदयमें किसी भी प्रकारकी इच्छा कैसे रह सकती है? क्योंकि वे तो अपना सर्वस्व ईश्वरको समर्पणकर ईश्वरमय हो जाते हैं, इससे उनके हृदयमें ईश्वरीय ज्ञानका सूर्य चमकता रहता है और उनके मनमें ईश्वरीय स्नेहका पूर्ण चन्द्र प्रकाशमान रहता है जिससे उनके हृदयमें से जगतपर उजाला पड़ा करता है, उनके मनमें शांति रहा करती है, उनके वाणीमें से सद्शास्त्रके महा सिद्धान्त निकला करते हैं, उनके चेहरेपर आत्मिक तेज छाया रहता है, और उनके दृष्टिसे अमृत वर्षा करता है, इतनाही नहीं जहां जहां उनकी जरूरत पड़ती है वहां वहां कुछ न कुछ कल्याणही होता जाता है। जहां उनके चरण पड़ते हैं वहां चिरकालके लिये कुछ असर फैल जाता है, जहां वे ठहरते हैं वहां उत्सव होता है और जिन लोगोंका उनके साथ सम्पर्क हो जाता है उन्हें कुछ नया ही रंग लग जाता है। ऐसी स्थिति

जिससे उत्पन्न हो उसीको शास्त्र भक्त व महात्मा कहता है, वही सच्चा संत है, वही अपना कल्याण करनेवाला है, और वही जगतके जीवोंकी सहायता करनेवाला है। इससे भाइयो! याद रखो कि सच्चे भक्त बड़ेही निस्पृह, परोपकारी, उदार, सहनशील, जगतके जीवोंपर प्रेम रखनेवाले, स्वार्थत्यागी, मनुष्य जातिकी उन्नति करनेके लिये शुद्ध अंतःकरणसे मदद करने वाले, धर्मके स्वयंरूप, जगतके लिए आदर्शरूप तथा और भी बातोंके लिये हृदयसे तृप्त होते हैं। इससे भाइयो! भूलमें पड़े न रहकर ऐसा बननेका प्रयत्न करो, और जो ऐसे सच्चे भक्त हैं उनकी प्रभुप्रीत्यर्थ यथाशक्ति सहायता करो!

२२

"हे सर्वशक्तिमान परमात्मा! हमे सद्बुद्धि दो" ऋषियोंके इस प्राचीन प्रार्थनाका रहस्य,

प्रकृतिका नियमही ऐसा है कि छोटी वस्तुएँ अपने आपही बड़ी वस्तुकी ओर आकर्षित होती जाती हैं। इस नियमके आधारपर स्वभाव से ही प्रत्येक वस्तुएँ उच्चताकी ओर आकर्षित होती रहती हैं और उसमें भी ईश्वरकी ओर मनुष्य तो विशेषतया आकर्षित होते हैं क्योंकि उनकी आत्माके साथ मनबुद्धि संबद्ध होती है। इससे दूसरी अड़चनोंको दूर करके सीधे वह अपने कल्याणके मार्गमें ईश्वरकी ओर जा सकता है किन्तु मन चंचल होनेसे और निर्बलताकी ओर झुकनेका स्वभाववाला होनेसे स्वाभाविक रीतिसे प्राकृतिक आकर्षणके द्वारा ईश्वरके मार्गमें चलते चलते भी अपने स्वार्थके

विचारोंमें पड़ जाता है। इससे सर्वशक्तिमान ईश्वरसे कुछ मांगनेकी इच्छा हो जाती है। यद्यपि यह मांग अपने स्वार्थके लियेही होती है तथापि उसका हेतु उन्नतिके मार्गमें शीघ्रतासे आगे बढनाही होता है और जो तृप्त रहता है वह बड़े सरलता पूर्वक आगे बढ सकता है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है, तो भी जीव तथा ईश्वरके बीचका आकर्षण स्वाभाविक है और आत्मा-परमात्माकी एकता प्राकृतिक है, इससे ऐसी मांगोंकी आवश्यकता नहीं है। फिर अपना कल्याण किसमें है? यह हमारे अपेक्षा सर्वशक्तिमान परमकृपालु ईश्वर बहुत अच्छी तरह समझ सकता है। इससे अपने इच्छानुसार कोई भी वस्तु उससे मांगनेकी आवश्यकता नहीं है, इतनाही नहीं उससे तो कोई वस्तु मांगनाही न चाहिये। हमारे पवित्र शास्त्रमें पूर्णस्वरूप प्रभुने कहा है कि उत्तम भक्त वही है जो मेरी निष्काम भक्ति रखता है, और साधारण भक्त वह है जो मेरी सकाम भक्ति रखता है। इस प्रकार सकाम भक्तिका मूल्य बहुतही कम है, किन्तु मनुष्यका मन चंचल होनेसे वह पल पलपर अपनी निर्बलता देखता है और अनंत ब्रह्माण्डके नाथकी कृपामें वह सर्वस्व देखता है, इतनाही नहीं, उसकी आत्मा ईश्वरके मार्गमें आगे बढनेकी बहुत जल्दी करती है और उसकी बुद्धि यह समझाती है कि तुम्हारी अमुक इच्छानुसार कार्य हो तो तुम शीघ्रतासे आगे बढ सकते हो, और बहुत सुखी हो सकोगे। ऐसे संयोगोंसे स्वभावतः ईश्वरसे जीवको कुछ मांगनेकी इच्छा हो जाती है और बहुत से भक्तभी अपनी इच्छाको संवरण नहीं कर सकते। इससे बहुतसे देशोंमें, जातियों में तथा धर्मों में परमकृपालु प्रभुसे देशकालानुसार अपने सुखके लिए कोई न कोई वस्तु मांगनेकी रीति है। इस

माँगको शास्त्रमें प्रार्थना कहते हैं। कुछ लोग अपनी प्रार्थनामें धनधान्य मांगते हैं, कोई पशु मांगता है, कोई लम्बी आयुष्य, कोई अच्छे देशमें जन्म लेना तो कोई अपने दुश्मनोंका नाश मांगता है, कोई शरीरमें बल चाहता है तो कोई लड़का मांगता है, कोई राज्य मांगता है तो कोई परियोंकी इच्छा रखता है; कोई ऋद्धिसिद्धि तो कोई देवत्व माँगता है, कोई पानी तो कोई टाढ़से रक्षा चाहता है, कोई सब प्रकारके दुःखोंसे बचना चाहता है तो कोई मर गये हुए संबन्धियोंका कल्याण चाहता है, कोई पापसे बचना, कोई स्वर्ग, तो कोई मोक्ष चाहता है, कोई जगतका कल्याण तो कोई ईश्वरका दर्शन चाहता है; कोई कहता है कि हे ईश्वर! मुझे अपनी शरणमें रख और कोई कहता है, हे मंगलकारी! तुझे नमस्कार है। इस प्रकार भिन्न भिन्न जाति व धर्मोंमें भिन्न-भिन्न प्रकारसे प्रार्थनायें होती हैं, जबकि हमारे सनातन उत्तम आर्यधर्मके महान ऋषियोंकी पवित्र प्रार्थना केवल यही थी कि हे सर्वशक्तिमान परमकृपालु परमेश्वर! मुझे सद्बुद्धि दे। दुनिया भरमें श्रेष्ठ, प्राचीन तथा पवित्र पूजनीय गायत्री महामन्त्रके द्वारा प्रातःमध्याह्न तथा संध्याकाल इन तीनों सन्ध्याके समय पवित्र ऋषिगण सच्चिदानन्द परमात्मासे जीवनपर्यन्त सर्वदा यही माँगते थे कि हे ईश्वर! हमें सद्बुद्धि दे! क्योंकि यदि बुद्धि शुद्ध रहेगी तभी प्रकृतिका भेद समझमें आ सकेगा, तभी जीवनमें मिठास आसकेगी और तभी मनुष्यावतारकी सार्थकता मालूम हो बुद्धिके शुद्ध होनेसे ही विकारोंसे बच सकेंगे ईश्वरका स्वरूप समझमें आसकेगा, इतनाही द्धि साफ़ रहती है उसका जगत मित्र बनजाता दासी बन जाती है और प्रभुका प्यारा बन जाता

मे लक्ष्मी अपने आपही उसके पैरपर आकर लोटने
हैं, क्योंकि जो कुछ अच्छा है वह सब सद्बुद्धिसे
है, इससे जिसकी बुद्धि साफ होती है उसे किसी बातकी
नहीं रहती। इस दुनियाकी सब वस्तुएँ उसके
हो जाती हैं, इतनाही नहीं वह स्वर्गके रहस्यको भी
सकता है और उसपर उसका अधिकार भी चल
है, क्योंकि ज्ञान एक महाशक्ति है, ज्ञान ईश्वरका
नाम है और ज्ञानही सच्चिदानन्दका स्वरूप है। इससे
! याद रखो कि ज्ञान बिना ईश्वरकी मायाका पार नहीं
जा सकता ज्ञान बिना सुखी नहीं हुआ जा सकता और न
बिना धर्म जाना जा सकता है और न उसका पालन
जा सकता है। ज्ञान बिना ईश्वरकी कृपा प्राप्त नहीं हो
, ज्ञान बिना दुस्तर संसार-सागर पार नहीं किया जा
। और सद्बुद्धि बिना ज्ञान नहीं मिल सकता, इससे यदि
कर धर्मका पालन करना हो, इस संसारमेंही स्वर्ग
हो और आनन्द सागरका प्यारा बनकर अनेक आनन्द
हो तो सदा जब कभी समय मिले प्राचीन महान
ओंकी पवित्र प्रार्थना करते रहो और कहो कि हे सर्व
मान् परमात्मा मुझे सद्बुद्धि दे।

२३

ो सेवा करनेवाला भूखा नहीं मरता, इससे विश्वास रखकर
दृढ़तासे भक्तिमें लगे रहो

हम देखते हैं कि जमीनकी सेवा करनेवालेको अर्थात्

जमीनको खोदकर पानी आदि देनेवालेको जमीन जीविका देती है, वृक्षकी सेवा करनेवालेको वृक्ष फलफूल देता है, पत्थरकी सेवा करनेवालेको पत्थर रोटी देता है, मिट्टीके सेवकको उसीमेंसे रोटी मिलती है, अग्निके पूजकको उसीसे निर्वाह होता है, लोहखंडकी सेवा करनेवाले भी आबाद रहते हैं, हथियारोंकी सेवा करनेवाले सबपर आज्ञा चलाते हैं, पुस्तकोंकी सेवा करनेवाले सबपर अपना श्रेष्ठत्व बनाये रखते हैं और कूआं, तालाब, नहर, समुद्र आदि पानीकी सेवा करनेवाले भी लहर उड़ाया करते हैं। इसप्रकार जड़ वस्तुकी सेवा करनेवाले जब मौज उड़ाया करते हैं तब गाय, भैंस, हाथी-घोड़ा, बुलबुल लाल आदि पशु पक्षियोंकी सेवा करने वालोंको कितना आनन्द होता होगा? और प्रभुके बालक जो मनुष्य हैं उनके सेवकोंको कितना लाभ होता होगा? इसपर विचार तो करो! उसमेंभी भलेमानस, श्रीमंत, खानदान अमीर-उमरा, विद्वान देश-पूजकों, ज्ञानी साधु, ईश्वरपर अपने हुए भक्तगण तथा बड़े मानवाले उदार महाराजाओंकी सेवा करनेसे कितना लाभ होता होगा? यह सब हम लोगोंसे छिपा नहीं है। हमने देखा है कि ऐसे भाग्यशालिओंकी सेवा करनेसे उनके साथ सेवा करनेवालेका भाग्यभी सुधरता जाता है जिसप्रकार उनकी सेवा करनेसे सेवकका दरजा बढ़ता है मान बढ़ता है, वैभव तथा बुद्धि बढ़ती है, अनुभव बढ़ता है, जीवन और भी उपयोगी बन सकता है, उनकी सेवा द्वारा दूसरोंकी सेवा की जा सकती है, दुःखके समय उनकी सहायता मिलनेकी आशा रहती है, आफतके समय वे मदद करते हैं लाचारीके समय पेन्शन मिलती है, और उनकी सेवाके द्वारा और भी बहुतसे कार्य होते हैं जिससे बालकोंका भविष्य

सुधरता है। भाइयो! विचार तो करो कि जब जड़ वस्तुओंकी सेवा करनेमें तुमसे जीविका मिलती है, पशुपक्षियोंकी सेवा करनेसे आनन्द मिलता है और भाग्यशाली मनुष्योंकी सेवा करनेसे बहुत लाभ होते हैं तब जो सूर्यचन्द्रका बनाने वाला, आकाशके ग्रहोंको गति देनेवाला, पृथ्वीके सदृश अनंत तारागणके साथ खेलनेवाला, अग्निको गर्मी देनेवाला, जीवोंका बनानेवाला, प्राणियोंको जीवन देनेवाला है एवं जो ज्ञानका महासागर, बुद्धिका दाता, सौन्दर्यका स्वामी, सब प्रकारके ऐश्वर्यका मालिक है, जो देवोंका देव है, ऋद्धि-सिद्धि जिनकी दासियां हैं, लक्ष्मीजी जिनके चरणोंमें लोटती हैं, जो सर्वव्यापक है, सब कुछ जाननेवाला है, जन्म-मरण-रहित है, जिसका आदि-अंत नहीं है और जो सच्चिदानन्दरूप है उस परम कृपालु महान परमात्माकी सेवा करनेसे कितना अधिक लाभ होगा? और कितना कल्याण होगा, इसका तो ज़रा ख्याल करो! अरे ज़रा विचार तो करो कि इसकी नौकरी करना कैसे व्यर्थ जायगी? कभी व्यर्थ न जायगी, इसपर विश्वास रखो क्योंकि इनके यहाँ कमी किस बातकी है? भाइयो, उसके यहाँ किसी बातकी भी कमी नहीं है। हमें सुखकी जिन जिन वस्तुओंकी आवश्यकता है उन सबसे उसका भंडार भरा हुआ है। केवल सत्य वस्तु समझकर हम उसकी सेवा नहीं करते, यह हमारे सेवाकी ही कमी है। यदि उसे स्वयं अर्पण होकर जीवन बितावें, जीवनका सब शुभ काम उसके लिएही करें, उसकी महिमा बढ़ानेके लिए सर्वदा उसका गुण-गान किया करें, उसके आनन्दस्वरूपका जगतमें अलौकिक ज्ञान फैलानेके लिए शास्त्रके सच्चे सिद्धान्तोंको समझकर उसके अनुसार चलें, दूसरे भी वैसाही करें, इसका प्रयत्न करें,

स्वाद करके और सच्ची झूठी डींगे हांककर भोलेभाले र्गोंको फंसानेके लिए तथा उन्हें अपने दांवपेंचमें लानेके तए बहुत उद्यम पुरुष मचाया करता था तथा अपनी बड़ाई गानेके लिए बड़ी बड़ी बातें किया करता था। इस मनुष्यने ालही बातमें एक उपदेशक साधुसे कहा कि तुम दूसरे धर्मों- ी बातें भलेही करो, किन्तु हमारे जैसा उच्च धर्म दुनियाभरमें ौर कहीं नहीं मिलेगा। कैसा उत्तम इसका सिद्धांत है! यदि ोई इसके एक भाग सिद्धांतका भी ठीकसे पालन करे तो सका बेड़ा पार हो जाय। तुम दूसरे महात्माओंका बखान रते हो, किन्तु हमारे धर्मके प्रचारक जो मूल पुरुष थे उनकी ात क्या तुम जानते हो! उन्होंने कितना दुःख भोगा था और दुनियाभरमें भ्रमण करके सब धर्मके पण्डितोंको हराकर कैसी दिग्विजय प्राप्त की थी, इसे क्या तुम जानते हो? सुनो तो आश्चर्यित हो जाओ! उनका ऐसा प्रताप है कि अबतक हजारों मनुष्योंकी उनके नामसे जीविका चलती है। महाराज! आपको मेरे धर्मकी पूरी खबर नहीं है, तब क्या बात करूं? सच पूछो तो हमारे गुरुका मंत्र बड़ाही उच्च है, यह तुरतही चमत्कार दिखाता है। पहले मैं नहीं मानता था किन्तु दो वर्ष हुए एक घटना ऐसी घटी जिससे मुझे मानना पड़ा। जीवन पर्यंत हो जाय तो भी न हो, ऐसा महाकठिन कार्य इस मंत्रके बलसे एक मनुष्यने तीन दिनमें कर दिखाया। यह हरद्वारमें मेरे बापके चाचाकी आंखों देखी बात है। इससे मुझे मालूम हुआ कि मेरे धर्मके समान अच्छा धर्म दुनियामें दूसरा कोई नहीं है।

यह सुनकर उस साधुने कहा—यह सब बात सत्य है, यह धर्म टकसालके सोनाके समान, इसका सिद्धान्त रामबाण

ता है कि अंतःकरणकी आज्ञानुसार काम करो, किन्तु
ज तक क्या तुमने कभी किसी ओर देखा भी है ? कभी भी
नर घुसकर हृदयकी आवाज़को सुना है ? और एक बार भी
के कथनानुसार कार्य किया है ? कहो नहीं। तब तुम्हारा
ं तुम्हारे किस कामका ? तुम्हारे धर्ममें कहा है कि गरीबोंको
न दो, किन्तु तू देखता है कि मेरे जेबमें पैसा है, पेटीमें
या है, थोड़े समयमें और भी रुपया मिलनेकी तुम्हारे मनमें
शा है और तुम्हारा अन्तःकरण कहता है कि इन्हें मत;
ुके लिए गरीबोंको दो प्रभु तुम्हें भूल न जायगा। इसके
चात् तू सामने लाचारोंको देखता है, और वे तुम्हारे घरके
नर आकर अपनी गरीबीको बताकर तुम्हारी दयाकी
र्थना करते हैं, किन्तु तू उन्हें कैसा दुत्कार कर, कैसा निराश
रके पीछे लौटा देता है ? इस तो विचार ! धर्म कहता है कि
र्मशास्त्रका अभ्यास करो; ओंमसे तो धर्मकी बात करते बड़ा
च्छा लगता है किन्तु मनमें कहता है कि तेरे सात पीढ़ीमें
ं किसीने धर्मशास्त्रका अभ्यास किया है ? धर्म कहता है कि
नता रखो, किन्तु दीनता क्या है, इसे भी कभी समझनेकी
गिरशी की है ? अभिमानके अतिरिक्त और भी कुछ समझा है ?
र्म कहता है कि ईश्वरपर विश्वास रखो तथा भगवदाश्रयका
ल रखो, किन्तु हृदयपर हाथ रखकर कह कि तुझपर विश्वासका
हीं छींटा भी पड़ा है ? तुम्हारा धर्म कहता है कि अपनी
च्छाका त्याग करके भगवद् इच्छाके अधीन हो जाओ, किन्तु
भी भी क्या तुमने इसका पालन किया है ? धर्म कहता है
क ईश्वरका उपकार मानो, किन्तु उपकार मानना तो दूर
रा, उसके बदलेमें ईश्वरने मुझे लड़का, धन, अधिकार आदि
हीं दिए। कहकर प्रभुसे फरियाद करता है, इसपरतो ज़रा विचार

दिखानेवाले ये दिवस हैं, उस आनन्दका आत्माको पुनः दर्शन करानेवाले ये दिन हैं और मूलय स्वरूपका रास्ता दिखानेवाले ये दिन हैं, इससे इसे धर्मका अथवा बड़ा दिन कहा जाता है।

भाइयो! जो खास आनन्दके दिन हैं, जिस दिन हमारे प्राचीन पूर्वजोंने बहुत बड़े बड़े काम किये हैं, जिन दिनोंको पवित्र धर्मशास्त्रोंने उत्तम माना है, जिन दिवसोंमें महात्माओंकी भली अमरका खास जादू भरा हुआ है और जिस दिन ऋतुके फेरफार, सृष्टि-सौंदर्यके चमत्कार तथा संसारकी रीतिके अनुसार मनुष्योंको अनेकों प्रकारकी व्यावहारिक अनुकूलता मिलती हैं, इतना ही नहीं, जिस दिन इस प्रकारके बहुतसे संयोगोंके मिलनेसे मनुष्योंकी आंतरवृत्ति जाग उठती है, उस पवित्र धर्मके दिवसोंको हमें किस प्रकार काममें लाना चाहिये? उन दिवसोंका किस प्रकार हमें लाभ उठाना चाहिये? वे आनन्दके दिन हमारी आत्माको किस प्रकारका आनन्द देते हैं? इसका तो ज़रा विचार करो! उस दिन केवल लड्डू मालपूआ खानेसे क्या आत्माको सच्चा आनन्द मिल जायगा? या दूध मलाई, अथवा मोहनथाल उड़ानेसे आत्मा प्रसन्न हो जायगी? व्यावहारिक रीत्यानुसार लोक-लाजमें लड़की दामादको, बहन बहनोईको या भाई भतीजेको जिमानेसे क्या आत्माको अपने असल स्वरूपका आनन्द मिल जायगा? या दिवालीके दिन दीवा बालकर पटाखा छोड़नेसे, होलीमें रंग छोड़नेसे, जन्माष्टमीको उपवास करनेसे, रामनवमी के दिन खूब फलाहार करके रामलीलाका नाटक देखनेसे हमारी आत्माको आनन्द मिलेगा? यही क्या हमारे उत्सवोंकी खूबी है? शास्त्रोंका मतलब एवं महात्माओंका उपदेश क्या यही है? क्या इतनेसे ही बड़े दिनका बड़प्पन, आनन्दके

दिनोंका आनन्द और धर्मके दिनोंका धर्म आ गया क्या!
नहीं, भाइयो! ऐसा नहीं है। त्योहारोंके दिन आनन्द लेनेके
लिए हम लड्डू लप्सी खाते हैं, पटाखा छोड़ते हैं, अबीर उड़ाते
हैं, छप्पन प्रकारका फलाहार करके भूखे रहनेका ढोंग रच
हैं और पैसके दो घाले झज्झरका या सतुआका दान करते हैं
इन सबोंसे आत्माके मूलस्वरूपको आनन्द नहीं मिलता और
न इससे धर्मका जो हेतु है वही सिद्ध होता है, क्योंकि खाने
पीनेका तथा रागरंगका जो सुख है वह इन्द्रियोंका है और
याद रखो कि इन्द्रियोंसे मन अलग तथा श्रेष्ठ है, मनसे बुद्धि
अलग है तथा श्रेष्ठ है और बुद्धिसे आत्मा अलग है तथा
श्रेष्ठ है, इससे खानेपीने, गानेबजाने, नाचनेकूदने आदिसे
इन्द्रियोंको जो सुख होता है, उसका आत्मासे कुछभी संबंध
नहीं ... क्योंकि आत्मा इससे बहुत दूर रहती है। खानापीना
देहध... है, यह अन्नमय कोषका काम है और ज्ञानीलोग
कहते ... कि अन्नमय कोषके ऊपर प्राणमय कोष है, उसपर
मनोमय कोष है, उसके ऊपर विज्ञानमय कोष है, उसके ऊपर
आनन्दमय कोष है और इन पाँचों पर्दोंके बाहर आत्मा है,
इससे खाने पीनेके बाहरी क्षणिक आनन्दसे आत्माको आनन्द
नहीं हो सकता क्योंकि आत्मा विकारोंसे रहित है, अजर-अमर
है और खायेपीये बिनाभी जीवित रह सकती है, उसे लड्डू
लप्सी खिलानेसे कैसे आनन्द मिल सकता है? और जब
तक उसे आनन्द नहीं मिलता तब तक हमारा आनन्द किस
कामका है? और त्योहारोंका बड़प्पन ही किस कामका है!
और जब ऐसा होगा तब त्योहारोंकी बलिहारी ही क्या रह
जायगी?, इससे भाइयो! याद रखो जो उत्सवके दिन हैं वे
हमारी आत्माके असली स्वरूपको आनन्द पहुँचानेके दिन

और आत्मा जब परमात्मामय होकर स्वाभाविक आकर्षण द्वारा परमात्माकी ओर आकर्षित हो, तभी परमात्माके संयोगसे परमात्माके आनन्दका प्रवाह आत्मामें आता है और तभी आत्माको सच्चा आनन्द होता है। इसके अतिरिक्त बाहरकी इन्द्रियोंको जो आनन्द है उससे आत्माको कुछ भी आनन्द नहीं होता। इससे यदि दूसरे दिन न हो सके तो न सही, किन्तु त्योहारोंके दिन तो आत्माको अवश्य ही आनन्द पहुँचाना चाहिये। यदि हमसे इतना हो सके तो बहुत है, क्योंकि यदि उस दिनों आनन्द पहुँचाया जा सके तो ऐसे सच्चे आनन्दका असर बहुत दिनों तक रहता है। इतनेमें दूसरा त्योहार आ पहुँचता है, इससे उसे नया आनन्द मिलने लगता है। इस प्रकार धीरे धीरे जीवन में सुधार होता जाता है और आत्माका आनन्द बढ़ता जाता है। जैसे पहाड़पर चढ़ते समय थक जाने-पर थोड़ा आराम लेकर फिरसे ताज़ा बननेके लिए बीच बीचमें विश्राम-स्थान आते हैं वैसे ही व्यवहारकी जंजालोंसे घबड़ा जानेपर विश्राम-लेकर फिरसे ताज़ा बननेके लिए थोड़े थोड़े दिनोंके अन्तरपर त्योहार आते हैं। जैसे रेलगाड़ीको चालू रखनेके लिए थोड़े थोड़े अन्तरपर इंजिनमें पानी लेनेका साधन बना रहता है और जैसे तारको चालू रखनेके लिये बीच बीचमें बैटरीका योग होता है वैसे ही हमारे जीवनको आनन्द-मय रखनेके लिए थोड़े-थोड़े दिनोंके अन्तरपर त्योहारके दिन बने हुए हैं; इससे ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि इन दिनोंमें आत्माको आनन्द मिले। जिस प्रकार बीच-बीचमें पानी न मिलनेसे ट्रेन रुक जाती है और किसी भी बैटरीके खाली होनेपर तारका जाना रुक जाता है वैसेही उत्सवके दिनोंमें यदि आत्माको परमात्माका आनन्द न मिलेगा तो

जीवन दुःखस्वरूप हो जायगा। इससे भाइयो! उत्सव
महा-आनन्दके दिनोंको, पवित्र धर्मके दिनोंको, धीगामस्तीमें
वासनाओंको उत्तेजित करनेमें और विषयोंके गुलाम बननेमें
मत नष्ट कर दो बल्कि ऐसे पवित्र दिनोंमें आत्माके असली
स्वरूपको आनन्द पहुँचानेके लिए कुछ दानधर्म या लाचारोंकी
सहायता करो, किसी दुखीको दिलासा देनेका, अज्ञानीको ज्ञान
देनेका, गिरे हुएको सहारा देनेका, पड़े हुएको उठानेका,
दबे हुएको उबारनेका, किसी सद्विचार रखने लायक वस्तुका
जीर्णोद्धार करनेका तथा अपनी और दूसरोंकी आत्माको
तृप्त व संतुष्ट करके परमात्मामय बनानेका प्रयत्न करो। ऐसा
करनेका नामही बड़ा दिन है। इसीका नाम धर्मका
और इसीका नाम उत्सवका दिन है। केवल अच्छा
भोजन करनाही बड़े दिनकी बड़ाई नहीं है और न इसमें
सार्थकता ही है। इससे भाइयो! यदि धर्मके पवित्र दिन
सार्थक करना हो तो आत्माको परमात्मामय बनाओ! आत्मा
परमात्मामय बनाओ!

२६
भयंकर भूलें

एक डाक्टरने अपने कम्पाउण्डरको दो पत्र दिया। उनमें
लिखा था कि काळू सेठको दस्त बंद होनेकी दवा देना और
रामाको जुलाब आनेकी दवा देना, किन्तु कम्पाउण्डरने उसमें
यह भूल की कि जिसे जुलाबकी आवश्यकता थी उसे तो
दस्त बंद करनेकी दवा दे दी और जिसे दस्त बंद करनेकी दवा
देना था उसे जुलाब दे दिया। पीछे कम्पाउंडरसे डाक्टरने

पूछाकि यह क्या किया ? तब उसने कहाकि साहब ! मुझसे भूल हो गयी। यह कैसी बड़ी भूल है ! इस भूलसे उन मनुष्योंकी क्या हालत हुई होगी, इसे तो सोचो ! ऐसी भूल क्या क्षम्य है। भाइयो ! हमभी ऐसीही भूलें किया करते हैं। जो छोड़ देनेकी वस्तु है उसे पकड़ रखते हैं और जो पकड़ रखनेकी वस्तु है उसे छोड़ देते हैं। इसका परिणाम क्या होगा ? इसका तो विचार करो।

कोई मनुष्य अपने घर जा रहा था। उससे एक दूसरे मनुष्यने अपने संबंधीसे कहलाया कि तुम्हारा बाप प्लेगसे बंबईमें मर गया है। उसका दसवाँ रविवारको अमावस्याके दिन होगा, उस दिन क्रिया कर लेना। इस गाँवमें तार या डाकका प्रबंध नहीं था, इससे गांवकी प्राचीन रीतिके अनुसार एक गाँववालेसे यह संदेसा कहलाया गया था। इसके पश्चात् पन्द्रह बीस दिनके बाद उस मनुष्यने संदेसा कहा। यह सुनकर दूसरे मनुष्यने कहा कि यह तिथितो बीत गई, इतने दिन बाद तुमने क्यों कहा ? तब उस संदेशा लानेवालेने कहा— मुझे ख्याल नहीं रहा, मैं तो भूल गया। भाइयो ! यह कैसी बड़ी भूल थी ! बापका दसवां कहीं पीछे हो सकता है ? उस मनुष्यको समय बीत जानेसे कैसी कड़ी चोट लगी होगी ? किन्तु अफसोस कि हम इससे भी बड़ी भूलें करते हैं। उत्तम मनुष्यावतार प्राचीन धर्म तथा अनुकूल साधन मिलनेपर भी सब कुछ देनेवाले सर्वशक्तिमान महाप्रभुकी भक्ति करनेके बदले ऊपर लिखित कम्पाउण्डरके सदृश कुछका कुछ कर बैठते हैं और भुलक्कड़ मनुष्यके सदृश समय व्यतीत हो जानेपर चेतते हैं, किन्तु यह किस कामका होता है ? बाजी हार जानेपर भूल जाननेसे क्या लाभ ? अर्थात् समस्त जीवन भर

जब कुछ नहीं किया तब मृत्युकालके समय पश्चात्ता
क्या लाभ ? इससे सावधान हो जाओ कि ऐसी मय
न होने पाये।

२७

हम यदि मनकी एकाग्रता कर सकें तो स्वर्ग तथा प्रभुक प्राप्त करनेमें कुछ भी वार नहीं है

एक साधु महात्मा घोड़ेपर सवार होकर पासके गांव जा रहे थे। इस समय एक मनुष्य उन्हें रास्तेमें मिला। वह साधुके साथ चलने लगा। अनन्तर वातचीत होनेपर उस मनुष्यने घुड़सवार साधुसे कहा–महाराज! यह घोड़ा तो बड़ा अच्छा है, इसका मूल्य क्या है ? साधुने पूछा कि क्या तुम्हें यह घोड़ा बहुत अच्छा मालूम पड़ता है ? उस मनुष्यने कहा–हाँ। मेरी तो यह इच्छा है कि यदि आपका इसे बेचनेका विचार हो और मूल्य कुछ कम हो तो मैं यह घोड़ा खरीदकर ले जाऊँ। यह सुनकर महाराजने कहा कि सामने पहाड़पर एक गाँव दिखाई पड़ता है, वहाँ पहुँचकर यह घोड़ा तो किसी भले मनुष्यको मुफ्तमें दे दूँगा। यदि तुम्हारी इच्छा हो तो मेरे साथ चलो, वहाँ पहुँचकर मैं तुम्हें दे दूँगा। यह सुनकर वह मनुष्य बड़ा अचम्भित हुआ और वह बोल उठा—अहा! ऐसा सुन्दर घोड़ा उसपर भी मुफ्त! ऐसा मेरा भाग्य कहाँ! हे महाराज! यह बात सत्य है या आप हँसी कर रहे हैं ? महाराजने कहा बेटा! साधुओंको क्या हँसी करना शोभा देता है ? यह बिलकुल सत्य है, क्योंकि मुझे केवल निश्चित स्थानपर पहुँचना भर है, इसके पश्चात्

घोड़ेकी मुझे कुछ आवश्यकता नहीं है, इसलिये मैं इस उपाधिको क्यों रक्खूंगा ! किसे इस घोड़ासे कुछ काम भी सरे ऐसे किसी आवश्यक मनुष्यको दे देनाही अच्छा होगा किन्तु दूं किसे ? यह मैं विचारही कर रहा था कि तुम आ गये और मुझे यह घोड़ा बहुत अच्छाभी लगता है, इसलिये तुम्हींको दे दूंगा यह सुन कर उस मनुष्यने कहा-वाह महाराज, वाह ! धन्य है आपकी उदारता ! साधुओंको तो ऐसा निःस्पृह होनाही चाहिये। किन्तु महाराज ! क्या गांवमें पहुंचतेही आप इसे मुझको दे देंगे।

महाराजने कहा-इसमें सन्देह ही क्या है ? मुझे रुपयेकी कुछ आवश्यकता नहीं है। केवल शर्त इतनीही है कि यदि तुम्हें यह घोड़ा लेनेकी इच्छा हो तो इसके आगे जिससे कि मैं सुन सकूं "राम राम राम राम" कहते हुए मेरे साथ तुम्हें चलना होगा। यह गांव अभी यहांसे अढ़ाई कोस दूर है। वहां तक यदि इस प्रकार राम राम भजते हुए चलोगे तो घोड़ा तुम्हें दे दूंगा, किन्तु इसके बीचमें यदि और कुछ बोलोगे तो न दूंगा ! यह सुनकर उस मनुष्यने कहा-वा बाप ! यदि ऐसा सुन्दर घोड़ा मिले तो अढ़ाई कोस क्या पचास कोस तक राम राम बोलते हुए चलूं, मैंने तो समझा कि न मालूम क्या शर्त होगी ! राम-राम कहनेमें कौनसा परिश्रम पड़ता है ? यह कौनसी बड़ी बात है ? महाराजने कहा—यदि इस शर्तका तुम पालनकर सकोगे तो घोड़ा तुम्हाराही है।

इसके पश्चात् राम-राम कहता हुआ वह मनुष्य कुछ दूरतक महाराजके साथ गया, इतनेमें उसके मनमें विचार तरंग उठने लगी कि आज शकुन बहुत अच्छा था, जिससे काम हो गया। सैकड़ों रुपयेका घोड़ा मुफ्त मिल जायगा। साधु है तो भला, नहीं तो क्या कोई ऐसे घोड़ा दे सकता है ? अब मैं इसे बांधकर

रहूँगा; किन्तु यह सब कब ? जब तुम मुझमें तन्मय होगे तब ! ऐसी तन्मयता एकाग्रतासे होती है, इससे यदि सच्चा सुख लेना चाहते हो तो जैसे हो तैसे विषयोंमेंसे मनको निकालकर प्रभुमें एकाग्र करनेका प्रयत्न करो ।

२८

भले बनो तथा भला करो, यही धर्मका सार है

एक श्रीमंतने किसी महात्मासे पूछा कि महाराज ! मुझसे जिसका पालन किया जा सके ऐसा कोई छोटा धर्म बताइये, क्योंकि आजकलकी मेरी उपाधि तो आप जानते ही हैं । एक तरफ सभापति बननेके लिए म्युनिसिपैलटीकी सूचना, गाड़ी घोड़ाकी सभा, बाज़ारकी उथल पुथल, संसारमें बड़ा कहानेके लिए खुशामद, शेयर, नोट, हुंडी आदिके लिए शरीरको हिला देनेवाले घड़ी-घड़ीके तार, कुटुम्बमें उठते हुए क्लेश, समय समयपर आ पड़नेवाले मुकदमे, ब्याज, भाड़ा आदि पचा लेनेका लोभ, बड़ी बड़ी रकमोंकी हुंडी सकारनेके लिए घबराहट, श्रीमंताईके कारण आनेवाले खास रोग, तेज़ मिजाजके कारण सूखनेवाला खून, खुशामदियोंका मानपान, कलयोंकी धींगामस्ती, सोनारों तथा दर्जियोंके वादे, स्त्रियोंकी नाज़ुकता तथा उसमें उत्पन्न बीमारियाँ, मौज उड़ानेकी हवा और धनको संचित करनेकी फिक्र आदि आदि झंझटों तथा हाय हायसे बचकर धर्म-पालन करनेके लिए प्राणायाम साधकर तथा नाक पकड़कर मैं एकान्तमें नहीं बैठ सकता। अपनी मान-मर्यादाके अनुसार मैं मन्दिरोंमें जाकर धक्का नहीं खा सकता ।

ल जाकर मोहमें मत फँस जाओ, किसीको दुख मत दो, किसीभी प्रकारकी वहसमें मत पड़े रहो, किसीभी प्रकारका अधर्म मत करो, कर्त्तव्य-पालनमें ढिलाई मत करो, धर्म जानने- आलस्य मत करो, शिक्षा प्राप्त करनेमें पीछे मत रहो, महान श्वरका अलौकिक ज्ञान प्राप्त करो तथा मन, वचन, कर्मसे किसीका ज़रासी बुरा मत चेतो, इस प्रकार व्यवहार करनेका नाम ला बनना है। "भला बनो तथा भला करो" यह सुनकर तुम कहते हो कि इसमें क्या है? किन्तु मुझे बताओ कि इसमेंसे तुम किन-किन बातोंका पालन कर सकते हो? अब "भला करो" का अर्थ क्या है? इसका अर्थ यह है कि अपनी शक्ति र दूसरोंकी सहायता करो, धनसे, शरीरसे, वाणीसे, मनसे बुद्धिसे तथा कर्मसे जिससे भी हो सके किसीभी प्रकारसे बन्धुओंकी सहायता करो, जगतके जीवोंका भला करनेमें सदा निरत रहो, जगतको आगे बढ़ानेके ईश्वरके उद्देशमें सहायता करो, शिक्षाको उत्तेजन दो, दुखियोंका दुख दूर करनेका प्रयत्न करो, गरीबोंकी सहायता करो, रोगियोंकी सेवा करो, निरा- धारोंको आश्रय दो, मनुष्योंको उनकी स्वतंत्रता दिलानेके काममें प्रयत्न करो, प्राचीन गुलामीसे लोगोंको छुड़ाना, राज्य- का कर कम हो, ऐसे कामोंमें सहायता करो, धर्मको विशाल बनानेमें मदद करो, कला-कौशल तथा खेतीबारीको उत्तेजन दो, और सब प्राणियोंकी आत्मिक शक्ति विकसित हो तथा जगतमें ईश्वरका ऐश्वर्य बढ़े, इसका प्रयत्न करो, इसीका नाम भला करना है। यह मनुष्यमात्रका सामान्य धर्म है और यही धर्मका सार तथा कुंजी है। इतनाही नहीं बल्कि इस जमानेके तुम्हारे जैसे झंझटोंवाले श्रीमंतोंके लिए यही सबसे सरल धर्म है, इससे बाबू साहब! भला बनो तथा भला करो, इससे

आगेके विशेष धर्मका मार्ग खुल जायगा और समय आनेपर परमकृपालु परमात्मा तुम्हें तार देगा। इससे भाइयो! भले बनो तथा भला करो।

२६

सब धर्मोंका तत्व यही है कि पाप न हो, उससे बचो और ईश्वरकी स्तुति किया करो

एक भक्तने अपने गुरुसे कहा कि महाराजजी! आपकी कृपासे अब कुछ सुधरा हूं। यद्यपि जैसा चाहिये वैसा अच्छा नहीं हुआ है तौ भी आपके सत्संगसे अब बड़े बड़े पापोंसे बच सकता हूँ। अब मैं चोरी करता नहीं, झूठ बोलता नहीं, व्यभिचारकी इच्छा रखता नहीं, हिंसा करता नहीं, किसी प्रकारका छल-प्रपंच करता नहीं, किसी-किसी समय कुछ अभिमान आ जाता है, उसे भी अंकुशमें रखनेका प्रयत्न करता हूँ, किसीको निष्कारण दुख देता नहीं, किसीकी हँसी उड़ाता नहीं, किसीपर निरर्थक क्रोध करता नहीं, किसीके साथ अब शत्रुता करता नहीं और हो सकता है तो थोड़ा बहुत दान दे दिया करता हूँ। इससे थोड़ा आनन्द मिलता है, व्याधि कम रहती है, लोग मान देते हैं, धर्मके विषयोंमें और भी दिलचस्पी लेनेका मन करता है और मन जरा शांत रहता है, परंतु जैसा चाहिये, वैसा आत्मिक आनन्द अभी भी मुझे मिला नहीं। इससे प्रभुके मार्गमें आगे बढ़नेके लिए और क्या करना चाहिये, उसे बताइये।

यह सुनकर श्रीमद्गुरु महाराजने कहा—भाई ! इस प्रकारकी नीतिका पालन करना तथा भलाई करना तो मनुष्यमात्रका सामान्य धर्म है, किन्तु आजकलके मोह भरे हुए रागरंगके कटाक्षोंके समयमें इतना भी पालन करना और स्वार्थी बन गये हुए लोगोंके साथ ऐसी भलाई करना, कुछ कम नहीं है। यह बड़ी ही खूबीकी बात है, ईश्वरके कृपापात्र भाग्यशाली मनुष्योंसे ही यह हो सकता है, किन्तु याद रखो कि यह तो केवल प्रारंभिक सार्वजनिक नीतिके नियम हैं। इससे कुछ भक्तोंकी हानि नहीं होती। प्रभुके मार्गमें चलनेकी इच्छा रखने वाले, स्वर्गसुख भोगनेवाले और मोक्षके अधिकारी भक्तोंसे ऐसी सामान्य भीतिमें रहा नहीं जा सकता। प्रभुके कृपापात्र भक्तोंको विशेष धर्मका पालन करना पड़ता है। जिस प्रकार दुनियाके सब मनुष्योंके लिए "भला बना तथा भला करो" सामान्य धर्म है, उसी प्रकार "पहरा दो और स्तुति करो" यह संसार भरके भक्तोंका विशेष धर्म है। पहरा देनेका मतलब यह है कि हृदयमें किसी भी प्रकारकी पापवासना घुसने न पाये इसका ध्यान रखो। ध्यान रखो कि किसी भी प्रकारके तुच्छ विषय मनमें घुसने न पायें और हृदयमें किसी भी प्रकारके विकार उत्पन्न न होने पायें, इसका नाम पहरा देना है। तुम यद्यपि बाहरकी व्यावहारिक नीतिका पालन करते हो, तो भी मालूम पड़ता है कि इस नीतिका पालन करनेमें तुम्हें परिश्रम पड़ता है। मनमें लगता है कि ऐसी भलाई करके तुम कुछ विशेषता कर रहे हो, ऐसे नियमोंका पालन करते समय तुम्हारा मन कभी कभी तुच्छ विषयोंमें पड़ जाता होगा। तथापि इस नीतिके अनुसार तुम अपने मनको पीछे खींचते होगे, जिससे इन विचारोंके अनुसार चलते होगे तो भी प्रसंग पड़नेपर मनमें

निर्बल विचार आही जाते होंगे। इससे प्रसंग पडनेपर बाहरसे घुसनेवाले तथा हृदयमें उत्पन्न होनेवाले विचारोंको रोकनेका नामही पहरा देना है।

तुम अब चोरी नहीं करते किन्तु जब स्वार्थकी या लोभकी बात आती है तो उसीमें मनको रमाये रहते हो। तुम व्यभिचार नहीं करते किन्तु जब शृङ्गाररसकी बातें आती हैं तब उसमें तुम्हें आनन्द मिलता है। तुम अब बिना कारण झूठ नहीं बोलते, किन्तु जब हँसी या परिश्रमका प्रसंग आता है तब मन जरा ढीला पड़ जाता है कि नहीं? और किसीको नुकसान न पहुंचानेवाला साधारण झूठ बोलनेकी युक्ति सोचते हो कि नहीं? तुम सीधे किसीके साथ हँसी न करते होगे, किन्तु जब कभी हँसने योग्य मनुष्यकी बात चलती है तब तुम्हारे मुंहपर मुस्कुराहट आ जाती है कि नहीं? तुम किसीसे ईर्षा न करते होगे किन्तु जब किसी मनुष्यके जिसके सम्बन्धमें तुम्हारे अच्छे विचार नहीं हैं, विरुद्धमें कोई बात होती है तो बीचमें सहारा देते हो कि नहीं? तुम्हारे मार्गमें अड़चन न पड़नेपर जबतक तुम्हारी गाडी सीधे चलती जायगी तबतक तुम क्रोध भी नहीं करोगे, किन्तु कभी किसी प्रकार अड़चन आ पड़नेपर वश अपने मनको वशमें रख सकते हो कि नहीं, और अब यथासाध्य किसीके साथ लड़ाई झगड़ा न करते होगे, किन्तु पहले जिनके साथ शत्रुता हो गयी है तथा आप दादाके समयसे जिसके साथ वैर चला आता है, उनको मने क्षमाकर दिया है? नहीं। इस प्रकार प्रत्येक विषयों ? समता रख सकनेका नाम "पहरा देना" है और यह परम धर्म है।

पश्चात् सबसे उत्तम और सबसे मुख्य धर्म ईश्वरही

स्तुति करना है; क्योंकि स्तुतिसे हृदयकी शुद्धि होती है, पवित्रता आती है, हृदयमें नया बल आता है, पापवासनाका नाश होता है, स्वाभाविक ज्ञानका उदय होता है, और स्तुतिसे मनुष्य ईश्वरके पास जा सकता है। इससे स्तुति करना भक्तोंका मुख्य धर्म है। स्तुतिमें नवीनता, धीरता, मनकी शांति, आकर्षण, और एकाग्रता है। स्तुतिमें एक प्रकारकी समाधि, मानसिक आनन्द, हृदयको दिलासा, आत्मिक बल है और स्तुतिमें महाशक्तिके साथही साथ तार लगा रहता है इससे शिव ब्रह्मादिक भी परमकृपालु परमात्माकी स्तुति किया करते हैं, तब सर्वशक्तिमान शांतिदाता, आनन्दस्वरूप मोक्षदाता महान ईश्वरकी यदि भक्तगण स्तुति किया करते हैं तो इसमें नवीनता ही क्या है?

भाइयो! इस प्रकार अपने हृदयपर "पहरा देना" और "स्तुति करना" भक्तोंका मुख्य धर्म है, और यह दुनियाके सब धर्मोंका सत्य तत्त्व है, इससे हे प्यारे भक्तों! अपने पवित्र अंतःकरणपर "पहरा दो" और ईश्वरकी "स्तुति करो" महान् ईश्वरकी "स्तुति करो"।

३०

हमारे पाससे कोई भी मनुष्य किसी भी प्रकारका बुरा दृष्टान्त सीखले, यह महापाप है

हमारे पवित्र शास्त्रोंके द्वारा प्रभु कहते हैं कि इस दुनियामें सब दानोंसे ज्ञान दान बड़ा है। दुनिया भरका दान देनेकी अपेक्षा पापमें फंसे हुए जीवोंको ईश्वरका ज्ञान कराकर पापसे

य, तथा मेटोंसे ऊपर चढ़ता है; इससे हमारी चालचलनसे, गारे विचारोंसे एवं दृष्टांतोंसे दूसरे न बिगड़े, इसका प्रयत्न रना चाहिये।

हम जानते हैं कि छोटे पत्रो बड़ोंकी चाल चलनपर ध्यान रते हैं और उन्हींका अनुकरण करनेका प्रयत्न करते हैं और मरे साधारण लोग जिस प्रकार बड़े लोग आचरण कर गये सा ही व्यवहार करनेका प्रयत्न करते हैं, इससे हमसे कोई ी मनुष्य किसी भी प्रकारकी बुरी बात न सीखे, इसका बको बड़ा ध्यान रखना चाहिये।

हमारी चाल चलनका दूसरोंपर क्या असर पड़ता है और मारी भूलोंसे दूसरे निर्दोष मनुष्य किस प्रकार बिगड़ते हैं ह जाननेकी सबको बड़ी आवश्यकता है, इससे कुछ दृष्टान्त दिये जाते हैं। जैसेः—

मा बाप अपने लड़कोंको या नौकरोंको गाली देते हों तो से देखकर दूसरे लड़के भी गाली देना सीखते हैं।

आजकलकी स्त्रियाँ खूब फैन्सी कपड़ा पहनती हैं जिसे देखकर छोटी बालिकायें भी वैसा ही पहनना सीखती हैं और दूसरी गरीब जातिकी स्त्रियोंका भी वैसा ही कपड़ा पहननेका मन चलता है।

धर्मके विषय में गुरु यदि दिल्लगी दे तो इसे देखकर चेला भी वैसा ही करने लग जाता है और राजाके सब दुर्गुण सबदा प्रजामें आते हैं, इससे कोई भी मनुष्य हमारा किसी प्रकारका कर्म देखकर फिसल न जाय, इस बातका ध्यान रखो।

(१) जिसे गानेका शौक न हो उसे व्यर्थ गाना सिखाना महापाप है।

[ज]ाता है। धर्म-पालनसे कितना लाभ होता है और अधर्मसे [क]ितनी हानि, नरकके दुःख कैसे भयङ्कर हैं, मोक्षका आनन्द [कै]सा अलौकिक है, जीवन कैसा क्षण-भंगुर है, संसारके सुख [कै]से क्षणिक हैं, प्रभुके लिए भक्तोंने कैसे कैसे कष्ट सहन किये [हैं], सत्य वस्तु क्या है और किस प्रकार जीवन बितानेसे कल्याण [हो] सकता है—यह सब समझना तथा उसीके अनुसार चलना [ह]ी शास्त्र पढ़नेका हेतु है और इस प्रकार जीवन सुधारकर [आ]त्माका उद्धार हो, यही शास्त्र पढ़नेका फल है, वैसे ही [म]हामंगलकारी, शांतिदाता, अखंड आनन्दस्वरूप, परमकृपालु, [प]रमात्माका गुण गानेसे पाप छूटता है, हृदयमें उत्तमता और [भ]गवद् प्रेम आता है, मायाका मिथ्यापन समझमें आ जाता है और जीवन सुधरता जाता है तथा प्रभुके साथ प्रेम बँधता [ज]ाता है, इससे महात्मागण कह गये हैं कि प्रभुका गुण गाने-वालोंको शास्त्र पढ़नेका फल मिलता है, क्योंकि तीव्र बुद्धिवाले उत्तम संस्कारवाले तथा उत्तम साधनवाले जो होते हैं वे ही शास्त्र पढ़ सकते हैं और तब भी हज़ारमें कोई एक ही शास्त्र पढ़नेका फल, जो कि "जीवको ईश्वरमय करना है" को प्राप्त कर सकता है। बाकी सब, शब्दोंकी मारामारीमें तथा पंडि-ताईकी पोलमें ही रह जाते हैं, किन्तु श्रीहरिका गुण गानेमें ऐसी कोई कठिनता नहीं है। यह तो सबसे सरलता पूर्वक हो सकता है, इससे शास्त्र पढ़नेकी अपेक्षा प्रभुका गुण-गान करना अधिक श्रेष्ठ है, ऐसा शास्त्रमें भी कहा है। इससे भाइयो! महान ईश्वरका गुण-गान करो।

सकता हूं ! मेरी धोती तीन स्थानोंपर फटी हुई है और मैं दूसरी ले नहीं सकता, मेरे बाल बढ़ गये हैं जिससे सिर दर्द करता है किन्तु पन्द्रह दिन तक बनवानेका समय नहीं है। घरका कार्य झाडू बिना चलाता हूं और मेरे बर्तन सब फूट गये । ऐसी हालतमें मैं क्या परमार्थ कर सकता हूं ? और जब मैं कुछ परमार्थ नहीं कर सकता तब मेरा मोक्ष कैसे होगा ? मेरा कल्याण कैसे होगा ? हाय ! मेरा जीवन व्यर्थही जायगा क्या ? ऐसे ऐसे विचारोंसे मैं निराश हो गया, मुझे बड़ा बुरा लगा और अपने अभागे किस्मतके लिए बड़ा दुखभी हुआ, जिससे मैं रो पड़ा। गरीबीके दुखसे नहीं, बल्कि उत्तम मनुष्य-शरीर पानेपर भी मैं कुछ कर नहीं सकता, इससे मुझे रुलाई आगयी। पशुपक्षी और झाडपातसे भी जगतके बहुतसे स्वाभाविक उपकार होते हैं, किन्तु अमूल्य जीवन मिलनेपर भी मुझसे कुछ परमार्थ नहीं बना, तथा कौआ कुत्ताके सदृश पेट भरनेमें ही केवल जीवन चला जा रहा है, यह देखकर मुझे बड़ी वेदना हुई। मुझपर बहुतसे मनुष्योंने बहुत प्रकारका उपकार किया है, किन्तु मैं किसीका कुछभी भला नहीं कर सका हूं, यह देखकर मेरा हृदय भीतरसे कांपने लगा और मेरे मनमें ऐसी इच्छा उत्पन्न हुई कि मुझेभी कुछ परमार्थ करना चाहिये, किन्तु स्थिति तथा समय देखकर और साधनोंके न मिलनेसे बहुत विचार करनेपर भी ध्यानमें कुछ नहीं आया, इससे आपके पास आया हूं कि अब मुझे क्या करना चाहिये ? मैं कुछ कर नहीं सकता जिससे मेरा जीव भीतरसे घबड़ाता है, इससे कोई रास्ता बतानेकी कृपा कीजिये।

यह सुनकर उस साधुने कहा—भाई ! अपनी आत्माका कल्याण करना सबसे बड़ा परमार्थ है, क्योंकि इससे चौरासी

जगतके जीवोंकी सेवा करनेसे हो सकता है। इससे यदि सबसे बड़ा परमार्थ करना हो तो अपनी आत्माका उद्धार करनेका प्रयत्न करो, जिससे चौरासी लाख जीवोंको बचाने-का फल मिलेगा। इससे बढ़कर दूसरा बड़ा परमार्थ मैं जानता नहीं।

२२

इस संसारके सब सुख स्वप्नवत् है

एक भिखारी था, वह भीख माँगते माँगते एक धनीके पास पहुँचा और वहाँ कुछ मिलनेकी आशासे गलीके कोनेमें बैठ गया। इस कोनेसे सेठका घर दिखायी पड़ता था जिससे वह भीतरका सब रीति-रिवाज देखने लगा, क्योंकि वह भिखारी मारवाड़के रेगिस्तानका रहने वाला था। उसने बंबईके सेठोंके घरके वैभवको कभी देखा नहीं था, इससे यह देख कर उसे बड़ी नवीनता लगती थी। इससे जहाँ वह भिक्षा माँगने गया था, वहाँ उस सेठके घरको ध्यानपूर्वक देखने लगा। इस समय उसने देखा कि नौकर अपने अपने काममें दौड़-धूप कर रहे हैं, सेठानी मसहरी पर बैठी हुई उन्हें धमका रही है, सुन्दर लड़के भड़कदार कपड़े पहनकर पासके बगीचामें खेल रहे हैं, सेठसे मिलनेके लिए लोग आये हुए थे जो हालमें बैठे हुए हैं। थोड़ी देरमें रबरटायरकी फैशनेबुल जोड़ीमें सेठ आ पहुँचे। सेठको देखकर सब लोग खड़े हो गये एकने आकर सेठकी छड़ी पकड़ ली, दूसरा अंगरखा उतारनेमें सहायता करने लगा। अंगरखा रखकर वह नौकर बूट उतारने

यह एक बड़ा सेठ बन गया है। गरीब लोग अपनी लाचारी दिखानेके लिए उसके पास आते हैं, जिसके उत्तरमें वह कहता है जाओ यहांसे जाओ, तुम्हारे बाप क्या यहां धरोहर रख गये हैं? तुम गरीब हो तो मैं क्या करूँ? अपने किस्मतको रोको। ऐसे ऐसे ढोंगी तो हमारे पास हजारों आया करते हैं। तुम व्यर्थ माथापची मत करो। मैं एक कौडी भी न दूंगा, मुझे तंग मत करो; नहीं तो मेरा मिजाज बिगड़ जायगा तो तुम्हें कष्ट होगा। मैं तुमसे साफ़ कहता हूँ कि इस प्रकारका चंदा माँगनेके लिए मेरे पास कभी मत आना। चंदा माँगने वालेने कहा—सेठ! तुम्हारे ऊपर ईश्वरकी कृपा है, इससे सब आते हैं, नहीं तो कोई पूछता तक नहीं। दुनियांमें तो और भी करोड़ों मनुष्य हैं। उनके यहां कोई क्यों नहीं जाता? सेठ साहब! जो भाग्यवान होते हैं उन्हींके यहां भिखारी आते हैं, इससे इसमें कुछ भर दीजिये, नहीं तो चाहे दो चार लात मार दीजिये, किन्तु मैं खाली जानेवाला नहीं हूं। स्वप्नवाले सेठने कहा-मैं कृपा रूपा कुछ जानता नहीं। लोहू पानी हो जाता है तब धन मिलता है। मैंने तुम्हारे लिए कुछ अवतार नहीं लिया है। तुम्हारे मर जानेसे ही क्या होगा? किन्तु मैं इस समय एक पाई भी न दूंगा। जहां जाओ वहीं सुनायी पड़ता है कि दो, दो, किन्तु दूं कहांसे? तुम सब मेरा खून चूसनेके लिए पैदा हुए हो कि और कुछभी धंधा रोज़गार है? जाओ, अपना मुंह मुझे मत दिखाओ। इतना अपमान करके उसने उन्हें निकाल बाहर किया और घरके भीतर चला गया। वहां सेठानीके पास मसहरीपर बैठने गया, तब सेठानीने कहा कि देखते नहीं, लड़का उठ जायगा, ज़रा दूर बैठो। इससे सेठ सेठानीके पाससे उठने लगा, इतनेमें निद्रामें उसने करवट

अनंत ब्रह्माण्डके नायका गुण-गान करनेसे यज्ञ करनेका फल मिलता है

महान् ईश्वरके लिए पवित्र यज्ञकरनेका आदेश शास्त्रमें दिया हुआ है; इससे यज्ञ क्या है और उसका हेतु क्या है? यह हमें समझ लेना चाहिये। महात्मागण कहते हैं कि जिसने हमारे ऊपर अनंत उपकार किया है, ऐसे परमकृपालु महान ईश्वरके लिए हमसे जितना हो सके, बड़ेसे बड़ा त्याग करना चाहिये; इसीका नाम यज्ञ है। यह त्याग धनका हो चाहे मानका हो, इन्द्रियोंका सुख छोड़नेका हो, अथवा मनःसंयम करनेका हो, प्यारीसे प्यारी वस्तु छोड़नेका हो, अथवा सर्वस्व अर्पण करके प्रभुमय होनेका हो, अर्थात् किसी भी प्रकारका बड़ेसे बड़ा त्याग करनेका नाम यज्ञ है। जगतकर्त्ता, जगद्धर्त्ता, जगतका साक्षीरूप, जगतका आश्रयरूप मोक्षदाता पवित्र पिता महान ईश्वरके लिए अपने सुखके उस भागको अर्पण करना चाहिये जो जीवनकी कसौटी हो। ऐसे महायज्ञसे जीवका ईश्वरपर प्रेम बढ़ सकता है; भाई बहनोंका भला हो सकता है, उनका आशीर्वाद मिल सकता है, और इससे यज्ञ करनेवालेके हृदयमें नये बलका संचार होता है; ऐसा महायज्ञ करनेवालोंका पुरुषार्थ बढ़ता है, इससे वे धर्मके मार्गमें जोशसे आगे बढ़ सकते हैं, और ऐसे महायज्ञसे ईश्वरकी भिन्न-भिन्न शक्तियाँ जिन्हें देवता कहते हैं प्रसन्न होती हैं, जिससे यज्ञ करनेवालेका सरलतासे कल्याण हो सकता है। यही सब यज्ञ करनेका कारण व फल है, इससे सबको यथाशक्ति, जो कुछ बन सके, यज्ञ करनेका शास्त्रने आदेश दिया है। इसी प्रकार महामंगल-

तो और कौन करेगा ? तुम्हारे सामने उसकी बिसात ही क्या है ? तुमतो उसे मच्छड़के सदृश मसल डालोगे । सेठ ! देखते क्या हो ! इसका तो हाड़-हाड़ तोल डालो ! यह कुछ भी नहीं कर सकता । तुम्हारे जैसे लोग यदि दब जायँगे तो यह हराम-खोर ऐसाही किया करेगा । इस प्रकार प्रशंसा करके जो किसीसे पाप कराता है उसमें यह भी पापका हिस्सेदार होता है ।

४—चिढ़ाकरः—

किसीको बुरे बुरे नामसे पुकारना । जैसे किसीको राजा कहकर पुकारना, अथवा अपने प्यारे मित्रोंसे कहनाकि जाओ, जाओ, तुम तो पागल हो । तू क्या कुछ कर सकता है ? दुनियामें आबरू कितनी है ? किन्तु तुम्हारे जैसे लोगोंसे कुछ नहीं हो सकता । इस प्रकार चिढ़ाकर पाप करना अथवा किसी विह्वल मस्तिष्क मनुष्यको चिढ़ाकर गाली दिलाना, ऐसा करनेवालोंको पापका भागी होना होता है ।

५—किसीका अपराध छिपाना ।

जैसे—चोरीका माल रखना, चोरको छिपाना, राजद्रोहियोंको भोजन देनेवाला, और अपना लड़का किसी दूसरेकी चीज़ उठा लाया हो तो उसे उठाकर रखनेवाला, इस प्रकार दूसरोंका पाप छिपानेसे स्वयं भी पापका भागी होना पड़ता है।

६—इच्छापूर्वक चुप रहना—

अपने हाथमें दण्ड देनेकी सत्ता होनेपर भी दया करके अपराधियोंको यदि कोई मैजिस्ट्रेट छोड़ दे तो उसे उस अपराधीके पापका भागी होना पड़ता है । मालिकका माल चोरी जाता हो अथवा बिगड़ा जाता हो, उस समय उसे जानते

र भी यह विचार करनाकि इसमें मेरे बापका क्या जाता है ? ने ही चलता है। इन बातोंसे हमें क्या मतलब ? इस प्रकार चकर मालिकको ज़रा भी खबर न करनेसे दूसरेके पापमें स्सेदार होना पड़ता है। इसी प्रकार अपना लड़का किसी सरे लड़केको मार आये उस समय उसे डपटनेके बदले देखा रना, पापका काम है क्योंकि इस प्रकार पापको रोकनेकी क्ति होनेपर भी उसे न रोककर चुप रहना पापको उत्तेजन नेके समान है, इससे ऐसा करनेसे हमें दूसरोंके पापमें साझी-र होना पड़ता है।

७—पापमें भाग लेना:—

जैसे किसीसे कहना, जा फलाने को मार आ, मैं समझ दूँगा। किसी चोरसे कहना कि तू चिन्ता मतकर, तेरा माल मैं बाज़ार में बेच आऊँगा, अथवा किसीसे कहनाकि इसमें कौनसी बड़ी बात है ? फरियादी खड़ा करो; मैं तुम्हारी तरफसे साक्षी दूँगा। इस प्रकार दूसरेके पापमें भाग रखना महापाप है।

८—बुरा जानते हुए भी उसका बचाव करना—

जैसे जानते हुए भी कि यह मुकदमा झूठा है, उसकी पैरवी करना, यह दूसरेके पापमें हिस्सा लेनेके समान है। अपने किसी संबंधीने कोई अपराध किया हो, उस समय सच्चा इन्साफ न करना तथा पक्षपात करके अपराधीकी ओरसे खड़ा रहना, दूसरेके पापमें भाग लेनेके समान है और लड़का यदि दूसरेकेसाथ झगड़ा कर आया हो उस समय उसका दोष जानते हुए भी उसकी ओरसे ताल ठोककर लड़नेके लिए प्रस्तुत हो जाना, पापका बचाव करनेके समान है और दूसरेके पापका भागी होना है।

६—हाँमें हाँ मिलाना—

जैसे—कोई अमलदार या धनी कोई बात कर रहा है और वह बात अनुचित हो, अथवा उससे किसीको हानि पहुँचती हो तो उसमें हाँमें हाँ मिलाना और कहना कि "जो आप कह रहे हैं वह सत्य है" यह दूसरेके पापमें भागी होनेके समान है। इसके अतिरिक्त यदि दो ऐसे मनुष्य जो कि हमारे समझानेसे समझ जाने वाले हों, लड़ते हों, और हम उन्हें समझावें तथा उन्हें लड़ मरने दें अथवा कुटुम्बमें यदि लड़का या स्त्री कोई अधर्म करते हों, तो उसमें हम अपनी आँख मूंद लें तथा कुछ बोलें न तो यह सब हाँमें हाँ मिलानेके समान है और दूसरेके पापमें भागी होनेके समान है।

ऐसी ऐसी बहुत सी बातोंमें जिसे हम नहीं जानते, बिना कारण अपनी मूर्खतासे दूसरोंके पापमें हमें हिस्सेदार होना पड़ता है और उसका बुरा फल हमें भोगना पड़ता है। इसलिये भाइयो! पापकी भयङ्करता समझकर ऐसा प्रयत्न करो कि दूसरोंके पापमें भागी न होना पड़े, और यथाशक्ति आत्माके कल्याणके लिए पापसे बचो और प्रभुके पवित्र मार्गमें आनेका यत्न करो।

३६

दूसरोंका भला करनेकी अपेक्षा स्वयं भला होना कहीं अच्छी बात है

एक महाजन महाराज कहते थे कि दूसरोंका भला करना अच्छी बात है। भाग्यशाली मनुष्योंसे ही यह हो सकता है, परन्तु स्वयं भला होना, इससे कहीं अच्छा है, क्योंकि

दूसरोंका भला करनेमें बाहरी साधनोंकी आवश्यकता पड़ती है। जैसे कि, पासमें धन हो तो किसीको दिया जा सकता है, शरीरमें बल हो तो दूसरेकी सहायताकी जा सकती है, बुद्धि हो तो ज्ञानका प्रचार किया जा सकता है, हाथमें सत्ता हो तो दूसरोंको वशमें रख सकते हैं, तथा लाज आबरू या गुदडान आदि वंशपरंपरागत कोई बड़ा गुण हो तो बहुतसे काम हो सकते हैं, अथवा दूसरे मनुष्योंकी अपेक्षा जिनके शरीरमें, मनमें, बुद्धिमें या दूसरे किसी काममें कोई खास विशेषता होने पर यदि विचार करें तो वह दूसरोंका कुछ भला कर सकता है, किन्तु हमने देखा है कि इस प्रकारके अच्छे साधन होनेपर भी बहुतसे मनुष्य, जैसा चाहिये, वैसे उद्योगी नहीं होते। इस प्रकार आगे बढ़े हुए गुणी मनुष्योंमें विरलाही अपने अंतःकरण-की आवाज़के अनुसार चलने वाला होता है। और सब तो परंपरागत रिवाज़ों तथा दिखावके बाहरी विवेकोंमें ही रह जाते हैं, क्योंकि दूसरोंको उपदेश करना तो सबको आता है, किन्तु कथनानुसार चलना तथा करके दिखाना तो ईश्वरके कृपा-पात्र भक्तोंसे ही हो सकता है, इससे महात्मा तुकाराम कहते हैं कि "बोलें असा चालें त्याची वंदावी पावलें" जो कहे मुताबिक चलता है उसके पादुकाको भी सिर नवाना पड़ता है। इतना भला होनेका माहात्म्य है, इतनाही नहीं किन्तु दूसरोंका भला करनेमें तो बाहरके सब अच्छे साधनोंकी आवश्यकता पड़ती है और बहुतसे मनुष्य दूसरोंका भला करना तो दूर रहा अपना भला भी नहीं कर सकते, किन्तु जो स्वयं उत्तम होते हैं, वे अपने पास बाहरी साधनोंके न होनेपर भी अपने अच्छे दृष्टान्तसे अपने बन्धुओंपर बहुत अच्छा प्रभाव डाल सकते हैं।

मैंने देखा है कि गरीब भक्त अपनी परमार्थवृत्तिसे जितना भला कर सकता है उतना भला नामके लिए फंडोंमें हज़ारों रुपया भरने वाले श्रीमंत नहीं कर सकते। जंगलके एकान्त कोनेमें पड़े हुए मुनिव्रतवाले साधु बिना बोले चाले अपने पवित्र आचरणोंसे जगतमें जैसी पवित्रता फैला सकते हैं वैसी पवित्रता प्रतिदिन मन्दिरमें कथा कहनेवाले शास्त्री नहीं फैला सकते। भगवदिच्छाके अनुसार चलने वाले भक्तगण अपने दृष्टान्तसे अपने बन्धुओंमें जैसा धर्मका विश्वास बैठा देते हैं वैसा विश्वास मान मरतबाकी इच्छा रखने वाले गुरु नहीं करा सकते, तथा हृदयसे उत्पन्न लगनवाले सज्जन अपने निष्काम कर्मोंसे अपने आसपास जैसा अच्छा प्रभाव डाल सकते हैं वैसा प्रभाव बड़े बड़े पंडित या अधिकारी भी नहीं फैला सकते। यह सब उनके स्वयं भला होनेका फल है। इसके विपरीत मैंने यह भी देखा है कि जिसके घर सदावत चलता है वह भी अपनी दुकानपर बैठा बैठा दगा फरेब किया करता है, जो मन्दिर बनवानेवाले होते हैं उनमेंसे बहुतसे लोग अनीतिवाले होते हैं, बड़े-बड़े भाषण देनेवाले पंडितोंके भीतर भी पोल होती है, बड़े-बड़े शास्त्र पढ़ाने वाले गुरुके भी हृदयमें बेअदबी भरी रहती है, बड़े-बड़े पाठ पूजा करनेवाले भी दुष्ट प्रकृतिके होते हैं, त्यागी दिखायी पड़ते हुए साधु भी वासनावाले होते हैं, अनेकों प्रकारकी पुस्तक लिखनेवाले विद्वान भी किसी न किसी प्रकारके दुर्गुणवाले होते हैं और एक ओर दान देनेवाले धनीमानी लोग भी दूसरी ओर रोज़गार धंधाके द्वारा चोरी करनेवाले होते हैं। वे अच्छे नहीं होते। ऐसा होनेसे दूसरोंका भला करनेकी अपेक्षा स्वयं भला होना बहुत अच्छा है। दूसरोंका भला करना तो संयोगसे होता है

किन्तु स्वयं भला बननेके लिए पुरुषार्थ करना पड़ता है, इसमें मनको मारना पड़ता है, तथा अपनी इच्छाका कुछ त्याग करना पड़ता है। इससे महात्मागण कहते हैं कि संयोगवश दूसरोंका भला करना कोई बड़ी बात नहीं है। ऐसे तो डाकू भी दान देते हैं, व्यभिचारीभी बड़े लहरी होते हैं, जुआरी भी साधुओंकी सेवा किया करते हैं, लोभीभी बड़ी-बड़ी प्रार्थनायें किया करते हैं और महापापियोंसे भी संयोगवश भला कार्य हो जाता है, इससे भला काम करना कोई बड़ी बात नहीं है, बल्कि स्वयं भला बननेमें विशेषता है। इसस भाइयो! यदि आत्माका कल्याण करना हो तथा ईश्वरके पास जाना हो तो शुद्ध अन्तःकरणसे तुम स्वयं भले बनो, तुम स्वयं भले बनो।

३७

ख़याल रखो कि हमारे पाससे कोई बुरी रीतभाँति न सीख ले

मथुरामें एक मनुष्य टोपी बेचनेका रोजगार करता था। वह अपने साथ टोपीका डब्बा लेकर फेरी करता था। एक दिन घूमते-घूमते थक जानेसे तीसरे पहर थोड़ा विश्राम लेनेके लिए एक मकानके पास वृक्षके नीचे बैठ गया। वह अपने सिरपर टोपी पहने था तथा टोपीका डब्बा उसके पास रखा हुआ था। गर्मीका दिन था, थकावट मालूम पड़ रही थी, इसपर ठंडी ठंडी हवा लगनेसे उस फेरीवालेकी आँख झपने लगी। उसने सोचा कि ज़रा विश्राम लेकर उठता हूँ कि इतनेहीमें वृक्षके नीचे बैठे बैठेही उसे निद्रा आगयी।

फेरीवालेको उँघाता देखकर वहाँ आसपासके वृक्षोंपर

पैठे हुए बन्दर भला चुप पैठ सकते हैं ? तुरतही एक बन्दर उतर आकर तथा डब्बाको लेकर पेड़पर चढ़ गया। यह देखकर सब बन्दरोंने उसे घेर लिया और सबने एक एक टोपी उठा लिया और खाली डब्बेको नीचे गिरा दिया। इसके पश्चात् सब बन्दर सोचने लगे कि इस टोपीका अब क्या करना चाहिये ? इतनेमें एक बंदरने फेरीवालेकी ओर जो देखा तो उसके माथेपर उसे टोपी दिखायी दी। यह देखकर उसने भी अपने सिरपर टोपी दे लिया और दूसरे बंदरोंको दिखाने लगा। यह बंदर टोपी देकर साहब बन जाय तो दूसरे खाली कैसे रह सकते हैं ? उसे देखकर सभोंने टोपी पहर लिया और एक दूसरेकी ओर देखकर नाचने लगे। इतनेमें वह फेरीवाला जाग उठा और अपने चारो ओर टोपीका डब्बा ढूंढने लगा। किन्तु वह कहीं दिखायी नहीं पड़ा। यह देखकर वह घबड़ाया और बावला होकर इधर उधर देखने लगा। इतनेमें आस पासके वृक्षोंपर टोपी पहने हुए बंदर उसे दिखायी पड़े। यह देखकर उसके होश-हवास गुम हो गये। उसने सोचा-हाय! यह तो सब चौपट हो गया। सब टोपी उठाले गये, अब वह कैसे मिलेगी ? इतने बंदर पकड़े कैसे जा सकेंगे ? और उनके हाथसे सजी हुई टोपी छीनी ही कैसे जायगी ? यह देखकर वह बड़ा क्रुद्ध हुआ और निराश होकर उसने बड़े ज़ोरसे अपनी टोपी ज़मीनपर पटक दिया। यह देखकर सब बंदरोंने अपनी-अपनी टोपी उतारकर उसीके समान ज़ोरसे ज़मीनपर पटक दी, जिससे क्षणभरमें टोपियोंका ढेर लग गया और टोपीवालेने अपनी सब टोपियां उठा लीं।

कहनेका सार यह है कि हममें भी इन बंदरोंके समान दूसरोंकी नक़ल करनेका स्वभाव प्राकृतिक रीतिसे विद्यमान है,

इसीसे श्रीकृष्ण भगवानने गीतामें कहा है कि श्रेष्ठ मनुष्य जिस
प्रकार बर्त्तता है उसी प्रकार दूसरे लोग भी चलते हैं, क्योंकि
अच्छे लोग जो कुछ करते हैं वह उचित समझा जाता है
इससे उसीके अनुसार लोग चलते हैं। इससे सब मनुष्योंको
अच्छा आचरण रखनेकी आवश्यकता है। यदि हम गरीब हों,
अज्ञानी हों, रोगी हों अथवा ऐसीही दूसरी स्थितिमें होकर
अच्छे दृष्टांत न दिखा सकते हों तो कोई हर्ज नहीं, किन्तु
हमारी चाल-चलनसे, हमारे आचार-विचारसे और रीतिभांतिसे
कोई बुरी बात न सीख ले, इसका विचार रखना चाहिये,
क्योंकि हमारी चाल चलन देखकर यदि कोई बिगड़ेगा तो
उसका पाप हमारे ऊपर चढ़ेगा, इससे आत्माके कल्याणके
लिए तथा प्रभुके लिए ख्याल रखो कि ऐसा पाप न चढ़ने पाये।

३६

हमारे भक्तिका जैसा चाहिये वैसा फल न मिलनेका कारण

एक भक्तराज महाराज कहते थे कि इस दुनियामें मनुष्योंके
भक्ति बहुत कम रहती है, इसके बहुतसे कारण हैं, उसमें
मुख्य कारण यह है कि अपने आपही अन्दीस समझ
तथा अपने जीवनके प्रति दिनके व्यवहारमें उसका सरल-
अनुभव कर सके, ऐसा भक्तिका उत्तम फल मनुष्य
आंखोंसे प्रत्यक्ष देख सकते नहीं, इससे वे धनसे
प्यार रहते हैं, क्योंकि मनुष्यका स्वभाव सुखकी ओर
का है। मनुष्यकी प्रकृति अपने स्वार्थकी ओर दब जाने

ाली है। उसका मन चंचल है, तथा उसमें अहंकार प्रबल है,
सकी बुद्धि बाहरके आवरणोंवाली है तथा उसके देह-संघर
पूर्ण हैं। इससे दृष्टिगोचर लाभकी ओर ढल जाना ही आ
लके ज़मानेमें बहुतसे मनुष्योंकी प्रकृति हो गयी है। ऐस
ोनेसे भविष्यके बड़े-बड़े लाभ वह देख नहीं सकता, मृत्यु
श्चात् क्या होगा इसकी परवाह रखते नहीं तथा भविष्य
ामोंपर वे विश्वास भी नहीं करते, क्योंकि उनकी प्रकृति
ेसी हो गयी है। इससे यदि अपने धर्मसे प्रेम हो, अ
न्धुओंका हित करके अपना जीवन सार्थक करना हो
त्येक महात्मा, साधु, विद्वान तथा धनवानका पहला कर्त
यह है कि भिन्न-भिन्न रीतिसे, विद्याओंसे, दृष्टांतोंसे त
विचारोंसे, कामों तथा परिणामोंसे लोगोंको अवगत क
कि धर्मका फल तुरत ही और इस भवमें ही मिलता है
फल मिलनेमें कभी देर लगे तो समझ लो कि हमारी भ
अधूरी है। फल मिलनेमें देर होनेपर यह तो समझ ले सकते
किन्तु किस विषयमें, कहाँ पर और कैसे हमारी भक्ति अ
रह गयी है, इसका कारण बहुतसे मनुष्य स्वयं नहीं स
सकते, इससे भक्तिके अधूरी रहनेका कारण लोगोंको समझ
भक्तोंका मुख्य धर्म है।

जैसे ईश्वरका भजन करना, परमार्थ करना और प
यचना ये तीन भक्तिके मुख्य अंग हैं। इन्हें श्रीकृष्ण भगव
श्रीमद्भगवद्गीतामें यज्ञ, दान और तप कहा है और ये
छोड़े नहीं जा सकते, ऐसी आज्ञा दी है। इन तीन अं
जीवनका हेतु, कर्तव्य जगतके सब धर्मोंका तत्व, स्वर्ग
मोक्ष तककी सब बातें आ जाती हैं। ऐसा होनेसे धर्मके भी
की तथा बाहरकी भिन्न-भिन्न सैकड़ों जातिकी क्रियायें,

प्रकारके विधिनिषेध, जगतके सब शास्त्रोंका अर्थ और प्राचीन तथा नवीन सब महात्माओंके उपदेशोंका सार, यह सब उपरोक्त तीन मुख्य कर्त्तव्यमें आ जाते हैं। इससे धर्मके इन तीन मुख्य अंगोंमेंसे कौनसा अंग अधूरा रह गया है, उसे खोजना तथा उसे दूर करनेका उपाय करना प्रत्येक भक्तका काम है। ये तीन अंगोंका जब ठीक ठीक पालन होगा, तभी स्पष्टतः भक्तिका बड़ा फल मिलेगा। और यदि उसमें अपूर्णता हो तो भक्ति उतनीही अधूरी रह जायगी, जिससे उत्तम फल दिखायी नहीं पड़ेगा और जब तक अच्छा लाभ दिखायी नहीं देता तब तक स्वभावसे ही स्वार्थी मनुष्योंकी जैसी चाहिये वैसी श्रद्धा धर्ममें नहीं होती और जब तक धर्मके सब अंगोंका ठीक ठीक पालन नहीं किया जाता तब तक तुरतही लाभ भी नहीं मिल सकता। इससे इन अंगोंका पालन करनेमें हम किस प्रकार और कहाँ पर भूल करते हैं, उसे अच्छी तरह समझ लेना चाहिये।

जैसेः—कोई मनुष्य बड़ा उदार होता है, धर्मके काममें बिना रोकटोक पैसा फेंकता है, गरीबोंके लिए मरा जाता है और अपने सुखोंको त्यागकर परमार्थमें ही जीवन व्यतीत करता है, इसपर भी उसका पाप छूटता नहीं, जिससे एक ओर तो वह इतना परमार्थ करता है और दूसरी ओर व्यापार में घालमेल करता है, विषय-वासनामें मन दौड़ाया करता है, दूसरोंसे अच्छा गिने जानेका अभिमान उसके हृदयमें समाया रहता है और मान प्राप्त करनेकी इच्छा मृत्युकाल पर्यन्त वह छोड़ नहीं सकता; इससे भक्तिमें तपका अंश अधूरा रह जाता है, जिससे परमार्थ करनेपर भी जैसा चाहिये वैसा फल उसे प्राप्त नहीं होता।

बहुतसे मनुष्य ईश्वर-भजन तथा सेवास्मरण बहुत कि
करते हैं। इसमें अपना अधिकांश समय लगाते हैं, इसके लि
बहुत परिश्रम करते हैं, व्यय करते हैं और इसीपर ही अप
ज़िन्दगी बिताते हैं; तिसपर भी परमार्थकी बातोंमें ये इतने अ
भिज्ञ होते हैं कि लोगोंके कल्याणके मार्गसे गिर जाकर अप
भाई बहनोंका भी तिरस्कार किया करते हैं, जिसे देखकर को
भी अच्छा मनुष्य दुःखी हुए बिना नहीं रह सकता। ऐस
होनेसे भजनका अंग बहुत पालन करनेपर भी परमार्थक
कमीके कारण उनकी भक्ति अधूरी रह जाती है, जिससे धर्मक
विशेष फल वे प्रत्यक्ष रीतिसे नहीं देख सकते।

कितने ही मनुष्य बहुत प्रकारके पापोंसे बचे रहते हैं और
शरीरको कष्ट देकर मन तथा इन्द्रियोंको बहुतसी बातोंमें वशमें
किये रहते हैं, विषय वासनासे रहित होते हैं, लोभसे दूर रहते
हैं, वैराग्य लेकर जंगलमें जाकर एकान्तमें बैठे रहते हैं तथा
ईश्वरका भजन भी करते हैं, किन्तु जगतके कल्याणकी बातोंमें
ये इतने गिरे होते हैं कि आमचरोंसे भी गये बीते होते हैं। एक
ओर तो तप और दूसरी ओर क्रोध; तथा एक ओर तो भजन और
दूसरी ओर मनुष्य जातिका तिरस्कार! अरे भाइयो! ज़रा
विचार तो करो! ऐसी भक्ति कैसे सफल हो सकती है? हमें
जैसे गुरु तथा जैसा संयोग मिलता है तथा जिस प्रकारका
स्वाभाविक शौक होता है उसी एक अंगकी ओर हम झुक पड़ते
हैं और उसी एक अंगको सर्वस्व मान लेते हैं, इतना ही नहीं,
यदि हम दूसरी ओर ध्यान देंगे तो हमारी भक्ति ढीली पड़
जायगी, ऐसा समझकर धर्मके दूसरे अंगोंको हम तुच्छ सम-
झते हैं, जिससे एक ही अंगमें रह जाते हैं और हमारी भक्ति
अधूरी रह जाती है, और अधूरी भक्ति पूरा फल यदि न दे तो

में कुछ नवीनता नहीं है। इसमें भाइयो! धर्म पर
का विश्वास बैठानेके लिए इस बातका लोगोंको विश्वास
हो कि धर्मका फल तुरत ही मिलता है और हमारी
के फलीभूत न होनेका कारण समझाकर सर्वांगपूर्ण
करानेका प्रयत्न करो। यह भक्ति कैसी होती है, इसके
"कबीर साहब" कहते हैं:—

दोहा

शीश उतार भूपर धरे, ऊपर राखे पाँव।
दास कबीरा यों कहे, ऐसा हो तो आव॥
यह तो घर है प्रेमका, मारग अगम अगाध।
शीश काट पग तल धरे, तब निकट प्रेमका स्वाद॥

४०

दुनियामें भक्तोंको प्रभु तक पहुँचानेके लिए बिना भाड़ेकी नौका चला करती है

यात्राओंके कितने ही स्थानोंमें जहाँपर बड़ी-बड़ी नदियाँ
या समुद्रकी खाड़ी होती हैं वहाँ यात्रियोंको दूसरे किनारे
पहुँचानेके लिए बहुतसे धनियोंकी ओरसे नौकायें फिरा
ती हैं। इन नौकाओंमें बैठनेके लिए किसीकी आज्ञा नहीं
पड़ता, कोई टिकट या पास नहीं लेना पड़ता, कोई भाड़ा
देना पड़ता और समयपर न पहुँचनेसे टालमटोल भी नहीं
ना पड़ता, इसी प्रकार यहाँ किसीकी जाति पाँति,
ठेकाना, ऊँचाई नीचाई भी नहीं देखी जाती। जो मनुष्य
नौकामें आकर बैठता है उसे केवट पार उतार देता है।

स्वर्गका खजाना

भाइयो! भाग्यशाली धनियोंके घर तो केवल नदीको पा
उतार आनेवाली नौकायें चलती हैं, किन्तु भक्तोंके यहाँ कै
बड़े-बड़े बजड़े होते हैं, इसकी भी तुम्हें खबर है? यह बजा
संसार-सागरको पार करके मोक्ष-धामके किनारे विष्णु
सेवामें ले जाता है, तिसपर भी इसका कुछ भाड़ा नहीं दे
पड़ता। उलटे वह पुकार पुकारकर कहता है कि भाइयो
चले आओ, चले आओ! डरोमत। तुम्हारे लिए बेड़ा तैय
है, आ जाओ, समय बहुत कम है, ऐसा समय बार बार न
आता। हमें तुम्हारी जाति पाँतसे कुछ काम नहीं है। तुम्ह
नाम-धामसे मतलब नहीं है, तुम्हारी अच्छाई बुराई नहीं देख
है, और न हमें देश कालकी ही अड़चन है। तुम्हें हम अ
बेड़ेमें बैठाते हैं तो मैं तुमपर कुछ उपकार नहीं करता और
किसीसे टिकट या पासही माँगता हूँ, इससे ज़रा भी डरोम
बेफिक्र होकर हमारी भक्तिके बेड़ेमें आकर बैठ जाओ, इस
ईश्वरकृपासे तुम अनंतकालके लिए स्वर्गमें पहुँच सकोगे।

भाइयो! जिसके घर ऐसा बेड़ा हो उस भक्तकी उत्तमता
कितनी होगी, इसका तो ख्याल करो! इस बेड़ासे यहाँ आनेके
लिए तुम्हारा सत्संग है, इससे ईश्वरके कृपापात्र ऐसे महान
भक्तोंको प्रेमपूर्वक प्रणाम करो, हृदयसे उनका मान करो, यथा
शक्ति अंतःकरणसे उनकी सहायता करो, तुम इस बेड़ेमें बैठे
और संसार-सागरको पार करनेवाला ज्ञानभक्तिरूपी नौकाका
तुम्हारे बंधु-बांधव लाभ लें, ऐसी तुम अपनी शक्तिका उपयोग
करो, इससे ऐसे महान भक्तोंके प्रतापसे तुम्हारा भी जीवन
सार्थक हो जायगा, क्योंकि ऐसे ही ईश्वरके कृपा-पात्र भक्तोंके
लिए महात्मा गण कहते हैं:—

दोहा।

ज्ञान भक्ति वैराग्य सहित, संत सरल चित होय।
शुक कहे भव तारनको, अति बड़ नौका होय॥
संत बड़े परमारथी, देत सबनको ज्ञान।
शुक मिले जन जाहिको, ताको करत कल्यान॥
सबहि देव तेहि रीझते, सब तीरथ तेहि पास।
शुक कहे जेहि संत उर, श्रीहरि कीन निवास॥
मैं तिनके पीछे फिरूँ, नेक न राखूँ मान।
शुक कहे श्रीमुख कह्यो, हरिजन मेरे प्रान॥
जैसा मैं प्रिय संतको, त्यों मोकूं प्रिय संत।
शुक कहे श्रीमुख कह्यो, महिमा श्री भगवन्त॥

४१

परमात्माका गुणगान करनेसे वेदका अभ्यास करनेका फल मिलता है

प्राचीन महात्मागण कह गये हैं कि वेदका अभ्यास करनेका फल बहुत बड़ा है, क्योंकि इसमें ईश्वरीय ज्ञान, प्रभु प्रेम ईश्वरकी महाशक्तियोंके, जगतकी उत्पत्ति एवं प्राचीन ऋषियोंकी पवित्रता आदिके मूल तत्व हैं। इसमें ईश्वरकी चमत्कारिक सृष्टि-लीलाका अद्भुत वर्णन है, इसमें आत्मिक बल प्राप्त करनेकी कुंजी है, इसमें ईश्वरकी महाशक्तियोंको वशमें करनेवाले मंत्र हैं और इसके प्रत्येक शब्दमें सत्य, पवित्रता, ज्ञान, स्नेह, सौंदर्य, आकर्षण और आत्मिक बल भरा हुआ है तथा इसके ज्ञानसे युग युगान्तरमें अनेक महात्मागण अनन्त आनन्द शांति पाते आये हैं। इतनाही नहीं, पहले वेदके ज्ञानके आधारसे

ही संसारको दूसरे ज्ञान मिले हैं, इससे वेदका अभ्यास करनेके लिए शास्त्रोंने आदेश दिया है, क्योंकि इसका अभ्यास करनेवालोंको उपरोक्त सब लाभ मिलते हैं, वैसेही वेदका ज्ञान भी जिसकी कृपा दृष्टिमेंसे निकला है ऐसे ज्ञानस्वरूप, आनन्द स्वरूप, पूर्णस्वरूप, ज्योतिस्वरूप, महामंगलकारी मोक्षदाता परमात्माका गुण गानेसे वेद पढ़नेका फल मिलता है, क्योंकि वेद भी प्रभुका गुण-गानही करते हैं। फिर वेदोंकी भाषाको प्रच- लित हुए जमाना हो गया जिससे अब उसका रहस्य अच्छी तरह समझमें नहीं आता और बहुतसे लोग सरलतापूर्वक उसे सीख भी नहीं सकते। इससे शास्त्रमें कहा है कि प्रभुका गुण गानेवालोंको वेदका अभ्यास करनेका फल मिलता है क्योंकि जो काम वेद करते हैं वही काम प्रभुका गुणगानेसे भी होता है। इससे भाइयो! यदि बिना वेद पढ़े वेदके अभ्यास करनेका महान फल प्राप्त करना हो तो सर्वशक्तिमान अनन्त ब्रह्माण्डके नाथका गुण-गान करो, क्योंकि महात्मागण कहते हैं:—

दोहा।

जप तप तीरथ यातरा, जोग यज्ञ व्रत दान।
सुफ इन बिन होत सदा, जेहि उर श्री भगवान॥

४२

तारकी तरह भक्त भी प्रभुके पास अपना संदेसा भेज सकते हैं किन्तु तारकी विद्या नहीं जाननेवालोंको यह बात बुरी लगती है

एक भक्त बड़ा श्रद्धा भक्तिवाला था, पाठ-पूजामें बहुत ध्यान रखता, सेवा-स्मरणमें जीवन बिताता, तीर्थमें घूमता, देवदर्शन

मस्त रहता और निष्काम वृत्तिसे रहकर भगवद् इच्छा
अनुसार चलता था। यह देखकर उसका पड़ोसी एक नव
शिक्षित युवक जला जाता था। वह सोचता कि यह सब फ
ढोंग है; क्या इस प्रकार करनेसे ईश्वर मिल सकता है? इस
वह चिढ़कर भक्तसे पूछता कि भक्त! इस प्रकार नाच नांचने
तुम्हें क्या मिलेगा? यह बुद्धिका जमाना है कि विश्वासका
इस विश्वाससे क्या होता है? चीनी-चीनी करनेसे मुहँ
चीनी थोड़ेही न आ सकती है, तब राम राम करनेसे तुम
क्या मिलेगा? मुफ्तमें माला क्या फेरा करते हो? औ
स्नानादिमें क्यों व्यर्थ हैरान होते हो! ऐसे ढोंगोंमें पड़े रहने
क्या प्रभु कहीं मिल सकता है?

यह सुनकर उस भक्तने कहा—भाई! तुम इसका मूल
नहीं जानते। तुम बहुत कुछ पढ़लिख लेनेपर भी तार (Tel
graph) देनेकी विद्या नहीं जानते; इसी प्रकार सर्वशक्तिमा
प्रभुके पास संदेश कैसे भेजा जाताहै, इसकी भी तुम्हें खब
नहीं है, जिससे तुम ऐसा कहते हो; किन्तु मुझे तो इस
अनुभव है, इससे जैसे तुम मुझे वहमी समझते हो वैसेहीं
तुम्हें मूर्ख समझता हूँ; क्योंकि सीखने लायक विषयको सी
बिना तुम उसे बुरा समझ बैठते हो तथा उसकी बुरी टीक
करते हो; किन्तु भाई! ज़रा धैर्य धरकर विचार करो
समझमें आ जायगा कि तार देनेकी विद्या कुछ बुरी नहीं है
जैसे विशेष प्रकारके साधनोंसे यही तार दिया जा सकता
वैसेही दूसरे प्रकारके साधनोंसे प्रभुके पास भी तार भेजा
सकता है। इसमें तुम्हें नवीनता क्या मालूम पड़ती है? तु
इस बातको नहीं मानते तो इसमें तुम्हारी अज्ञानता है। इस

क्या यह विद्या पूरी हो जायगी? अनुभव किया हुआ एक दृष्टान्त मैं तुमसे कहता हूँ, वह सुननेही योग्य है।

इस देशमें जब प्रारंभमें तार लगा उस समय गुजरातके एक गाँवमें मैं तार मास्टर था। वहाँ स्टेशनपर भील लोग काम करते थे। उनमेंसे एकने देखाकि मैं "टक टक टक टक" कर रहा हूँ और घंटी बजा रहा हूँ, इससे उसने समझाकि मैं छोटे लड़कोंके समान खेल रहा हूँ और कोई काम नहीं करता। ऐसा समझकर उसने पूछाकि मास्टर साहब! सारा दिन टक टक क्या किया करते हैं? मैंने कहा—बम्बई तार भेज रहा हूँ। तब उसने पूछा—तार क्या? मैंने उत्तर दिया कि यहाँ बैठे बैठे जो कुछ मुझे कहना है उसे बंबई भेज रहा हूँ। इतनेमें ही फिर घंटी बजी, तब उस भीलने कहाकि आप तो यहाँ बैठे हैं यहाँ घंटी किसने बजाया? मैंने कहाकि बंबईके तार मास्टरने उसे बजाया है। यह सुनकर वह भील खिलखिलाकर हँस पड़ा। उसने समझा कि यह सब ढोंग है और मास्टर मेरी हँसी उड़ा रहा है अथवा वह पागल हो गया है, क्योंकि बम्बईमें घंटी बजानेसे यहाँ नर्बदा किनारे क्या कहीं सुनायी पड़ सकती है? या बंबईसे बातकी जा सकती है? बड़ा खेत हो तो एक कोनेकी आवाज़ दूसरे कोनेपर नहीं सुनायी देगी और यह कहता है कि बम्बईके मास्टरके साथ बात कर रहा हूँ। और कुछ नहीं इसे भूत लगा है जिससे बिचारा पागल हो गया है। ऐसा समझकर अपने जातिवाले दूसरे मज़दूरोंके पास जाकर उसने कहा—देखो! कोई ओझा लाओ, मास्टर पागल हो गया है। यहाँ बैठा बैठा खट खट करता है और कहता है कि बंबईके मास्टरसे बात कर रहा हूँ। इसके पास कोई आदमी नहीं था और घंटी आपही आप बज उठी। मैंने पूछा यह क्या? तो

उसने कहा कि बंबईके मास्टरने इसे बजाया है। इसे भूत लग गया है, नहीं तो घंटी कैसे बज उठी! मरचेकी धूप देकर तथा डफली बजाकर आओ हमलोग भूतको भगा दें, नहीं तो बिचारा पागल हो जायगा।

यह सुनकर उसमेंसे एक वृद्ध मनुष्यने कहा—मास्टरकी बात सत्य है। हम नहीं समझते तो क्या हुआ? किन्तु अंग्रेज़ोंने तार देनेकी इस युक्तिको निकाला है। यह तो बंबई तक तार देता है किन्तु बंबई वाले तो विलायत तक तार भेजते हैं इतनी बात होनेपर भी उस भीलका मन नहीं भरा। वह सबको मूर्ख समझने लगा और लोगोंसे कहता कि यह बैठे बैठे टक टक करनेसे कहीं बंबई खबर पहुँच सकती है? यह सब पैसा लेनेका ढंग है। उसका राज्य है जैसे चाहे वैसे भ्रममें डालकर पैसा ले सकता है, किन्तु मैं इस तार वारकी बात नहीं मान सकता और अन्त तक उसने इसे नहीं माना।

यह दृष्टान्त देकर उस भक्तने सुशिक्षित युवकसे कहा—मिस्टर! क्षमा करना, आप भी इसी भीलके समान हैं। हमारे मालाके दानोंसे स्वर्गका तार बंध जाता है यह बात तुम नहीं समझ सकते। हमारी मालाकी डोरीसे स्वर्गतक सीधी सीढ़ी बन जाती है, इसे तुम नहीं देख रहे हो। तुम जिसे खिलौना कहते हो उस भावको शिक्षित करनेवाले साधनोंसे मेरे हृदयमें ईश्वरका कैसा प्रत्यक्ष भास होता है, उसे तुम देख नहीं सके हो। मेरा नाम-स्मरणका तार कहाँ तक पहुँच सकता है इसकी तुम कल्पना भी नहीं कर सकते। मेरी सेवामें जगतमें प्रेम ईश्वरीय स्नेह फैलता है उसे तुम समझ नहीं सकते और माला फेरनेसे मेरा आचरण कैसे सुधरता है इसे तुम जान नहीं सके हो, क्योंकि बहुत कुछ पढ़ने लिखनेपर भी अब तक

तुमने ईश्वरके पास संदेसा भेजनेकी विद्या नहीं सीखी है
विश्वास कैसी अलौकिक वस्तु है, विचारोंका बल कित
बड़ा है, प्रेममें कैसी सत्ता है, इच्छा शक्ति क्या वस्तु
भावनाका ज़ोर कितना अधिक है, वासनाका असर कहाँ त
पहुँचता है, और संस्कार क्या कर सकता है? यह तुम जान
नहीं, इससे कहते हो कि राम राम कहनेसे क्या मिलेगा
किन्तु मैं तो ऐसा समझता हूँ कि जो कुछ सारमें सार है
सब ईश्वर स्मरणमें ही है। स्मरणसे ही गरीब महात्मा
सकते हैं, भक्त ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त कर सकते हैं, स्मरणसे
धर्म टिका हुआ है, और स्मरणसे ही नरसे नारायण हो स
हैं, इससे मेरे लिए तो परमकृपालु परमात्माका पवित्र नाम-स्म
रणही मोक्षधाम तकके लिए सच्चा तार है। इसीसे हम अपन
भावनाको प्रभुके पास भेज सकते हैं, उन्हें अपने हृदयमें ल
सकते हैं, और इसीसे प्रभुमय होकर अंतमें प्रभुके पास ज
सकते हैं। इससे यदि तुम्हें अपना आचरण सुधारना हो, जीव
सार्थक करना हो, आत्माका कल्याण करना हो, प्रभुका प्या
बनना हो और अनंतकाल तक मोक्षधामका सुख भोगना
तो बाहरी बातोंमें तथा मस्तिष्कके दर्शन शास्त्रमें ही न प
रहकर हृदयमें से प्रभुके पास तार भेजना सीखो।

२४

प्यारा तथा बड़ा है, इससे उसे अच्छीसे अच्छ
वस्तु अर्पण करना चाहिये

प्रत्येक जातिके लोगोंमें अपनी-अपनी शक्ति
अपने संबंधके अनुसार और देश तथा कुलकी प्रथा

अनुसार आपसमें भेट देनेकी रीति है, क्योंकि भेट देना
हकी निशानी है और यह देनेवालेकी लायकी है। ऐसा
में जब हम बाहर जाते हैं और वहाँ कोई अच्छी और नयी
तु देखते हैं तब उसे अपने मित्रोंको भेट देनेके लिए ले जानेकी
छा होती है। इस समय विद्वान विद्याकी चीज पसंद करते हैं,
ी लोग खिलौना, घोड़ा या कुत्ता पसंद करते हैं, व्यवहार
ार साधारण स्थितिके मनुष्य घरके लिए उपयोगी वस्तु
संद करते हैं, गरीब खाने-पीनेकी चीजें पसंद करते हैं और
मण भक्तिमें सहारा देनेवाली वस्तु पसंद करते हैं। इनमेंसे
धिकांश वस्तुएं अपने लिए नहीं बल्कि स्नेहियोंके लिए
ी हैं, क्योंकि इस रीतिसे स्नेहका बदला दिये बिना मनुष्यों-
मनको शांति नहीं मिलती। मनुष्योंके मनमें स्वभावतः
ा प्रेम होनेसे उन्हें अपने मित्रों तथा सगे संबंधियोंकी ओर
कर्षित होना पड़ता है। इस आकर्षणके कारण ही हम
योंके लिए बहुमूल्य साड़ियां खरीदते हैं, लड़कोंके लिए
दक करता हुआ कपड़ा व सुन्दर खिलौना लाते हैं, मित्रोंके
ए सबके शौक तथा स्थितिके मुताबिक़ नयी नयी वस्तुएं
ीदते हैं और सेठ, नौकर तथा निकट संबंधियोंके लिए भी
के स्नेहके अनुसार भेट आदि देते हैं और यह व्यर्थ नहीं
ता। हम सलाम करते हैं तो दूसरा लायक मनुष्य प्रणाम
ता है, हम यदि एक अंगुल भला करते हैं तो हमारा स्नेही
गज कर दिखाता है। अपनी स्त्रीको उसकी पसंद की हुई
ड़ी देदो, तब देखो कि उसका आनन्द और तुम्हारे ऊपर
का प्रेम कितना बढ़ जाता है। लड़कोंको खिलौना या
ठाई दे दो तब देखो कि वे तुमसे कैसे हिल मिल जाते हैं।
किर्मोंके पास मैटाली फल भेज दो और तुम देखो कि वे

तुमपर कैसी कृपा रखते हैं और नौकरोंको त्योहारी दो तब देखो कि तुम्हारा काम वे कैसी फुर्तीसे करते हैं। भाइयो! भेटमें ऐसा जादू है, इससे हम अपने संबंधियोंको भेट देनेके लिए अच्छी अच्छी वस्तु पसन्द करते हैं।

अब विचार करो कि जब हम अपने सगे संबंधियोंके लिए इतना सब करते हैं और बहुमूल्य वस्तुएं पसंद करते हैं तब जो बड़ेमें बड़ा, भलेमें भला, और प्यारेमें भी प्यारा है, जिसने हमें जीवन दिया है, जो अब हमें सुखका साधन दे रहा है, हमारी नकेल जिसके हाथ है, हमारी मौत सुधारना या बिगाड़ना जिसके अधिकारमें है और जो स्वर्गका कर्त्ता तथा मोक्षधामका मालिक है उस अनंत ब्रह्मांडके नाथ सर्वशक्तिमान परमकृपालु परमात्माको हमें कैसी उत्तमसे उत्तम वस्तु भेट करना चाहिये ? इसका तो विचार करो ! प्रभुको अर्पण करने योग्य हमारे पास दूसरी कौनसी वस्तु है ? इससे भाइयो! अपने सब शुभ कर्मोंको उसे अर्पण कर दो, वह एकसे अनेक गुना हो जायगा। ऐसा करनेमें हमारा कुछ खर्च नहीं होता, कोई विशेष परिश्रम नहीं करना पड़ता, कोई खास समय नहीं देना पड़ता या कोई खास अद्भुत क्रिया नहीं करनी पड़ती। केवल महान ईश्वरकी अखूट महिमाको जानकर, उसकी शरणमें जाकर तथा उसकी इच्छानुसार चलकर, फलकी इच्छाका त्याग करके और प्रभुको प्रसन्न करनेके लिए कर्म करनेको ही ब्रह्मार्पण कहते हैं; और हमारी यह भेटही ईश्वर स्वीकार कर सकता है, इससे एकका अनेक गुना फल प्राप्त करनेके लिए अपने सब शुभ कर्मोंको महान ईश्वरको अर्पण कर दो।

४३

जिसके हृदयमें प्रभुप्रेम आ जाता है वह प्रभुको छोड़कर और काम कैसे करेगा

कुछ दिन हुए अमेरिकाके एक गरीब किसानके खेत
सोनाकी खान निकल पड़ी, जिससे वह अपना सब सम
सोना निकालनेमें ही लगाने लगा, इतना ही नहीं अपने संगियों
को इसी काममें रात दिन लगाने लगा। यह देखकर उस
एक पुराने मित्रने कहा कि अरे भलेमानस ! तू ऐसा कैसे
गया ! अपने जानवरोंकी पूछताछ करता नहीं, जरा खेतक
ओर देखता नहीं, तुम्हारा खेत सूना पड़ा हुआ है, गाने बजाने
भी ठिकाना नहीं दिखायी पड़ता, पुराने मित्रोंसे मिल
तक नहीं जाता, मन्दिरमें कथा सुनने नहीं जाता, सन्ध्य
समय घूमने तक नहीं निकलता, चीठी मँगाता नहीं और
घरवालोंकी कुछ खोज खबर लेता है ? तुझे हो क्या गया ? स
उस किसानने कहा—भाई ! कुछ पूछो मत, मेरा भाग्य खु
गया। मेरे खेतमें सोनेकी खान मिल गयी है, इससे मैं दिन
सोना निकालनेमें ही लगा रहता हूँ। सोना छोड़कर और का
मैं अब किस लिए करूँ ? पहले जो कुछ मैं करता था सु
प्राप्त करनेके लिये ही करता था, वह सुख मुझे अपने खेतमें
ही मिल गया, इससे अब घरकी सोनेकी खान छोड़कर गाँव
मिट्टी फाँकनेके लिए अब क्यों जाऊँ ? जब तक यह नहीं मिल
था तब तक सिर पटक लिया। अब क्या है ? अब क्या कुत्ते
काट खाया है कि सोनेकी खान छोड़कर घोड़ेकी लीद उठा
जाऊँ ? भाई ! वह समय गया, क्योंकि उस समय मैं प

गरीब किसान था और अब मैं एक सोनेकी खानका मालिक हूँ। यदि तुम्हारी इच्छा हो तो तुम भी सब छोड़छाडकर सोनेकी खानमें काम करनेके लिए आ जाओ। परिश्रमके अनुसार तुम्हें भी पुरस्कारमिल जायगा। मेरे मित्र होकर अब बैलकी पूंछ उमेठनेमें क्यों पड़े हो? अब तो सोना प्राप्त करना सीखो. मेरा अनुभव देखकर क्या तुम इतना भी नहीं कर सकते! अबसे खानमें काम करना शुरू कर दो, पीछे इसका मज़ा लेना।

भाइयो! इस किसानके खेतमें जैसे सोनाकी खान मिलने पर वह अपना सब समय सोना निकालनेमें ही लगाता था, वैसे ही जिन भक्तोंको महान प्रभुके पवित्र नामसे लगन लग जाती है, जिन हरिजनोंको रामनामकी रट लग जाती है, जो ज्ञानी ईश्वरकी महिमा समझ जाते हैं और जिन कृपा पात्रोंका हृदय भगवदावेशसे भर जाता है, वे भी सारा दिन नम्रता पूर्वक सिर नवाकर प्रभु-प्रेममें मस्त होकर गद्‌गद स्वरसे स्तुति किया करते हैं। उन्हें इसमें इतना आनन्द मिलता है कि इस आनन्दको छोड़कर और कोई वस्तु उन्हें अच्छी नहीं लगती जिससेमहान भक्तोंका तन, मन, धन, वचन, बुद्धि और जीवात्मा यह सब परम कृपालु परमात्मामेंही लीन रहता है। प्रभुको छोड़कर उसकी वृत्ति और कहींजाती नहीं। जिस प्रकार गरीब मनुष्यको सोनेकी खान मिल जानेपर वह उसे छोड़कर कहीं जाता नहीं. उसी प्रकार भक्तोंके हृदयमें जब सर्वशक्तिमान परमात्मा स्वयं पधारते हैं तब इस अलभ्य लाभ, महाअद्भुत शक्ति अलौकिक आनन्द, परमपवित्रता, अमृतका महासागर तथा अखंड सच्चिदानन्दके आनन्दको छोड़कर जगतके व्यर्थकी बातोंमें पड़ना उसे अच्छा नहीं लगता। जिसे ऐसा सच्चा आनन्द मिल गया है वह मायामें किस लिए लिपटा रहेगा? यह मैं तुममें

क्यों पड़ेगा ? और वह सांसारिक बन्धनोंमें किस लिए बं
रहेगा ? वहतो माथा भुकाने पर भी मस्त होकर महा आनन
रहा करता है। ऐसे अलौकिक अखंड आनन्दके मिल जाने
ही भगवद्मय भये हुए भक्त तुकाराम, सूरदास मीराब
आदिने सांसारिक जंजालोंको लात मारा था, और उन्हें
रस मिला था उसका स्वाद दूसरोंको चखानेके लिए ही उन्हों
अपना जीवन बिता दिया, क्योंकि जिसके हृदयमें प्रभु
आ जाता है वह सर्वशक्तिमान प्रभुको छोड़कर दूसरा क
कस लिए करेगा ? इससे भाइयो ! यदि जगतके दुखों
छुटकारा पाना हो और सच्चे सोनेकी खान प्राप्त करना हो
अपने हृदयमें प्रभुको खोजो, ताकि इस किसानको जिस प्रक
अपने खेतमें ही सोनेकी खान मिल गयी उसी प्रकार तुम्हें
अपने हृदयमें प्रभु मिल जाँय।

दोहा।

मैं जाना हरि दूर है, हरि है हिरदय माँहि।
आड़ी माडी कपट की, तासे दीसत नाँहि॥
ले कारन जग ढूँढ़ियो, सो तो घटही माँहि।
परदा दीन्हो भरमका, ताते सूझत नाँहि॥
ज्यों नैननमें पुतली, त्यों मालिक घट माँहि।
मूरख लोग न जानहीं, बाहर ढूंढन जाँहि॥
ज्यों तिलमें तेल है, ज्यों चकमकमें आग।
तेरा प्रीतम तुज्झमें, जाग सके तो जाग॥
पुष्प मध्य ज्यों बास है, व्याप रहा सब माँहि।
अंतर माँही पाइये, और कहूं कछु नाँहि॥

४४

धर्मका फल तुरत ही मिलता है, किन्तु उसे हमारे न समझ सकनेका कारण है

एक मन्दिरमें बैठे हुए बहुतसे भक्त बातचीत कर रहे थे, उनमेंसे किसीने कहा कि मैं बहुत भक्ति करता हूँ किन्तु उसका यथोचित कुछ फल नहीं दिखायी पड़ता। यह सुनकर दूसरेने कहा कि इसमें भक्तिका कुछ दोष नहीं है। जमाना बदल गया है इससे ऐसा होता है। प्रत्यक्ष फल तो सतयुगमें मिलता था। इस समयतो कलियुग है, इससे इसका फल भविष्यमें मिलेगा। तब तीसरेने पूछा—यह क्यों? भविष्यमें जिसका फल मिले वह भक्ति किस काम की? ऐसा विश्वास कोईभी नहीं रख सकता। यह तो नकदका जमाना है। सब बातोंमें नकद, उधारकी तो कहीं बातही नहीं है, पैसेका पोस्ट कार्ड लेने जाओतोभी नकद, रेलका टिकट लो तो वहभी नकद, तार देने जाओ तो पैसा पहले दो, उधारकी कहीं बातचीत नहीं है। कहींसे माल लाओ तो रुपया पहले दे दो, पीछे माल अब बिकेगा तब बिकेगा। लड़केको स्कूलमें भर्ती कराने जाओतो फीस एक महीनेकी पेशगी दो, पीछे वह लड़का चाहे पढ़ने जाय अथवा न जाय। एक छोटीसी कोठरी भाड़े लेनेके लिये जाओ तो जमानत दो और अदालतमें मुकदमा लड़ने जाओतो चाहे परिनाम तुम्हारे पक्षमें हो या विपक्षमें, किन्तु कोर्टफीस पहलेही दे दो। अंग्रेज सरकारके राज्यमें उधारकी कहीं बात ही नहीं दिखायी पड़ती और यदि उधार रखोतो अच्छा मनुष्य भी कुछ दिनोंमें खराब समझा जाने लगेगा। तब विचार तो करो कि अपने सिरपर ऋण लादकर प्रजासे सूद वसूल करने

वाले अंग्रेजके राज्यमें तो नक़दका व्यवहार हो और लक्ष्मीके पति सर्वशक्तिमान ईश्वरके राज्यमें उधार चले? यह कैसे होगा! सब किसीने कहा कि अंग्रेज़ी राज्य दयालु है, न्यायी है और प्रतापी है इससे उसमें तो नक़दही चलेगा, किन्तु धर्म तो पंगुल है, उसेतो जब कोई चलायेगा तभी न चलेगा, इससे इसमें तो ऐसा ही होगा। इसमें नकद लेनदेन कैसे होगा! इसका फलतो धीरे धीरे मिलेगा ही।

यह सुनकर प्रथम भक्तने कहा—हाय हाय! यह तुम क्या कहते हो? यह भी कहीं हो सकता है? हरिजनोंके रहते कहीं धर्म पंगुल हो सकता है? धर्मको पंगुल कहना तो ईश्वरका अपमान करना है, क्योंकि हमारे शास्त्रोंमें स्थान-स्थानपर कहा है कि धर्मका बल चौदह लोकसे भी अधिक है। धर्मका प्रकाश अनंत ब्रह्माण्डको प्रकाशित कर रहा है, धर्मके कारण ही यह जगत टिका हुआ है, धर्मके कारणही देवोंने देवत्व पाया है, धर्मसे ही मनुष्य मोक्ष पा सकता है, आत्मा-परमात्माकी एकता हो सकती है, मनुष्य जन्मको सार्थक करनेवाले जो उत्तमसे उत्तम साधन जो कर्म, उपासना और ज्ञान वे भी धर्मके अंग हैं। वेद स्वयं धर्मका गुण गा रहा है और धर्मकी रक्षाके लिए ही निरंजन, निराकार, अगम्य, अखंड अलक्ष्य, अविनाशी, अजर, अमर, अव्यक्त, कूटस्थ, अनंत, सर्वव्यापी, निराधार, सर्वाधार, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान अनंत ब्रह्मांडके नाथ परमात्माने अनेक बार अवतार लिया है, इतनाही नहीं, आनन्दस्वरूप ईश्वर स्वयं धर्मकी मूर्ति हैं। ऐसे महाप्रतापी धर्मको पंगुल समझना, यह समझनेवालेकी नालायकी है और ऐसा ऐश्वर्यवाला भाग्यशाली धर्म अपनी सेवाका फल तुरत न देकर उधार रखता है, यह समझना भी धर्मका अप

मान है, और ईश्वरका रूप होनेसे धर्मका अपमान ईश्वरका अपमान करना है, क्योंकि शास्त्रमें पुकार पुकार कर प्रभुने स्वयं कहा है कि धर्मका फल कभी भी व्यर्थ नहीं जाता, इतना ही नहीं, उसका दसगुना, सौ गुना, हज़ारगुना, लाखगुना और अनंतगुना होकर मिलता है, और यह भी उधार नहीं बल्कि तुरत ही काम करनेके पहले ही विचार करनेके साथ ही फल मिलता जाता है। यदि ऐसा न हो तो धर्मका बड़प्पन ही क्या? और यदि तुरत फल न मिले तो धर्मका अर्थ ही क्या रह जाय? जिस प्रकार भोजनके प्रत्येक कणमें भूख मिटानेकी शक्ति है, बल है, आनन्द और तृप्ति है उसी प्रकार धर्मके प्रत्येक काममें तथा प्रत्येक विचारमें ईश्वरकी कृपा है, मानसिक बल है, उच्च भावना है, हृदयकी पवित्रता है, अपने स्वार्थका त्याग है, तथा जीवन मिलता जाता है और धर्मके किसीभी कामसे या किसीभी विचारसे उसी समय उसी प्रमाणमें आत्मिक आनंद मिलता जाता है, किन्तु हमारा प्रेम बहुत कठोर हो गया है, बहुत स्थूल और जड़ पड़ गया है और दूसरे तुच्छ विषयोंमें बहुत दूर तक दौड़ गया है, इससे वर्त्तमानमें होनेवाले छोटे छोटे भले परिणाम हमारी समझमें नहीं आते। दूसरे यह कि महामंगलकारी शांतिदाता परमात्मा ऐसा दयालु है कि हम अपने मनकी निर्बलताके कारण छोटी छोटी वस्तुएँ उससे माँगते हैं, किन्तु वह अपने बड़प्पनके कारण बहुत बड़ी बड़ी चीज़ें दे देता है। जब कि हम सांसारिक वस्तुएँ माँगते हैं तब वह स्वर्गकी वस्तु हमें दे देता है, हम लौकिक वस्तु माँगते हैं तो वह अलौकिक वस्तु दे देता है, हम इन्द्रियोंका सुख माँगते हैं, तो वह आत्माका सुख देता है, वासना बढ़ानेवाली चीज़ें हम माँगते हैं तो वह उस

दलमें वासना छुडानेवाली वस्तुएं दे देता है और जब हम
अपनी तुच्छ इच्छाओंकी पूर्ति चाहते हैं तब वह जीवनको
सार्थक करनेवाली शक्ति दे देता है। किन्तु हम अपनी लगन
या वृत्तियोंकी जडताके कारण भिन्नरूपमें मिले हुए इन बड़े
लाभोंको समझ नहीं सकते, इससे हमें ऐसा मालूम पड़ता है
कि धर्मका फल तुरत नहीं मिलता, किन्तु ऐसा समझना भूल
है, इससे भाइयो! याद रखो कि:—

धर्मका फल तुरतही मिलता है, इतनाही नहीं वरन्‌ वह
अनेक गुना होकर मिलता है, किन्तु हमारी मांगकी अपेक्षा वे
फल भिन्न प्रकारके होते हैं. भिन्न प्रकारसे मिलते हैं, दूसरोंकी
ओरसे मिलते हैं और उसका प्रभाव भी दूसरे प्रकारका होता
है. इससे स्वार्थवृत्तिसे जड पड गयी हुई हमारी लगन प्रत्यक्ष
रीतिसे इन फलोंको देख नहीं सकती, जिसमें हमें ऐसा लगता
है कि हमें धर्मका फल नहीं मिल रहा है, किन्तु धर्मका फल
नहीं मिलता ऐसा समझना धर्मके ऊपरसे अपने विश्वासको
ढीला कर देनेके समान है, नास्तिकताको उत्तेजन देना है, यह
हमारी अयोग्यता है और ऐसा समझना धर्मके स्थापक,
धर्मके चलानेवाले, उसकी रक्षा करनेवाले तथा धर्म स्वरूप
आदि गुरु सर्वशक्तिमान ईश्वरका अपमान करनेके बराबर है
क्योंकि सब प्रकारके फलोंका दाता दयालु ईश्वर है और वह
स्वयं धर्मस्वरूप है, इससे और बातोंकी अपेक्षा धर्मका फल
सबसे पहले मिल सकता है।

ज़रा विचार तो करो कि जब हम अपने घरके पास पेड़
लगाते हैं और उसकी सेवा करते हैं, उसकी आँधी पानीसे
रक्षा करते हैं तो वह तुरतही हमें लाभ पहुंचाता है, जैसे कि
छाया मिलती है, आँखोंको ठंडक पहुंचती है, शुद्ध हवा मिलती

है, पशुपक्षिओंको विश्राम करनेका स्थान मिलता है और डाल, छाल, पत्ता फूल आदि दवाके काममें आते हैं, यद्यपि फल मौसिमके समय पीछेसे मिलता है किन्तु इस प्रकारके कुछ लाभ तो सर्वदा हुआ करते हैं न। इसी प्रकार देवत्व, स्वर्ग और मोक्ष आदि आत्माके साथ संबंध रखनेवाले धर्मके बड़े फल मौसिमके समय अर्थात मरनेके बाद मिलें, यह जुदी बात है, किन्तु धर्मके सामान्य लाभ तो धर्मका पालन करनेवालोंको इसी जीवनमें मिलते हैं, क्योंकि राजाकी नौकरी करनेवालेको जिस प्रकार वेतन मिलता है तथा अधिक और उत्तमतासे काम करनेसे यथासमय पुरस्कार मिलता है, इसी प्रकार अखंड आनन्दस्वरूप सच्चिदानंद परमकृपालु परमात्माकी हम धर्मके मार्गसे सेवा करते हैं। इसका वेतन यही है कि इसका लाभ इस जीवनमें ही हमें मिलता है और मरनेके बाद जो लाभ मिलता है वह पुरस्कार है। ऐसा होनेसे तथा मनुष्योंके अपने मनकी कृपणताके अनुसार स्वार्थमें लिप्त रहनेसे वह साधारण वेतनसे अर्थात जीवनमें होनेवाले धर्मके लाभोंसे संतुष्ट नहीं होता और पुरस्कारका लोभ बनाये रखता है और वेतनको नहीं बल्कि पुरस्कारको ही धर्मका फल समझा करता है। ऐसा समझकर ही बहुतसे मनुष्य कहते हैं कि धर्मका फल मरनेके बादही मिलता है, किन्तु ऐसा कहना हरिजनोंको शोभा नहीं देता, यह विचार अपूर्ण है। इसके विरुद्ध मैं देखता हूँ कि धर्म पालनेवालोंका आचरण शुद्ध होता है, उनके मनमें शांति होती है, हृदयमें पवित्रता होती है और उनका चेहरा प्रफुल्लित रहता है। वे दूसरोंके लिए थोड़ा बहुत अपना स्वार्थ त्याग सकते हैं, जगतमें ईश्वरकी महिमा बढ़ानेकी इच्छा रखते हैं, पापसे बचनेका प्रबन्ध करते हैं, सबके साथ भलाई

करना चाहते हैं और उनका मन उस विचारमें लीन रहता है। अब उसके साथ एक पापीकी तुलना करो और देखो कि ऐसी उत्तमता क्या धर्मके नामसे नहीं है? भाइयो! धर्मका लाभ प्रत्यक्ष है, इसी समय मिलता है और हमारे प्रतिदिनके व्यवहारमें वह काममें आता है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है. इससे धर्मका लाभ इस जीवनमें ही और तुरतही मिलता है. इसका सबको विश्वास दिलानेका प्रयत्न करो। यही सबसे उत्तम धर्म है।

४६

दुःखमें सबको ईश्वर याद आते हैं, इससे हमारा कल्याण करनेके लिए कभी कभी हमें ईश्वर दुःख देता है

प्रसंगवश बातही बातमें एक भक्तने कहा कि एक समय अग्निबोटमें बैठकर मैं गांवको जा रहा था। उस समय नदी शांत थी और अग्निबोट तेजीसे सीधे चली जा रही थी, इससे सब लोग आनन्दमें मग्न थे। अग्निबोटके भीतर कोई गंजीफा खेल रहा था, कोई गरम गरम चा पी रहा था, कोई गाना गा रहा था, कोई एक दूसरेकी बातें सुन रहा था, कोई लड़का खेला रहा था, कोई आसपासके दृश्य देख रहा था, कोई अपना सामान सहेज रहा था, कोई प्राचीन चमत्कारोंकी बातें कर रहा था और कुछ लोग छोटी छोटी बातोंके लिए झगड़ रहे थे। इस प्रकार कुछ समय व्यतीत हुआ। इतनेमें संध्या हो गयी, तूफान आया और नदीमें बड़ी-बड़ी लहरें उठने लगीं। अग्निबोट नीचे ऊपर उछलने लगा और उसमें चारो ओर

पानीके छींटे आने लगे। थोड़ी देरमें तूफानने और भी ज़ोर पकड़ा। बड़ी-बड़ी लहरोंके झोंकोंके कारण किसी किसीके सामानका ठिकाना तक नहीं रहा। यात्रीगण एक दूसरेसे ठोकर खाने लगे और एक दूसरे पर गिरने लगे। अनन्तर तूफानके डरसे सब लोग भीतर चले गये। वहाँ पर इतनी भीड़ थी कि लोग हिलडोल भी नहीं सकते थे,. इससे डरकर लड़के चीख रहे थे। स्त्रियाँ एक ओर रोने लगीं। गंजीफा नदीमें फेंक दिया गया, गान हवामें उड़ गये, किसीको भी अपने सामानका ध्यान नहीं रहा और सब लोग राम-राम कहकर प्रार्थना करने लगे कि हे प्रभु! इस आफ़तसे रक्षा करो, रक्षा करो! मुझे तुम्हाराही भरोसा है। तुम्हारे सिवा इस भयङ्कर तूफान से और कौन बचा सकता है? ऐसा कहकर सब अपने-अपने इष्टदेवका स्मरण करने लगे। कोई यात्रा करनेका, कोई परमार्थ करनेका, कोई रुद्री करानेका, कोई बलिदान देनेका और कोई मित्रोंका कर चुकानेका संकल्प करने लगा। इसके पश्चात् सच्चे हृदयसे बहुत प्रार्थना तथा परमार्थ किये जानेपर थोड़ी देरमें तूफान कम हुआ और सब शांत हुए।

भाइयो! इस भयंकर तूफानके समय अग्निबोटके भीतर सब लोगोंमें मैंने जैसी भक्ति, दीनता, परवशपन, त्याग, वैराग्य प्रभुकी महिमा तथा मृत्युको सामने खड़ा देखा वैसा आज तक कहीं भी मैंने नहीं देखा। मुझे तो विश्वास हो गया है कि दुख बिना ईश्वरका स्मरण नहीं आता और जब तक ईश्वर याद नहीं आता तब तक हमारा उद्धार नहीं हो सकता, इससे हमारे कल्याणके लिए तथा भक्ति करानेकी इच्छासे कभी कभी ईश्वर हमें दुख देता है। इससे दुख आ पड़ने पर निराश न होकर शुद्ध अंतःकरणसे ईश्वरकी प्रार्थना करो, प्रार्थना करो,

इससे परमकृपालु परमात्मा अवश्य कृपा करेगा, और भक्त-
गण भी ऐसाही कहते हैं:—

दोहा।

सुखके शीश शिला पड़ो, हरि हिरदय से जाय।
बलिहारी वा दुखकी, पल पल नाम जपाय॥
विपत भली हरिनाम के, काय कसौटी दुक्ख।
राम बिना किस काम की, माया सम्पत सुक्ख॥

४६

बड़ेसे बड़ी इञ्जिनकी कलभी छोटीही होती है, ऐसेही स्वर्गके सब भेदोंकी कल प्रभु-प्रेम है

एक भावुक स्वभावका जिज्ञासु था। वह धर्म जाननेके लिए बहुत परिश्रम करता था, किन्तु वह भोला स्वभावका, स्थिर मनका, जड़ बुद्धिवाला तथा अधूरी श्रद्धावाला था, इससे बहुत परिश्रम तथा व्यय करनेपर भी वह धर्मकी कुंजी नहीं पा सका। इसके पश्चात वह एक भक्तराजसे मिला तथा उससे उसने कहा कि महाराज! मैंने बड़ा भारी परिश्रम किया तथा माथा पटका, किन्तु मुझे कोई मार्ग नहीं मिल रहा है। शिव पुराण पढ़ता हूँ, उस समय ऐसा लगता है कि शिवही सच्चे हैं तथा और सब बुरे हैं, भागवत पढ़ता हूँ तब लगता है कि कृष्ण बिना कुछ नहीं हैं, रामायण पढ़ता हूँ उस समय ऐसा लगता है कि राम बिना तर नहीं सकते, देवी भागवत पढ़नेके समय मालूम पड़ता है कि शक्ति बिना सब अंधकार है, सूर्यपुराणके समय लगता है कि सूर्यनारायणमें ही सर्वस्व है,

गणपतिस्तोत्रके समय मालूम पड़ता है कि इस मंगलमूर्तिके बिना किसीका कल्याण नहीं हो सकता और जब वेदांतका अध्ययन करता हूँ तब मालूम पड़ता है कि मैंही ब्रह्म हूँ, इतना ही नहीं जब अलग अलग छहो शास्त्र देखता हूँ तब मेरा चित्त घबड़ा जाता है। यह मेरी समझमें कुछ नहीं आता और न मैं कुछ निर्णय कर सकता हूँ। इसके अतिरिक्त जब मैं किसी शास्त्रीसे मिलता हूँ तो यह कहता है कि कर्मकांड करो। कर्म किये बिना पार नहीं लग सकता। जब किसी वैष्णवसे मिलता हूँ तो यह कहता है कि जब तक वैष्णव नहीं बनोगे तब तक कुछ नहीं हो सकता। साधुओंसे मिलता हूँ तो वे कहते हैं कि जब तक वैराग्य न लोगे और सब कुछ त्याग न दोगे तब तक प्रभु नहीं मिलेंगे। योगी कहता है कि योग करे बिना जीव और ईश्वरकी एकता नहीं हो सकती। वेदान्ती कहता है कि मन, वाणी, बुद्धि या कर्म वहां पहुँचही नहीं सकता। यह तत्व तो ज्ञानसे ही जाना जा सकता है और जब किसी मौलवी या पादरीसे मिलता हूँ तो वे कहते हैं कि हमारे धर्ममें आओ तभी उद्धार होगा। यह सब देखकर मैं बड़ा चिन्तित हो रहा हूँ, मुझे कोई रास्ता नहीं दिखायी पड़ता और न कोई तत्व समझमें आता है तथा मैं डूबता उतराता रहता हूँ। यदि ऊपर उड़ूँ तो सब वस्तु अच्छी लगती है, श्रद्धाकी दृष्टिसे देखता हूँ तो सबमें कुछ रहस्य दिखायी पड़ता है और अधिकार विचार करनेसे सब झूठा मालूम पड़ने लगता है। ऐसा होनेसे मैं बड़ा घबड़ाता हूँ। मुझे तो ऐसा मालूम पड़ने लगता है कि जब कि इतना माथापच्ची करनेपर भी, इतने शास्त्र पढ़नेपर, ध्यान करनेपर तथा इतना समय नष्ट करने पर भी, मुझे अब तक धर्मका भेद समझमें नहीं आया, अभी तक मुझे शांति नहीं

मिली, और धर्म क्या है ? इसकी भी मेरी शंका समाधान कर
ई सब व्यवहारिक अज्ञानी लोगोंका क्या हाल होता होगा
इसे महाराज ! कोई रास्ता बतानेकी कृपा कीजिये।

महाराजने कहा—भाई ! धर्म बहुत विशाल तथा बड़
ठिन विषय है, क्योंकि धर्मसे पशुओंमें मनुष्यत्व आ सकत
, मनुष्योंमें देवत्व आ सकता है, जीवमेंसे शिव हो सकते
रसे नारायण हो सकते हैं और धर्मसे आत्मा परमात्मा
क्य सध सकता है, इससे धर्म बड़ा गहन विषय है औ
र्म किसी विशेष देश, काल या जातिके लिए ही नहीं है बल्कि
र्व देश, काल तथा जातिके लिए है, इससे सब देश, का
था लोगोंके लिए लागू हो सके ऐसा मूल तत्व उसमें होता
जिससे तुम्हारे जैसे निर्बल मनवालेको पंचमेल खिचड़ी
ानीमें डुबकी खानेके समान लगता है, क्योंकि अलग अल
अधिकारियोंके लिए अलग अलग नियम होनेसे ऊपरी दृष्टि
देखनेसे तुम्हें बहुतसे नियम दिखायी पड़ते हैं, और इ
नियमोंमेंसे तुम्हें कौनसा पालन करना चाहिये, यह भी तुम्हा
समझमें नहीं आता और जिस मनुष्यसे तुम मिलते हो व
जिस मार्गसे उसे फायदा पहुँचा रहता है, तुम्हें बताता
इससे बहुतसे मार्ग देखकर तुम घबड़ा गये हो। पुनः अधिक
भेदका ख्याल रखे बिना, निष्कारण तुम यह समझ बैठते
कि चाहे जो एकही रास्ता सच्चा होगा, सब रास्ते सच्चे ना
हो सकते। ऐसा समझनेसे तुम्हें डुबकी खानेके समान लगत
है क्योंकि तुम्हें इसकी कुंजी मिली नहीं है। इससे बाहरक
बड़ा रूप तथा भिन्न भिन्न मार्ग देखकर तुम चकराते हो, कि
भाई ! जैसे बड़े इञ्जिनकी कल छोटी होती है, हाथीको वश
रखनेवाला अंकुश छोटा होता है, ट्रेनको रोकनेका ब्रेक छो

होता है, नदीको पार करनेके लिए नावें छोटी होती हैं, और जैसे बड़ी बड़ी सन्दूकोंकी ताली छोटी होती है वैसेही हमारा पवित्र सनातन आर्य धर्मभी बड़ेसे बड़ा है। वह इतना बड़ा है कि ब्रह्माण्ड भरमें व्याप रहा है। पातालसे मोक्षधाम तक वह फैला हुआ है। जीवनके प्रारम्भसे अन्त तक तथा मृत्युके बादकी जिन्दगीमें भी वह है, तथा जीवसे ईश्वर तक वह है। धर्मके इतना बड़ा होनेपर भी उसकी कल बहुत ही छोटी है, उसकी कुंजी बहुतही सुन्दर है और उसका भेद बड़ा सहल है। यह कुंजी प्रभुप्रेम, ईश्वरसे स्नेह एवं अभेद है; यह कुंजी "ब्रह्मा-र्पणेन सर्वत्र" है और यह कुंजी अपना अहमत्व भूलकर ईश्वरके लिए जगतकी सेवामें लग जाना है। इससे धीरे धीरे आचरण सुधरता जाता है और अंतःकरणकी शुद्धि होती है। इससे धीरे-धीरे ईश्वरकी महिमा समझमें आती जाती है और ईश्वरके साथका ऐक्य बढ़ता जाता है। इसीके लिए तीर्थ, व्रत, दान, सत्संग, स्वार्थत्याग, बलिदान, योग-साधन, मंदिरमें जाकर दर्शन प्रार्थना, यज्ञ, गुरुकी सेवा तथा उत्सव किया जाता है और इसीके लिए कर्म, उपासना तथा ज्ञानकी आवश्यकता पड़ती है, क्योंकि यह सब प्रभुप्रेमसे होता है। इससे जिस प्रकार बड़े इञ्जिनकी छोटी कल होती है उसी प्रकार सब धर्मोंकी कुंजी प्रभु प्रेम है। इससे यदि यह कुंजी प्राप्त करनाहो तो सर्वशक्तिमान परमकृपालु महान परमात्माके लिए संसारमें प्रभु-प्रेम फैलानेका प्रयत्न करो, क्योंकि महात्मागण कहते हैं:—

प्रेम बराबर योग नहिं, प्रेम बराबर ध्यान।
प्रेम भक्ति बिन साधना, सबही थोथा ज्ञान॥
पोथी पढ़ि पोथी बनी, पंडित बने न कोय।
अढ़ाई अक्षर प्रेमके, पढ़े सो पंडित होय॥

प्रेमभाव इक चाहिये, भेष अनेक बनाय।
चाहे, घर में बास कर, चाहे बनमें जाय॥
जोगी जंगलमें पड़ा, सन्यासी दरवेश।
बिना प्रेम पहुँचे नहीं दुरलभ सद्गुरु देश॥
प्रेम न बाड़ी ऊपजै, प्रेम न हाट बिकाय।
राजा राना जो रुचे, शीश देय ले जाय॥
प्रेम प्रेम सब कोई कहे प्रेम न चीन्हे कोय।
आठ पहर भीना रहे, प्रेम कहावे सोय॥

४८

माला फेरते समय तथा ध्यान करते समय शुरुमें मनके ध्यानावस्थित न होनेका कारण

बारंबार बहुतसे मनुष्योंने एक भक्तराज महाराजसे कहा कि महाराज! आपके कथनानुसार हम प्रभुका स्मरण करनेके लिए बैठते हैं किन्तु मन स्थिर नहीं होता। ज्योंही माला फेरनेके लिए बैठो कि तुरतही बुरे बुरे विचार मनमें आने लगते हैं। ध्यानावस्थित होनेपर भी ऐसाही होता है। कौन जाने कौनसा पाप किया है कि मन स्थिर होताही नहीं। इसका उपाय क्या है? यह सुनकर दूसरे मनुष्यभी कह उठते कि तुम्हारी बात बिलकुल सत्य है, हमारा भी यही हाल है। अनन्तर एक मनुष्यने अपना-सा हालत वर्णन करते हुए कहा:—

महाराज! प्रतिदिन नहा धोकर एकान्त कोठरीमें आकर प्रभुका नाम स्मरण करनेके लिए मैं बैठ जाता हूँ। इस समय

हाथमें माला होती है, माथा नवाये रहता हूँ, आँखें मूँदे र
हूँ, मुँहमें रामका नाम रहता है और हृदयमें यह इच्छा
रहती है कि यदि कुछ भजन हो जाय तो अच्छा है, किन्तु
मिनट भी नहीं होता कि इतनेमें जिस बातका कभी ध्यान
न किया होगा वह स्मरण आ जाती है। इसे भूल जा
प्रयत्न करता हूँ कि इतनेमें कुछ समय पूर्व देखा हुआ
सामने नाचने लगता है। इसके पश्चात् जब मैं छोटा था उस
एक कुत्ता पकड़नेके लिए दौड़ा था यह स्मरण आ जाता
अनन्तर किसी मित्रके विवाहकी बात याद आ जाती है।
मन किसी स्थानपर आकृष्ट हो गया था यह बात स्मरण
जाती है, यद्यपि इस बातमें कोई तत्त्व नहीं है और अब मैं
अज्ञानतामें हुए मोहकी बातको बिलकुल भूल जाना चाहता
तो भी भजन ऐसे पवित्र अवसरों पर यह याद आ ही ज
है; और यदि ज़रा सचेत रहकर मनको ठिकाने न र
महान प्रभुके स्मरण तथा ध्यानके समय ऐसे पापके वि
मन फिरसे घूमने लगे। अनन्तर रोज़गार धंधेकी बा
स्मरण आ जाता है। फिर अख़बारमें पढ़ी हुई कोई बात
आ जाती है। भविष्यकी चिन्ता घेरती है। नित्यकर्मके ब
कार्य याद आ जाते हैं और फिर झगड़ेमें व्यवहृत कड़ी
याद आ जाती हैं और सामने घूमने लगती हैं। महारा
मेरी मालाका तो यह हाल है। मैं समझता हूँ कि आधा
माला फेरता होऊँगा किन्तु इस आधे घंटेमें सैकड़ों प्रका
भिन्न भिन्न गुल खिलते हैं। संसारके दूसरे काममें लगे रह
इतनी शीघ्रतासे प्राचीन तथा खोटे विचार मनमें नहीं
किन्तु जब शांतिकी आशासे माला फेरनेके लिए बैठता हूँ
मन इधर उधर भटकने लगता है और तभी यह बड़े शो

मारना चाहता है। महाराज! मैं सत्य कहता हूँ कि
आपके कहे अनुसार मैं स्मरण ध्यानके लिए बैठता हूँ किन्तु
उस समय मेरे मनका दूसरा हाल रहता है। इसका कारण
जानेकी कृपा कीजिये।

यह सुनकर भक्तराजने कहा—घड़ीकी कमानी छूटजानेपर
कुछ ज़ोर नहीं करती, किन्तु जब उसे कसने लगो तभी छूट
के लिये वह ज़ोर मारती है, ऐसेही मन जब छूटा होता है अर्था
व्यावहारिक कामकाजमें लगा रहता है तो वह कुछ ज़ोर नहीं
करता किन्तु जब उसे कसो अर्थात् ध्यानकी स्थितिमें लानेका
यत्न करो तब प्रारम्भमें छूट जानेके लिए तथा एकाग्र न होने
लिये बहुत ज़ोर मारता है, इससे उस समय हमारे मनमें बहुत
संकल्प-विकल्प हुआ करते हैं, इससे मन स्थिर नहीं होता
किन्तु एकबार ज़ोर करके ताली दे देनेपर जैसे कमानी छूट
नहीं सकती बल्कि उलटे घड़ीको चलाया करती है, इसी प्रका
प्रथम खूब परिश्रम करके यदि मनको एकाग्र कर लिया जाय
पीछे अंतरकी शांति तथा ईश्वरीय आनन्द मिला करता है।

इसके अतिरिक्त ध्यानके समय मन इधर उधर भट
रता है और आगे पीछेकी बातें स्मरण आया करती हैं, इस
सरा कारण यह है कि पतंग तागेके साथ बंधे रहनेपर जै
धर उधर नहीं जाता, किन्तु डोरीके ढीली पड़तेही या टूटने
नीचे ऊपर जाने लगता है, वैसेही जबतक इच्छित संसार
जंजालमें मन पड़ा रहता है तब तक इधर उधर वह नहीं भ
कता क्योंकि इच्छित जंजालही उसकी डोरी है, उससे
जानेपर बिना कारण वह कहीं जाता नहीं, किन्तु पहले
हम ध्यान जमानेके लिए बैठते हैं तब प्रारंभमें मन ढीली डो
सा होता है, जिससे गोता खाने लगता है, क्योंकि

समय तक मनको परमात्माका रंग नहीं लगा रहता, जि
इसओर वह जोरसे आकृष्ट नहीं होता बल्कि हम उसे उ
ओर ढकेलते हैं दूसरी ओर व्यवहारकी जंजालमें भी, जिसे
चाहता है, ध्यानके समय हम मनको ढीलाकर देते हैं,
नीचे गिरा हुआ पथम् ऊपरसे बिना आकर्षणका, ऐसी ध्य
प्रारम्भमें मनकी बीचकी स्थिति होती है, जिससे वह
उधर गोता खाया करता है और पिछली बातें भी सा
स्मरण आया करती हैं। इससे नामस्मरण तथा ध्यानके प्रारं
भक्तोंको बहुत संभालना पड़ता है, क्योंकि इस समय म
ऊपर लिखेअनुसार स्थिति रहती है और साथही वह आध
रहित भी होता है, इससे उसकी स्थिति छोड़े हुए कुछ
अथवा चाबुक मारे हुए लगाम-युक्त मस्त घोड़ेके समान
है। यदि ध्यानकी स्थितिमें लगना हो तो पीछेसे मनको धक्
मारो अर्थात् दुनियादारीके मिथ्यापनको समझनेका प्र
करो और आगे बढ़नेके मार्गमें आनन्द प्राप्त करनेकी कोशि
करो अर्थात् प्रभुकी महिमा समझो। इतना ज़ोर लगाये बि
ध्यान जमाना कठिन है। इससे भाइयो! महान प्रभुके प
नामकी माला फेरते समय प्रारम्भमें मनस्थिर न रह सके
उससे निराश न होकर तथा उसका कारण समझकर
स्मरण तथा ध्यानमें लगे रहो, इससे प्रभु कृपासे प्रेम
आयगा, जिससे शीघ्र ध्यान जमाना सीख जाओगे और सीख
पर ही सच्चा आनन्द मिल सकेगा, शुरूमें यदि मन न ठहरे
आनन्द न मिले तो भी प्रेमपूर्वक इसमें लगे रहो, इससे
कृपालु ईश्वर तुम्हारा सहायक होगा और याद रखोकि इस
सहायताके आगे कुछ भी कठिन नहीं है। इससे प्रेम रस
जरा गहरे गोता लगाकर तथा सच्ची परन्तु समझकर प्रभुके नाम

ा फेराकरो, इससे क्रमशः अपने आपही मन स्थिर
पगा और ईश्वरीय आनन्द मिलता जायगा। प्रार
यदि स्थिर न हो तो निराश न होकर उसे वशमें क
रहो, लगे रहो।

४८

कर्म तो जड़ है इससे प्रभु कृपा बिना अकेला कर्म कुछ
कर सकता

बहुतसे लोग समझते हैं कि सब कर्मसेही होता है,
क्तिमार्गवाले कहते हैं कि सब प्रभु कृपासे होता है फ
र्म तो जड़ वस्तु है। कर्म स्वयं कोई फल नहीं दे सक
र्मका फल देनेवाला सर्वेश्वर परमात्माही है। इससे का
लदाता प्रभुको मानकर दासभाव वाले भक्तगण प्रभु
भु कृपापर विशेष भार रखते हैं, इतनाही नहीं, बहुतसे मह
ई भी कहते हैं कि हम जिसे प्रारब्ध कहते हैं वह भी
ये हुए कर्मोंका ही रूप है। इससे अब यदि हम सब
र्मोंको करें, ईश्वरकी सेवा तथा स्मरणमें मनको ल
ौर प्रभुके ध्यान ध्यानमें ही लगे रहें तो प्रभु कृपासे प्रारब
ांसा की जाती है। श्रीकृष्ण भगवानने भी कहा है कि
ल जाय वैसी लकड़ीके समान ईश्वरीय ज्ञानसे सब
रत ही बल उठते हैं। अब विचार करो कि जब सब प्रब
र्म स्वयं बल उठनेवाले हैं, साथही उसका फलदात
श्वर ही है, तब ईश्वरको छोड़कर-ईश्वरकी कृपाको छोड़
र्मके जालमें किस लिए पड़े हो? इससे हे कृपाभि

करता हो और इसीमें उसे यदि आनन्द आता हो तो समझना चाहिये कि अभी हमारेमें प्रभु प्रेम नहीं आया है ।

> प्रेम छिपाये ना छिपै, जो घट परगट होय ।
> जद्यपि मुख बोलै नहीं, तउ नयन देत हैं रोय ॥
> मन पहुँचे तब लग रहे विषय वासना माँहि ।
> प्रेम बाणकी मारमें, अब लग आयो नाहिं ॥
> कबीर प्याला प्रेमका, अंतर लिया लगाय ।
> रोम रोममें रम रहा, और अमल क्या खाय ॥

५१

भक्तोंको दूसरोंका दोष नहीं देखना चाहिये

मैंने देखा है कि जो धर्ममें ज्ञानको बड़ा मानते हैं वे कर्मकांड ा कहते हैं, जो निर्गुणको माननेवाले होते हैं वे ईश्वरके गुण स्वरूपकी उपासना करनेवालोंकी निंदा किया करते , जो धर्ममें त्यागको उच्च पद देते हैं वे संसारी भक्तोंको कुछ ी नहीं गिनते, जो ध्यानको बहुमूल्य समझते हैं उन्हें प्रभुके दिरमें नाचना कूदना या गाना बजाना अच्छा नहीं लगता, ो ईश्वरके नाम स्मरणको मुख्य मानते हैं वे कर्मकांडका कुछ ल्य नहीं समझते, जो पहले रोज़गार-धंधेमें लगे रहते हैं ौर पीछे परमार्थ करते हैं वे तपकरनेवालोंका मूल्य नहीं मझते, जो प्रभुको भोग लगाकर उच्च प्रकारके प्रसाद खाते और दूसरोंको खिलाते हैं वे शरीरको कष्ट देनेवाले तपस्वियोंकी िंदा करते हैं, जो परिश्रम करके रोटी कमाते हैं वे मुफ्त ीख माँगनेवाले साधुओंके लिए खेद प्रकट करते हैं, जो

नाम लिया तिन सब लिया, सकल शास्त्रका भेद।
बिना नाम नरके गये, पढ़ पढ़ चारों वेद॥
श्रीपतकी बिन जानकी, धर्म नाम बिन एक।
राम नामकी टेकसे, तर गये संत अनेक॥
नाम जपो चाहे कोई भांति, तप तीरथ कर जोग।
भावे पाखंड छोड़िके, नामे नामे योग॥
बुद्धीकी हद ज्ञान है, यह सिद्धान्त का मान।
ज्ञानकी हद हरिनाम है, समझनकी हद जान॥

५०

हमारेमें प्रभु प्रेम आया है या नहीं, यह कैसे जाना जा सकता है ?

जब हमारे मनमें प्रभु प्रेम आता है तभी हम पवित्र शास्त्रों में कही हुई प्रभुकी आज्ञा पालन कर सकते हैं, तभी महात्म द्वारा बताये हुए पापोंसे बच सकते हैं, तभी भक्तगण हमें प्या लगते हैं, तभी हमें प्रभु भजनमें बड़ा आनन्द आता है, त हम दूसरोंको ईश्वरके मार्गमें ला सकते हैं और तभी भगव इच्छाके अनुसार चलकर किसी भी स्थितिमें आनन्दसे र सकते हैं। जब हमारे स्वभावमें इस प्रकारका परिवर्तन हो लगें जब हमारे जीवनमें इस प्रकारकी उत्तम मिठास आ लगे और जब हम दिन प्रतिदिन अच्छेसे अच्छे ईश्वरी आनन्दमें रहने लगें तब समझना चाहिये कि हमारेमें अब प्र प्रेम आ रहा है इसके विपरीत संसारके जंजालोंमें, व्यवहारों हाय हायमें और क्षणिक तुच्छ प्रपंचोंमें यदि हमारा मन घूम

करता हो और इसीमें उसे यदि आनन्द आता हो तो समझना चाहिये कि अभी हमारेमें प्रभु प्रेम नहीं आया है।

> प्रेम छिपाये ना छिपे, जो घट परगट होय।
> जदपि मुख बोले नहीं, तऊ नयन देत हैं रोय॥
> मन पक्षी तब लग उड़े, विषय वासना माँहि।
> प्रेम बाजकी झपटमें, जब लग आयो नाँहि॥
> कबीर प्याला प्रेमका, अंतर लिया लगाय।
> रोम रोममें रस रहा, और अमल क्या खाय॥

५१

भक्तोंको दूसरोंका दोष नहीं देखना चाहिये

मैंने देखा है कि जो धर्ममें दानको बड़ा मानते हैं वे कर्मकांड बुरा कहते हैं, जो निर्गुणको माननेवाले होते हैं वे ईश्वरके सगुण स्वरूपकी उपासना करनेवालोंकी निंदा किया करते हैं, जो धर्ममें त्यागको उच्च पद देते हैं वे संसारी भक्तोंको कुछ भी नहीं गिनते, जो ध्यानको बहुमूल्य समझते हैं उन्हें प्रभुके मंदिरमें नाचना कूदना या गाना बजाना अच्छा नहीं लगता, जो ईश्वरके नाम स्मरणको मुख्य मानते हैं वे कर्मकांडका कुछ मूल्य नहीं समझते, जो पहले रोज़गार-धंधेमें लगे रहते हैं और पीछे परमार्थ करते हैं वे तपकरनेवालोंका मूल्य नहीं समझते, जो प्रभुको भोग लगाकर उस प्रकारके प्रसाद खाते हैं और दूसरोंको खिलाते हैं वे शरीरको कष्ट देनेवाले तपस्वियोंकी निंदा करते हैं, जो परिश्रम करके रोटी कमाते हैं वे मुफ्त भीख माँगनेवाले साधुओंके लिए खेद प्रकट करते हैं, जो

तीर्थोंमें घूमनेवाले हैं उन्हें एक आसनवाले एकान्तवास
अच्छे नहीं लगते. जो त्यागी हैं वे संसारियोंके लिए दुखी
हुआ करते हैं; जिससे वे कहते हैं कि महाराज गोपीचंद
भर्तृहरि और महात्मा गौतमबुद्ध जैसे लोगोंने जब कि वैराग्यका
आनन्द लेनेके लिए बड़ा बड़ा राज्य छोड़ दिया तब तुम
टूटे हुए घरके लिए किस मोहमें पड़े हो? जो साधारण भी
प्रभुको बाहरी वस्तुओंका बलिदान देते हैं वे भी आगे बढ़े हु
लोगोंकी दृष्टिमें तुच्छ मालूम पड़ते हैं, और जो भक्ति
बाहरकी क्रियायोंका पालन करनेमें बहुत चुस्त रहते हैं उनका
सुशिक्षित लोग तिरस्कार करते हैं। यह सब देखकर हम
पूछते हैं कि इसमें कौनसा सत्य है? ये सब तो एकके पर
विरुद्ध बातें हैं।

भाइयो! हमें ऐसा मालूम पड़नेका कारण यह है कि हम
केवल बाहरकी क्रियायें देखते हैं, किन्तु ये सब भिन्न भिन्न
क्रियायें किस लिए की जाती हैं, उनका परिणाम क्या है और
उसके करनेवाले किस संयोगमें हैं? इन बातोंकी हम खोज
नहीं करते, इससे अपने मनपर विश्वास रख एकही ओर
दौड़ जाकर, बिना किसी तरफ देखे-सुने पहलेसे ही उसके
लिए बुरे विचार रख लेते हैं। इससे हमें ऐसा लगता है कि
सब मनुष्य हमारेही मनके हो जायँ तो अच्छा हो, किन्तु या
नहीं सोचते कि यह हो कैसे सकता है क्योंकि प्रत्येक मनुष्यका
अधिकार अलग अलग होता है, प्रत्येक मनुष्य अलग
अलग अवस्थामें होता है, उनका पुरुषार्थ भिन्न-भिन्न प्रकारका
एवं कम वेशी होता है और प्रत्येक मनुष्यको अलग अलग गुरु
तथा भिन्न प्रकारका ज्ञान मिला रहता है। इससे बाहरी
क्रियाओंमें सब देशके, कालके तथा सब लोग कभी भी एक मत

हीं हो सकते और ऐसा होनेकी आवश्यकता भी नहीं है क्योंकि बाहरी क्रियायें यद्यपि भिन्न हैं तो भी वे एकही प्रभुके लिए तथा आत्माका कल्याण करनेके लिए की जाती हैं। इतनाही नहीं यदि और भी गम्भीरतासे विचार किया जाय तो सबका परिणाम एकही मालूम होगा जैसा कि एक महात्मा कह गये हैं। दरजीका कपड़ा सीनेकी सूई एक रीतिसे चलती है, कुम्हारका चक्कर दूसरी रीतिसे चलता है, किसानका हल तीसरे प्रकारसे चलता है और लोहारका हथौड़ा चौथी रीतिसे चलता है। इसके अतिरिक्त पेन्टरकी कूँची चलानेकी रीति जुदी होती है, मालीके फूल गूंथनेकी विधि भिन्न होती है और ग्वालेकी दही मथनेकी विधि भिन्नही होती है। इस प्रकार देखनेसे भिन्न-भिन्न धंधा रोज़गारवालोंकी काम करनेकी रीति अलग अलग मालूम पड़ती है किन्तु इन सबका हेतु तथा परिणाम एकही होता है। सब काम करनेवालोंकी यही इच्छा होती है कि हमारा निर्वाह हो, हमारी आबरू बढ़े, हमें चार पैसा मिले। हम सुखी हों, अपने भाई बहनों की सहायता कर सकें तथा भगवद् इच्छासे जो काम मिला है उसे उत्तमतासे करके ईश्वरको प्रसन्न कर सकें, इसी मुख्य हेतुसे सब अपना-अपना काम करते हैं। ये काम यद्यपि एक दूसरेसे जुदा-जुदा हैं, कामोंके करनेकी रीति जुदी जुदी है तथा उनका साधन भी भिन्न है तथापि उन सबका हेतु एकही है तथा सब अपने अपने पुरुषार्थके अनुसार और आसपासके संयोगसे कमवेशी सुखी होनेका एक प्रकारकाही फल प्राप्त करते हैं। ऐसा होनेपर भी कोई दरजी अपनी विद्यासे प्रसन्न होकर तथा यह देखकरकि हमें खूब लाभ होता है और दूसरोंके कामोंकी खूबी व लाभको न देखकर तथा यह समझकर कि दूसरोंको भी हमारे समान

लाभ हो तो अच्छा हो, ऐसी धारणा करके शुभआशासे यह इच्छा करे कि दुनियाके सब लोग दरजीका कामकरें तो अच्छा हो, संयोगवश उसे ऐसा लगना असंभव नहीं है, तो क्या उसका ऐसा सोचना उचित है ? और यह क्या संभव हो सकता है ? ऐसेही कुंभहार भी सोच सकता है तथा और और लोग भी सोच सकते हैं, किन्तु भाइयो ! ज़रा विचार करो कि उनकी यह समझ क्या उचित है ? दुनिया भर क्या कभी कुंभहार हो सकती है ? कभी नहीं और यदि संसार भर कुंभहारकाही काम करने लगे तो दूसरे कार्य कैसे होंगे ! और जगतकी कैसी खराबी हो जायगी ! इसका तो ख्याल करो ! इसी प्रकार याद रखो कि:—

भिन्न-भिन्न धर्मकी तथा भिन्न-भिन्न लोगोंकी धर्मके निमित्त भिन्न-भिन्न जो क्रियायें होती हैं वे सब अपने अपने अधिकारानुसार थोड़ी बहुत आवश्यक हैं। यदि उनमें सुधारकी आवश्यकता हो तो यह अलग बात है, किन्तु इतना तो निश्चित है कि दुनिया भरमें कभी भी एकही प्रकारकी क्रिया न हुई है न होगी, इसपर भी लोग ऐसा कहते हैं कि हमारीही रीति सत्य है तथा और लोगोंकी खराब है, इससे जगतमें हमारीही रीति नीति चलनी चाहिये, उन्हें उपरोक्त दरज़ी या कुंभहारके समान अपूर्ण विचारवाला समझो। यद्यपि उनका हेतु अच्छा है और उन्हें उस क्रियासे लाभ हुआ, उससे दूसरोंको भी लाभ हो; इसी शुभेच्छासे वे ऐसा कहते हैं, तथापि यह अधूरी समझ है तथा अपूर्ण ज्ञान है, क्योंकि जैसे कुंभहारके काममें धन मान और सुख मिलता है तथा अपने अपने कर्मोंमें निष्ठा रखनेसे ईश्वर प्रसन्न होता है और अंतमें कल्याण होता है वैसेही पेंटरकी कलामें, मालीके काममें, लोहारकी कारीगरीमें और

दाने तथा किसान आदिके सबकाम करनेवालोंको अ
अपने काममें ऐसाही लाभ होता है, वैसेही तप करने वालों
अंतःकरणकी शुद्धि, मानसिक आनन्द, आत्मिक बल, उच्च
पाप वासनाका क्षय, और ईश्वरके प्रेम आदि जो बड़े-
लाभ होते हैं, वे सब लाभ कर्मकांडियोंको, ध्यान धरनेवाल
को, नामस्मरण, परोपकार, सेवा आदि करनेवालोंको त
ज्ञानियोंको सबको थोड़े बहुत होते हैं, किन्तु हम जिस मा
पड़े रहते हैं उसीको देख पाते हैं, इससे दूसरे विषयोंमें क्या ल
होता है यह नहीं जानते और यह वस्तु हमें अच्छी लगी है
सबको अच्छी लगेगी ऐसा समझ बैठते हैं, किन्तु यह विच
नहीं करते कि जिस संयोगमें हम हैं उस संयोगमें सब लोगों
जाना संभव नहीं है। ऐसी उत्तम समझ न होनेसे अप
मनकी निर्बलताके कारण हम दूसरोंको व्यर्थ उलटे मार्ग
जाताहुआ समझकर द्वेष करते हैं, किन्तु ऐसी भयङ्कर
करना महापाप है। इस पापसे बचनेके लिए बारम्बार स्
स्थानपर घुमाफिराकर यह कहा गया है कि हरिजनोंको दूसरों
दोष नहीं देखना चाहिये। इससे भाइयो! धर्मकी कि
भी चालको खराब समझनेके पहले इस प्रकार विचार करो
सर्व व्यापक, सर्वशक्तिमान, आनन्दस्वरूप, परमात्माके राज
कोई भी क्रिया निष्फल नहीं है, किन्तु हम यह भेद न
समझते, यह हमारीही भूल है। यदि कहीं भी दोष दिखा
पड़े तो समझ लो कि यह हमारे मनकी निर्बलता है त
हमारी अपूर्णता है ऐसा समझकर किसीसे भी द्वेष न क
हुए अपनी आत्माके कल्याणके लिए समता रखना सी
समता रखना सीखो।

नारायण निज हियमें, अपनो दोष निहार।
ता पीछे तू औरको, अवगुण भले विचार॥
तुझे पराई क्या पड़ी, तू अपनी निरवेड़।
तेरी जहाज दरियाव में, डूबे नहिं तू खेड़॥

५२

पाप

एक शिष्यने अपने गुरुसे पूछा—महाराज ! पाप क्या है गुरुने जवाब दिया कि भगवानकी आज्ञा तोडनेका नाम पाप है जो न करना चाहिये वह कार्य करना या विचार करना पा है, शास्त्रकी आज्ञानुसार जो हमें करना चाहिये उसे न करने नाम पाप है, सारांश, अनन्त ब्रह्माण्डके नाथका सामना करने नाम पाप है।

पाप ऐसी बुरी वस्तु है कि जिसके कारण श्रीभगवान सेवामें रहनेवाली परियोंको भी राक्षस योनिमें जाना पड़ा था

अपने शत्रुको, अग्निके चिनगारीको तथा पापको कभी छोटा मत समझो, इससे तो सदा डरतेही रहो।

कोई भी लड़का जब अपने पिताका अपमान करता है, त उसके पिताको बहुतही बुरा लगता है, ऐसेही जब हम पाप करते हैं तब हमारे पिता परमेश्वरको हमारे लिए बड़ा दु होता है, इससे भक्तोंको सदा पापसे दूर रहना चाहिये।

सिंहका बच्चा जब छोटा होता है तभी वशमें किया सकता है, किन्तु बड़ा होनेपर उसे काबूमें नहीं रखा जा सकता वैसेही पापको प्रारंभमें ही रोकना चाहिये। व्यसन रूप हो ज पर वह सरलतासे नहीं छूट सकता।

जिस ऊँगलीमें साँपने काटा हो उसे यदि तुरत ही काट दिया जाय तो मनुष्य बच जाता है, किन्तु यदि देर हो जाय विष देह भरमें चढ़ जाता है और थोड़ीही देरमें मृत्यु हो ती है, इसी प्रकार पाप भी ज्योंही हृदयमें आये त्योंही यदि दे दूर कर दिया जाय तो दूर हो सकता है, नहीं तो व्यसन- र होनेपर नरकमें ले जाता है, इससे अभी भी समय है त जाओ।

छोटे पौधेको केवल ऊँगली मात्रसे उखाड़नेसे जड़ सहित खड़ जाता है, किन्तु बड़ा वृक्ष होनेपर उसे हाथी भी नहीं खाड़ सकता, ऐसेही याद रखो कि प्रारंभमें ही पाप रुक कता है, बढ़ जानेपर सरलतासे नहीं रोका जा सकता।

हलाहल विष खा लेनेपर कोई भी जी नहीं सकता, वैसेही प करके कोई सुखी नहीं हो सकता।

कड़ुआ भोजन खानेसे उसे उलटीमें निकाल देना पड़ता , वैसेही जो अधर्मसे धन लेता है, उसकी नीतिसे कमाया या धन भी जाता रहता है।

तुंबीको चाहे जितने पानीमें डुबो दो किन्तु अवसर मिलते ी वह ऊपर आये बिना नहीं रहेगी, वैसे ही पापको चाहे तना छिपाओ, तोभी समय पाकर अवश्य प्रकट हो जायगा; ससे यथाशक्य पापसे बचनेका प्रयत्न करो और जो पाप हो या है उसको शुद्ध अंतःकरणसे पश्चात्ताप करके महान पालु प्रभुसे क्षमा प्राप्त करनेके लिए हाथ जोड़कर दीनता र्वक कहो :—

अपरंपार प्रभु अवगुण मोरा, क्षमा करोरे मुरारी रे (टेक)
दया धर्मकी बात न जानूं, अधर्मका अधिकारी रे।
पापी हूं मैं झूठा बोलनो, बहु दिरहूं परनारीरे ॥ (अप०)

साधु दुख्या, ब्राह्मण दुख्या, भक्त दुख्या बहु भारी रे।
मातुपिता दोनोंको दुख्या, गरीबनको दियो गारी रे ॥ (अप०)
भजन थाय तहँ निद्रा आवे, परनिंदा लागे प्यारी रे।
मिथ्या सुखमें आनंद मानूँ, बहु राखूँ हुशियारी रे ॥ (अप०)
संसार सागर महाजल भरियो, चौदिसि भरियो भारी रे।
तुलसीदाससे गरीबनकी विनति अबतो लो उबारी रे ॥ (अप०)

५३

भगवानका गुण गानेसे ईश्वरकी ज्ञान-प्राप्तिका फल मिलता है

भाइयो ! श्रीमद्भगवद्गीतामें श्रीकृष्ण भगवानने कहा है कि हे अर्जुन तू सब पापियोंसे भी अधिक पापी हो, तो भी क्या कारण है कि तू ज्ञानरूपी जहाजसे पापरूपी महासागरको तर जायगा ? फिर कहते हैं—हे अर्जुन ! जैसे अग्नि घासको जला डालती है वैसेही ज्ञान पापको नष्ट कर देता है। अभी भी ईश्वरके ज्ञानकी महत्ता बतानेमें भगवानको संतोष नहीं हुआ है, इससे वे कहते हैं कि ज्ञानके समान पवित्र कार्य और दूसरा कोई नहीं है, किंतु यह ज्ञान धीरे-धीरे मिलता है। अभी भी ज्ञानकी विशेषता बताते हुए भगवानकी तृप्ति नहीं हुई है इससे वे कहते हैं कि भक्त सब अच्छे हैं किंतु ज्ञानी तो मेरी आत्मा ही हैं।

भाइयो ! ज्ञानकी ऐसी महत्ता है, क्योंकि ईश्वर स्वयं ज्ञान-स्वरूप है, इससे "ज्ञानी मेरी आत्मा हैं" ऐसा प्रभु कहते हैं। ज्ञानके ऐसी उत्तम होनेका कारण यह है कि इससे यह विश्वास हो जाता है कि ईश्वर सत्य है तथा और सब मिथ्या हैं। सत्य ज्ञानसे जीव ईश्वरमें तल्लीन होकर ईश्वरमय हो

जाता है और बिना किसी स्वार्थके स्वाभाविक आकर्षणसे ही आत्मा परमात्माकी ओर आकृष्ट हो जाती है। इतना ज्ञान हो जानेपर ही आत्मा परमात्माके बीचमें कोई पर्दा नहीं रह जाता और इसीसे प्रभु कहते हैं कि ज्ञानी मेरी आत्मा है। यह महानतत्त्व ज्ञान लेनेपर जिनका विकार दूर हो गया हो, ईश्वर- । महिमा जानकर जो ईश्वरमय हो गये हों, जीवनकी क्षण- गुरता तथा मायाका मिथ्यापन जानकर जो तटस्थ साक्षी र बन गये हों और स्वभावतः लोहचुम्बकके समान निस्वार्थ पसे जिनकी आत्मा परमात्माकी ओर खिंच गयी हो तथा नकरी दिव्य चक्षुसे जिनका जीव तथा ईश्वरके बीचका पर्दा ट गया हो, ऐसे प्रेमी अभेद दृष्टिवाले महाज्ञानी ईश्वरका ण-गानके अतिरिक्त और कर क्या सकते हैं? जिसका सब द दूर हो गया है जो अभेद दृष्टिवाले निर्विकार हो गये हैं नके और हो ही क्या सकता है। जगत मिथ्या है यह समझमें जाय और एक ईश्वरके अतिरिक्त जिसे और कुछ नहीं दिखायी पड़ता, उनकी जगतके किसी काममें क्या आसक्ति हो सकती है? किसीमें भी उनकी आसक्ति रह नहीं सकती; तिसपर भी ऐसे महाज्ञानी भक्तगण सहज समाधिकी स्थितिमें रहनेपर भी महान ईश्वरका गुण गाया करते हैं और उसकी महिमा सोचा करते हैं। ऐसा होनेमें जन्म-जन्मान्तरमें जो ज्ञान प्राप्त होता है जिससे बड़ेसे बड़ा तथा उत्तमसे उत्तम कर्म बनता है, वह कार्य मनुष्यकी जानकारीमें सर्वशक्तिमान ईश्वरका गुण गानाही है। यह महान कार्य ईश्वरका गुण गानेवाले भक्त सर्वदा किया करते हैं, इससे महान ईश्वरका पवित्र गुण गानेसे ज्ञानका भी समावेश हो जाता है क्योंकि सच्चे ... शुद्ध अन्तःकरणसे ईश्वरका गुण गानेसे

धीरे अपने आपही स्वतः सिद्ध ईश्वरके स्वरूपका ज्ञान
ाता है, किन्तु ऐसा सच्चा ज्ञान प्राप्त करनेमें बड़ी कठिनता
ी है और यह विरलेको ही मिलता है, किन्तु ईश्वरका
गानेमें किसीको कठिनता नहीं पड़ती। यह सबसे ही
ा है, इससे शास्त्रमें कहा है कि प्रभुका गुण गानेसे ज्ञान
का फल मिलता है। इससे भाइयो! महामंगलकारी,
दाता, आनन्दस्वरूप, पवित्र पिता महान ईश्वरका गुण
, महान ईश्वरका गुण गाओ।

५४

पति-पत्नीका धर्म

मारे पवित्र शास्त्रकी यह आज्ञा है कि पति-पत्नी दोनोंको
सलाह करके तथा हिल मिलकर रहना चाहिये क्योंकि
दोनोंकी सम्मतिसे कार्य होता है उस घरमें सच्चा सुख
है, इतनाही नहीं उनके लडके आदि भी उन्हींके समान
ते हैं, इसका परिणाम यह होता है कि कुटुम्ब, जाति तथा
सुधारकी नींव जम जाती हैं। इससे सब लोगोंको पति
ा धर्म जानकर उसीके अनुसार चलनेकी आवश्यकता है।

ेच्छासे यदि घरमें लडके अधिक उत्पन्न हो जाँय तो
न होकर मनमें यह समझना चाहिये कि वे भी अपना
लेकर आये हैं तथा उनके भागसे हमाराभी भला होगा
समझकर प्रसन्न होना चाहिये।

दि लड़का न हो तो दुखी न होना चाहिये क्योंकि यह
यरकी माया है, इसमें हमारा कोई हक नहीं है। हमारे

दुःखी होकर हाय हाय करनेसे प्रभुका-कर्मका-नियम टल नहीं सकता, इससे यदि प्रभुकी ऐसीही इच्छाहो तो इसमें भी शांति रखना चाहिये तथा सोचना चाहिये कि लड़कोंको पढ़ाने लिखानेकी तथा उनमेंसे अच्छे बुरे निकलने आदिकी जोखिमसे प्रभुने हमें बचा रखा है और इसके बदलेमें सत्संग, परमार्थ तथा भक्ति करनेका अवकाश प्रभुने दिया है, ऐसा समझकर प्रभुकी इच्छामें अपनी इच्छा समझ आनन्दसे रहना चाहिये। प्रायः ऐसा देखा जाता है कि पति पत्नीका स्वभाव एक दूसरेसे भिन्न होता है। स्त्री चिड़चिड़े स्वभावकी, लोभी, बड़बड़ाने वाली, वहमी, बहुत खर्चालु तथा मूर्ख हो सकती है, इसी प्रकार पुरुष गाली देनेवाला, दुर्बल, क्रोधी, धर्म-विरुद्ध चलने वाला, बुरे व्यसनों वाला तथा अपने श्वसुरसे शत्रुता रखने वाला हो सकता है तो भी शांतिपूर्वक एक दूसरेको निभा ले जाना दोनोंका कर्त्तव्य है, क्योंकि-विवाहके पवित्र संबंधकी रक्षा करना यह ईश्वरकी आज्ञा है। विरुद्ध स्वभावके कारण हम विवाह-संबंध तोड़ नहीं सकते, और न यह एक दिनकी बातही है। इसी स्थितिमें हमें जीवन भर रहना है, और जिसका जो स्वभाव पड़ गया है वह थोड़ी देरमें बदला नहीं जा सकता। इसलिए विरुद्ध स्वभावके कारण जीवन भर प्रति दिन हृदयकी होलीमें जलो मत बल्कि एक दूसरेको निभाकर अपनी आत्माके कल्याण तथा महान प्रभुके लिए भगवद् इच्छाके अधीन होकर शांतिसे रहना सीखो। यदि इस प्रकार आनन्दसे रहोगे तो हमारा दृष्टांत देखकर हमारे लड़के भी सुधरेंगे, किन्तु यदि हम अपना मिजाज बरामें नहीं रक्खेंगे और गाली-गलौज तथा मारपीट करेंगे तो हमारा भविष्य तो बिगड़ेगाही साथही साथ हमारे लड़कोंका भी जीवन बिगड़ेगा

सा न होने देनेके लिये पति पत्नीको एक दूसरेकी भूलको न खकर शांतिपूर्वक रहना चाहिये।

पति पत्नीको जिस प्रकार एक दूसरेके स्वभावको निभा ले ना चाहिये वैसेही अचानक आनेवाली आफ़तें, जैसे कि रीबी, दुर्भाग्य तथा कुटुम्बमें कमी कमी आ पड़ने वाले खोंके समय भी धैर्य रखना चाहिये। ऐसे समयपर ताना रकर एक दूसरेके हृदयको न दुखाकर जिस प्रकार प्रभु रखे सी प्रकार मिलजुलकर रहनेमें ही उत्तमता है। यही स्त्री रुपको धर्म है और ऐसे संकटके समय हम एक दूसरेके साथ स प्रकार व्यवहार करते हैं प्रभु भी वैसेही हमारे साथ र्तता है, इससे ऐसे समयपर धैर्य धरकर जैसे हो तैसे स्त्री रुपको एक दूसरेको निभा ले जाना चाहिये।

इसके अतिरिक्त भविष्यमें क्या होगा तथा हमारे लड़के च्चोंका क्या होगा? आदि विचारोंसे स्त्री-पुरुष दुखी हुआ ते हैं और अपनी आयुष्यको आधा कर डालते हैं; किन्तु यह चार नहीं करते कि जो प्रभु अनन्त कालसे अनन्त ब्रह्मांडको ला रहा है और हमारा भी, अभी तक पालन करता आता यह सर्वशक्तिमान जगत्पिता हमारे लड़कोंका भी पालन गाही, क्योंकि वह अपने जनोंका सदा बहुत ख्याल रखता ऐसा समझकर तथा विश्वास रखकर हम स्त्री पुरुषोंको दा आनन्दमें रहना चाहिये।

बाजेकी एक फल बिगड़नेसे जैसे सब मंडलीका रस उड़ ता है और जैसे अग्निकी चिनगारीसे बड़ा बड़ी आग भभ तो है वैसेही यदि कुटुम्बमें कोई मनुष्य बहुत लोभी, क्रोधी, भिचारी या ऐसही कोई दुर्गुणोंवाला हो तो वह कुटुम्बको ल देता है, इससे किसी भी प्रकारके दुर्गुणमें न फँसनेका

री पुरुष दोनोंको ध्यान रखना चाहिये क्योंकि हमारा पाप
वल हमींको दुखी करके नहीं रुक जाता, बल्कि उसका छींटा
हुत दूर तक उड़ता है, इससे हमारे दोषके कारण दूसरोंको
रान न होना पड़े, इसका ध्यान रखना प्रत्येक स्त्री पुरुषका
र्त्तव्य है।

हमें समझना चाहिये कि यह कुछ देवताओंके रहनेकी
अमरावती नहीं है बल्कि मनुष्यके रहनेका मृत्युलोक है, इससे
यहाँ भिन्न-भिन्न स्वभाव, रोग, जंजाल तथा दुख आदि अवश्य
होंगे, किन्तु इन सभोंके बीच धर्मका बल रखकर तथा प्रभुपर
दृढ़ विश्वास रखकर शान्तिपूर्वक आनन्दसे रहनेमें ही
हमारी विशेषता है और यही पति पत्नीका धर्म है।

जिस कुटुम्बमें छोटे बड़े सब एक दूसरेके साथ मंत्रणा
करके काम करते हैं, जिनमें किसी भी प्रकारका पाप कर्म नहीं
वास करता और जो अपने धर्मानुसार चलकर जिस प्रकार
प्रभु रखता है आनन्दसे रहते हैं, वे इस संसारमें ही रहकर
अपने घरमें ही स्वर्गके समान सुख भोगते हैं।

५५

हमारे देशके कथा कहने व सुननेवालोंका एक नमूना

एक गाँवमें किसी महाजनके यहाँ भागवतका सप्ताह बैठा
था। कथा कहनेवाले व्यास अपनी पाण्डित्य ही दिखानेमें लिप्त
थे। श्रोता कैसे हैं और उन्हें किस प्रकार समझाना चाहिये,
इसका उन्हें ज़रा भी ख्याल नहीं था। जिस प्रकार उन्होंने
प्राचीन शास्त्रोंसे सीखा था ठीक वैसे ही कहते चले जा रहे

थे। बीच-बीचमें कठिन संस्कृत शब्द जान बूझकर लाते थे और जहाँ सरल शब्दोंसे काम चल सकता था, वहाँ कठिन शब्द प्रयोग करनेकी उनकी आदत थी। बीच-बीचमें द्वैत अद्वैतका झगड़ा उठा लेते, शंकरका अद्वैत सिद्धांत समझाते और उपनिषदोंके प्रमाण भी देते थे। गाँवके एक गरीब ब्राह्मणको, जो बिलकुल ही पढ़ा लिखा न था किन्तु गाँवका पुरोहित होनेसे जिसे मिश्रजीके स्थानपर बैठाया गया था और जो व्यासजीको बढ़िया बढ़िया भोजन, पूरी, मिठाई आदि बनाकर खिलाता था। वह ब्राह्मण व्यासजीकी बातें सुनकर बिना कुछ समझे बूझे उनकी प्रशंसा करता था, इससे सब लोग समझते थे कि हमारा पुरोहित बड़ा विद्वान है और व्यासजी महाराज बड़े भारी पंडित हैं, यह सोच सोचकर सब प्रसन्न होते थे, किन्तु व्यासजीकी पंडिताईमें से उसे कुछ मिलता नहीं था, और न उसे यही ज्ञात था कि व्यासको उसके प्रशंसाकी आवश्यकता है या नहीं। पंडित अपनी पंडिताई दिखानेके लिए कठिन शब्दोंका प्रयोग करता था तथा चिल्लाकर बोलता था जिससेकी महाजनका घर गूंज उठता था, क्योंकि वह समझता था कि आवाज़की खूबीसे ही लोगोंको खींच रखनेमें बड़ी बहादुरी है। इसी कारणसे वह बहुत ज़ोर ज़ोरसे पढ़ता था और शरीर तथा आवाज़ अच्छी होनेसे दिन भर चिल्लानेमें उसे कठिनता नहीं पड़ती थी।

इस प्रकार पाँच दिन व्यतीत होनेपर वहाँपर बैठी हुई एक वृद्धाके आँखमें व्यासजीने आँसू देखा। तब उन्होंने समझा कि मेरी कथाका इसपर बड़ा असर हुआ है जिससे इसके आँखोंमें आँसू आ गये हैं। ऐसा समझकर उस वृद्धाकी ओर देखकर व्यासजी और भी जोर जोरसे कहने लगे।

अनन्तर दूसरे दिन वह स्त्री वहाँ आकर व्यासजीकी वाणी सुनकर रोने लगी, तब व्यासजीसे रहा न गया। उन्होंने उस स्त्रीसे कहा—आप तो बड़ी भक्त मालूम पड़ती हैं! भागवतपर आपका बड़ा प्रेम है, किन्तु मुझे बताइये तो जरा कि इसके किस प्रसंगसे आपके आँखोंमें आँसू आया! कल भी आपकी आँखें डबडबायी हुई थीं और आज तो आप रो रही हैं, इसका कारण क्या है?

उस बुढ़ियाने कहा—भाई! मैं यहीं पड़ोसमें रहती हूँ। आज आठ दिनसे तेरा चिल्लाना सुन रही हूँ। तुझे जैसे चिल्लानेका रोग हुआ है वैसे ही दो महीनाके ऊपर हुआ मेरे पाड़े (भैंसका बच्चा) को भी हुआ था, जिससे आठ दिन तक चिल्ला चिल्लाकर वह नवें दिन मर गया। वैसे ही तुम्हें भी चिल्लानेका रोग हो गया है और दिन भर चिल्लाया करते हो, इससे दो तीन दिनमें जब तू मर जायगा तो तेरे स्त्री-पुत्रका क्या होगा? वे सब बिचारे तो रोकर मर जायँगे और तू अभी ऐसी युवावस्थामें ही मर जायगा, यह सोचकर मुझे रुलाई आती है क्योंकि ऐसे भागवतसे बचते नहीं। मेरा पाड़ा जैसे चिल्ला चिल्लाकर मर गया वैसे ही तू भी मर जायगा, इसीका मुझे सोच है। भाई! मैं कथा-वथा कुछ जानती नहीं और जो कुछ तू बकता है वह मेरी समझमें आता नहीं, किन्तु तुझे चिल्लानेका रोग हो गया है यह देखकर मुझे रुलाई आती है।

यह सुनकर व्यासने कहा—तू पागल हो गयी है! इसके भाग्यमें क्या भागवत हो सकती है? यद्यपि मुँहसे व्यासने ऐसा कहा किन्तु उसके मनमें क्या असर हुआ होगा यह वही जाने।

भाइयो! हमारे देशमें अब ऐसे ही चिल्लाकर कथा कहनेवाले हैं और ऐसे ही प्रेमी सुननेवाले हैं, तब दरिद्रता कहाँसे

र होगी ? जब तक हमारी कथाओंकी यह दशा रहेगी तब
क शास्त्र विचारा क्या करेगा ? इसलिए, लोगोंके समझ
तकने लायक सादी, सरल भाषामें ही कथा कहना चाहिये।
जब ऐसा होगा तभी लोगोंकी सच्ची सेवा हो सकेगी और
तभी लोगोंमें नीति, धर्म, तथा चरित्रका बल बढ़ सकेगा और
तभी लोगोंमें नवीन विचार फैलेंगे। इससे विद्वान बंधुओ।
ज़रा अपनी विद्वताको कम करके, लाखों अज्ञानी समझ सकें
ऐसी सरल भाषामें ज्ञानका प्रचार करो, इससे नीति-धर्म फैलेगा
और प्रभु-प्रेम आयेगा और तभी सच्चा कल्याण होगा।

५६

जहाँ मन, बुद्धि, वाणी या कर्म पहुँच नहीं सकता वहाँ हम कैसे पहुँच सकते हैं

सब शास्त्र और महात्मागण कहते हैं कि हमारा स्थूल दे
ईश्वरके पास पहुँच नहीं सकता, इन्द्रियोंसे ईश्वर नहीं जाना
जा सकता, वाणी वहां पहुँच नहीं सकती, मन वहां जा
सकता नहीं, बुद्धि उसे पकड़ सकती नहीं, और हमारे कर्म
भी वहां पहुँच नहीं सकते, क्योंकि ये सब स्थूल वस्तुएं हैं,
जड़, और अपूर्ण हैं अपनी सत्ता नहीं रखते और मायावान हैं
किन्तु परमात्मा तो चैतन्यस्वरूप, अविनाशी व्यापक है, पू
आनन्दस्वरूप, निर्विकार, निराकार, निरंजन, स्वयं प्रका
तथा सर्वशक्तिमान है, इसने वेदने उसके लिए "नेति नेति
कहा है, इससे वह बाहर तथा भिन्न परमात्मा है। अप
...ों, मायासे, तथा प्रकृतिसे भी परे है और शरीर, इन्द्रि

प्राणी, मन, बुद्धि तथा कर्म यह सब तो गुणोंसे तथा प्रकृतिसे उत्पन्न हुए हैं, इससे ये परमात्माको नहीं पकड सकते क्योंकि ये ईश्वरसे सीधे उत्पन्न नहीं हुए हैं, वे अमर व स्वयं प्रकाश नहीं हैं। महान ईश्वरके प्रकाशसे वे प्रकाशित हो रहे हैं और सर्वशक्तिमान ईश्वरकी शक्तिके कारण वे शक्तिमान हैं, इससे ये अपूर्ण जड़ वस्तुएँ संपूर्ण चैतन्यस्वरूपके पास पहुँच नहीं सकतीं, तब हमें करना क्या चाहिये ? हम कैसे ईश्वरको पा सकते हैं ? शास्त्रमें कहा है कि जबतक हम ईश्वरको न देखलें तबतक हमारा जन्म वृथा है, तबतक अखंड आनन्द नहीं मिलता, जन्म मरणसे मुक्त नहीं हो सकते, और तबतक न हम मोक्ष सुखही भोग सकते हैं, इससे हमें किसी न किसी प्रकारसे ईश्वरको देखना चाहिये, किन्तु ईश्वरके पास जानेके हमारे साधन तो सब अपूर्ण हैं, तब हम करें क्या ! शास्त्रोंमें कहा है कि आत्मा द्वारा परमात्माको पकड़ो क्योंकि आत्मा परमात्माका अंश है; अमरत्व चेतनता, ऐश्वर्य, ज्ञान और आनन्द आदि परमात्माके सब गुण आत्मामें रहते हैं, इतनाही नहीं, आत्माका परमात्माके साथ सीधे सम्बन्ध है, इससे आत्मा परमात्माके पास पहुँच सकती है, इसलिये आत्मा द्वारा परमात्माको प्राप्त करनेका प्रयत्न करो।

आत्मा द्वारा परमात्माको पानेके लिये उपनिषद् में कहा है कि ॐकार धनुष्य है, आत्मा बाण है और परमात्मा बाणका निशाना है; इससे सचेत होकर बाण मारो और धनुष्यमेंसे छुटा हुआ बाण जिस प्रकार निर्धारित निशानेमें बिंध जाता है उसी प्रकार आत्माको परमात्मासे जोड़ दो, परमात्माके साथ तन्मय करदो और जैसे बाण निशानेमें बिंध जाता है वैसेही आत्माको परमात्मामें बांध दो। ऐसा कैसे संभव है ? इसके उत्तरमें शास्त्रकार कहते हैं कि सावधानतासे सब हो
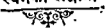
सकता है। यह सावधानता क्या है? इसके विषयमें महाभारतमें कहा है:—

... महात्मा द्रोणाचार्यके पास कौरव पांडव बाण विद्या सीख रहे थे। एक दिन द्रोणाचार्यने सब विद्यार्थियोंकी परीक्षा लेनेका विचार किया। उन्होंने वृक्षपर पक्षीके आकारका एक खिलौना बाँधकर दुर्योधनसे कहाकि इस पक्षीके आँखमें बाण मार। दुर्योधनने उठकर धनुषपर बाण चढ़ाया और निशाना लगाने लगे, तब द्रोणाचार्यने पूछा, पहले बताओ तुम देखते क्या हो? दुर्योधनने कहा यहाँ जो लोग बैठे हैं- उन्हें, वृक्षको, आपको तथा बादलको देखता हूँ। अपने शिष्यकी यह बात सुनकर द्रोणाचार्य दुखी हुए। वे समझ गये कि यह निशाना नहीं लगा सकेगा और हुआ भी ऐसाही। दुर्योधनने बाण छोड़ा और वह खाली गया। इसके पश्चात् युधिष्ठिरकी बारी आयी उन्होंने भी बाण चढाया। द्रोणाचार्यने उनसे भी ऊपर लिखित प्रश्न किया। युधिष्ठिरने कहा आकाश, वृक्ष, पक्षी तथा कुछ कुछ यहाँ पर बैठे हुए लोग भी दिखायी पड़ते हैं। यह सुनकर द्रोणाचार्यने कहा—तुम भी सफल नहीं होगे। अनन्तर बहुतसे लोगोंकी परीक्षा लेनेके पश्चात् अर्जुनकी बारी आयी। उन्होंने बाण चढ़ाकर निशाना लगाया, तब गुरूजीने पूछा—तुम्हें क्या क्या दिखायी पड़ता है? अर्जुनने उत्तर दिया कि बाणकी अणी तथा पक्षीकी आँख इन दो चीजोंके अतिरिक्त मुझे और कुछ नहीं दिखाई पड़ता। यह सुन प्रसन्न होकर गुरूजीने कहा-शाबाश! मेरा परिश्रम सफल हुआ, तू निशाना लगा सकेगा। इसी समय अर्जुनने बाण मारकर पक्षीकी आँखको विंध दिया।

भाइयो! जब ऐसी एकाग्रता, तन्मयता एवं ऐसा ऐसा

होता और बाण तथा निशानाके अतिरिक्त और कुछ दिखाई न पड़ेगा तभी आत्मारूपी बाणसे परमात्मा रूपी लक्ष्य बिंधा जा सकेगा। और हृदयमें जब ऐसी लगन लगती है तब इन्द्रिय, मन, बुद्धि तथा कर्म बदल जाता है। उनमें उत्तमता आ जाती है, प्रभु-प्रेम तथा नया बल आ जाता है और सर्व-भावसे ईश्वरके अधीन होकर यह ईश्वरमय हो सकते हैं, क्योंकि आत्माकी सत्ताद्वाराही ये सत्तावान हैं। इसलिये जीव जब जागृत हो जाता है, ईश्वरकी ओर आकृष्ट हो जाता है, ईश्वरकी महिमा समझ जाता है और ईश्वरीय आनन्दका अनुभव करता है तब उसकी दास-इन्द्रियां, मन, बुद्धि तथा कर्म भी ईश्वरकी ओर बढ़ने जाते हैं और ईश्वरमय होने लगते हैं। यद्यपि ये दास ईश्वर तक पहुंच नहीं सकते तो भी अपने मालिक जीवात्माको ईश्वरकी ओर ढकेलनेमें बड़ी सहायता करते हैं। इससे भाइयो! सर्वशक्तिमान अभीष्ट आनन्दस्वरूप परमात्माके पास यदि पहुंचना हो तो हृदयमें अपनी आत्माको जागृत करनेका प्रयत्न करो। इसके जागृत होनेसे इसके सब नौकर सीधे चलेंगे। याद रखो कि देवाधिदेव महाराजाधिराज परमेश्वरकी सेवामें आत्मारूपी राजा स्वयं जा सकता है, सेवक वहां जाने योग्य नहीं हैं। यदि अनंतकालका आनन्द भोग करना हो तो जीवको जागृत करो और उसे ईश्वरमय कराने का प्रयत्न करो।

५७

महान ईश्वरको अपनी आत्मा अर्पण करनेके बदले तुच्छ वस्तुएं भेंट देते हैं जिससे भक्ति फलीभूत नहीं होती

दुनियाके सब शास्त्र तथा महात्मागण एक स्वरसे कहते हैं कि अनन्त ब्रह्मांडके नाथ शांतिदाता परमात्माको हमें उत्तम से उत्तम तथा प्यारीसे प्यारी वस्तु अर्पण करना चाहिये। बन्धुओ! हमारे पास उत्तमसे उत्तम तथा प्यारीसे प्यारी वस्तु कौनसी है? उत्तमसे उत्तम तथा प्यारीसे प्यारी वस्तु हमारी आत्मा है। आत्माके सुखके लिए धन छोड़ा जा सकता है, सगे संबंधी, देश, स्त्री आदि छोड़े जा सकते हैं, आत्माके उत्पन्न आत्माका दूसरा रूप जो पुत्र है उसे छोड़ा जा सकता है, और आत्माके कल्याणके लिए सबसे प्यारा जो शरीर है वह भी छोड़ा जा सकता है। सारांश कि हमारी आत्मासे बढ़कर प्यारी वस्तु कोई भी इस जगतमें या स्वर्गमें भी नहीं है, और आत्माके सुखके लिए ही इस जगतकी सब वस्तुएं हमें प्यारी लगती हैं।

धन, धनके लिए नहीं बल्कि आत्माके लिए, प्यारा लगता है। यदि धनमें ही सुख हो और धनके लिए ही धन प्यारा लगता हो तो वह छोड़ा नहीं जा सकता और न उसके छोड़नेसे सुख मिल सकता है, मैंने देखा है कि जब जगतका मिथ्यापन समझमें आजाता है और मनमें वैराग्य उत्पन्न हो जाता है तब आत्माके कल्याणके लिए धनका त्याग किया जा सकता है और आत्माके सुखके लिए पहली अवस्थामें धन प्राप्त किया जाता है क्योंकि हमें आत्मा धनसे प्यारी है। इसी प्रकार सगे

ढिंघी, स्त्री, पुत्र, देश, जीवन, वैभव और जगतकी सब प्रिय वस्तुएं आत्माके सुखके लिए ही प्यारी लगती हैं। आत्माके सुखार्थही ये सब प्राप्त की जाती हैं और उसके कल्याणके लिए ये सब छोड़ी भी जा सकती हैं, क्योंकि जगतकी सब वस्तुओं, सब प्रकारके वैभवों तथा सुखोंकी अपेक्षा आत्मा हमें अधिक प्यारी लगती है, इससे सर्वशक्तिमान महान ईश्वरको यदि कोई सबसे उत्तम व प्यारी वस्तु अर्पण करना हो तो हमें आत्मार्पण करना चाहिये। इसके बदलेमें हम ईश्वरको जड़ वस्तु अर्पण करते हैं, वह भी उत्तम नहीं साधारण, भारी नहीं हलकी, हमें प्यारी लगती हैं वह नहीं बल्कि जो नहीं भातीं उसे. वह भी हृदयसे नहीं बल्कि केवल व्यावहारिक रिवाजके लिए, लोगोंमें अच्छा गिना जानेके लिए, तथा हृदयको संतोष देनेके लिए नहीं बल्कि अनेकों प्रकारके वहम व स्वार्थके लिए ही ऐसा करते हैं।

...उदाहरणः—

यदि मंदिरमें ठाकुरजीके पास दीवा जलानेके लिए घी देना हो तो हम कहते हैं कि यह जैसे होगा चलेगा ही, इसके लिए ज़रा हलके मेलका होनेसे भी काम चल जायगा। ऐसा करो जिससे नुकसान न हो। हमारे साहुकार लोग पुरोहितसे कहते हैं कि श्राद्धकी धोतियाँ ले आओ अर्थात् हलकी धोती सस्ती, छोटे पनहेकी, मोटे सूतकी, झिंझर, इन्हींका नाम श्राद्धकी धोती है। अब समझमें आया? जो बाप दादा बड़ी बड़ी जायदाद छोड़ गए हैं और हमारे लिए बहुतसे अच्छे कार्य कर गये हैं उनके लिए श्राद्ध जैसे पवित्र दिनोंमें प्रभुको अर्पण करनेके लिए कैसी वस्तुएं विशेषतः ली जाती हैं उसे तो ज़रा देखो! ठाकुरजीका गहना बनाना होता है तो कहते हैं

कि यह जैसे होगा चलेगा ही, ठाकुरजी भले हैं; ये सब प
लेंगे। ये तो बालक हैं, इन्हें तो एक घुघरू दो तो भी प्रसन्न
जाते हैं, क्योंकि भगवानके घर कमीही किस बातकी है,
तो भावके भूखे हैं। ज़रा हंसकर लोग बात उड़ा देते हैं कि
स्त्रीका वस्त्र आदि अच्छेसे अच्छा आना चाहिये। इसमें
नूकर नहीं चलेगा। यह तो मोक्षदाता ठाकुरजीकी सेवा
समयही चलता है किन्तु (द्वारमेकं नरस्य नारी) स्त्रीकी जो
नरकमें जानेके लिए एक द्वारस्वरूप है, मांगके समय क्या ऐस
हो सकता है? धर्मके निमित्त जिस समय ब्राह्मणोंको भोज
कराना हो, उस समय बाज़ारसे सस्ता भोजन मगांकर क
चलाया जाता है, किन्तु मान प्राप्त करनेके लिए पार्टी देना
या मित्रोंको भोज देना हो तब क्या इस प्रकार चल सक
है? इसमें तो उत्तमसे उत्तम भोजन चाहिये। धर्मके क
जैसे तैसे चल सकता है किन्तु व्यवहारके विषयमें तो म
साहबको सबसे सरस होकर रहना पड़ता है। स्त्रीने यात्रा
मनौती की हो तो उसके साथ जानेके लिए दस पांच दिन
भी फ़ुरसत नहीं मिल सकती किन्तु गर्मीके दिनमें यदि मित्रों
साथ हवा खाने जाना हो तो दो तीन मासकी छुट्टी मिल
है। धर्मके काममें यदि कुछ व्यय करनेका अवसर आता
तो कहते हैं कि अभी रोज़गार मंदा है, किन्तु लड़केका
विवाह करना हो या बहूका अठवांसा करना हो तो एक
सवाया व्यय करनेका मन हो जाता है। और मैंने स्वयं दे
है कि यदि पड़ोसीके कुछ कार्यके लिए बाहर जाना पड़े,
कामके लिए जाना पड़े, अथवा कोई मर गया हो तो उसके
जाना पड़े, तो इस समाचारको सुनकर पड़े पड़े हुए पुरु
जानबूझकर बीमार पड़ जाते हैं और कहते हैं कि मैं

बीयत ठीक नहीं है, किन्तु कहीं जलसा हो, नाटक हो, न्योता या नाच पार्टी हो तो बीमार भी अच्छे हो जाते हैं, इतना नहीं तबीयतको बुरा लगनेपर भी इस आनन्दको नहीं छोड़ते। ऐसे हमारे आचरण हैं। भाइयों! अब कहो, कैसे हमारी भक्ति सफल हो सकती है? शास्त्रोंकी आज्ञा है कि यदि जीवन सार्थक करना हो, चौरासीके फेरामें से छुटकारा पाना हो, ईश्वरका प्यारा बनना हो, आत्माका कल्याण करना हो और अनंतकाल तक मोक्ष सुख भोगना हो तो अपनी आत्माको परमात्माके अर्पण करो। इसके बिना उद्धार नहीं हो सकता। ऐसी आज्ञा होनेपर भी हम जड़ वस्तु ही अर्पण करनेमें रह जाते हैं और तिसपर ऊपर लिखे अनुसार गुदा निकालकर गुठली दान देनेमें ही रह जाते हैं और उसमें बड़े फलोंकी आशा करते हैं! हमारा निर्धारित फल जब हमें नहीं मिलता तब हम धर्मको बदनाम करते हैं और कहते हैं कि आज कल भक्ति फलीभूत नहीं होती, किन्तु यह विचार नहीं करते हैं कि ,ऊपरका माल निकाल कर छाछदान करनेसे क्या लाभ हो सकता है? भाइयो! यदि अपनी भक्तिको सफलीभूत करना हो तो परमकृपालु परमात्माको अपनी आत्मा अर्पण करनेका प्रयत्न करो।

> औरनको चोरी करे, करे सोयका दान।
> ऊँचे चढ़के देखहीं, आवत क्यों न बिमान॥

५८

हम चाहे कितनेही बुद्धिमान क्यों न हों किन्तु ईश्वरका मा
दिखानेवाले सदगुरुके विना कुछ नहीं हो सकता।

कुछ सुशिक्षित युवकोंका एक क्लब था। उसमें प्रसंगो
एक मनुष्य बार बार यह कहता कि गुरुकी क्या आवश्यक
है, सब मनुष्य एक समान हैं। किसीको भी गुरु बनने
अधिकार नहीं है। कान फूंकने और चेला मूड़नेका समय गय
अब तो भ्रातृभावका समय है। अब तो ईश्वर कृपासे प्रकाश
समय चला आ रहा है। अब तो लोग समझते जा रहे हैं।
जो मनुष्य उच्च है, शुद्धि बुद्धिका है, परमार्थ स्वभावका है औ
हृदयसे अच्छा काम कर रहा है उसका मान करना चाहि
तथा उसकी आवश्यकता पड़ने पर सहायता करना चाहि
किन्तु उसकी पूजा नहीं की जा सकती। पूजा योग्य तो केव
परमात्माही है। गुरु होकर पूजा कराना, दूसरोंको नीच
समझना, अपने मनकी जालमें लोगोंको बाँध लेना, पंथ प
म्पराकी गद्दी स्थापित करना, पवित्र शास्त्रोंका अपने मत
अनुकूल अर्थ करना तथा अपने पंथ-विरुद्ध लोगोंकी नि
करना, आदि-हम्बग (Humbug) धूर्त्तता कब तक चलेगी।
एक परमात्माके अतिरिक्त जगतमें दूसरे किसीको गुरुकी पदवी
दी किस लिए? ऐसी ऐसी बातें उसने बहुत सी कीं। इ
सुनकर वहां बैठे हुए उसके जान पहचानवाले एक बड़े सज्ज
ने कहा—मिस्टर! तुम बड़ेही अच्छे वक्ता होंगे। बेश,
तुम्हारे जैसे युवकोंको वर्तमान शिक्षाप्रणालीसे ऐसे विचा
उत्पन्न हों तो इसमें कुछ नवीनता नहीं है, इस पर एकाग्रतासे

वार करूँगा। इस समय बताओ क्या पढ़ रहे हो तुम्हारे
लेजके प्रोफेसर कैसे हैं ?

उसने उत्तर दिया—इस वर्ष तो मैं फेल (Fail) हो
ा क्योंकि रसायन शास्त्रके प्रोफेसर बिलकुल गये थे जिससे
ठीकसे समझा नहीं सके जिससे इस वर्ष इस विषयमें बहुतसे
ड़के फेल हो गये। इतिहासके प्रोफेसर सुदक्ष थे किन्तु
अपने मित्रके विवाहमें गया था जिससे उनका लेक्चर सुन
हीं सका इससे इसमें भी कम मार्क आये। गणितके प्रोफे-
रको तो आप जानतेही हैं। वे तो रटकर आते हैं किन्तु
षयको समझा देते हैं। अंग्रेज़ीके प्रोफेसर तो किसी कामके
ी नहीं हैं, वे तो अपने मिज़ाज व फैशनमें ही लगे रहते हैं।
स्कृतके प्रोफेसरका स्वभाव तो बड़ा अच्छा है किन्तु पढ़ानेके
मके नहीं हैं, और प्रिन्सपलका आप जानते हैं ? वे नामके
नले हैं, मट्टीके पुतलेके समान एकही स्थान पर बैठे रहते हैं।
नका कुछ भी रोब नहीं है, वे कुछ बोलते चालते भी नहीं,
से चलता है चलने देते हैं। जहाँ ऐसा अन्धेरखाता है वहाँ
ोग पास कैसे होंगे ? मैं कभी भी फेल नहीं हुआ, किन्तु इस
र्ष हो गया, क्योंकि हम चाहे कितनेही दक्ष क्यों न हों, अच्छे
ोफेसर बिना कुछ नहीं कर सकते। प्रोफेसरोंके कारणही इस
र्ष परिणाम खराब हुआ है। यदि पहलेके समान अच्छे प्रोफे-
र होते तो क्या ऐसा परिणाम होता ? इसीसे मैंने उस
कालेजको छोड़ दिया है। अब तो मैं बाइसिकल चढ़ना सीख
हा हूँ किन्तु सिखानेवाला ऐसा मूर्ख है कि मैं तीन बार गिर
गिर पड़ा, एक बार तो गाड़ीसे दबते दबते बचा। अब टाइप-
राइटिंग सीखनेका विचार है किन्तु कोई शिक्षक नहीं मिल
रहा है। जो हैं भी वे फीस बहुत मांगते हैं, इतनी फीस मुझसे

नहीं दी जा सकती क्योंकि मुझे उससे रोज़गार थोड़ेही करना है। जान लूंगा तो कभी न कभी कामही आ जायगी इसी विचारसे शौक़से पढ़ता हूँ, इससे कोई सस्ता मास्टर रख रहा हूँ। फोटो खींचना सीखनेके लिए मैंने तीन वर्ष हुआ माथा पच्ची की थी किन्तु कुछ हुआ नहीं, किन्तु अब इस विद्याका जानकार एक मित्र मिल गया है जिसने एक मासमें ही बहुत कुछ सिखा दिया है। सुदक्ष शिक्षकोंकी बातही अलग है। अब आज्ञा दीजिये आपके साथ बात करनेमें बहुत समय व्यतीत हो गया। अब कामसे जाना है।

यह सुनकर गृहस्थने कहा—ऐसी जल्दी क्या है, थोड़ी और बैठो। वह युवक पुनः कहने लगा—अब मैंने कपड़ा सीनेकी हाथकी कल ली है। उसे भाभी चलाती हैं, किन्तु उन्हें भी कपड़ा काटने नहीं आता। इससे उन्हें सिखानेके लिए एक दर्ज़ी रखा है। बहनको सीना पिरोना सिखानेके लिये एक गुरुआनी आती हैं किन्तु उन्हें भी कपड़ा काटने नहीं आता। दरजीने कहा था कि आज चार बजे आऊँगा किन्तु आया नहीं। इन लोगोंको अपने समय या वचनका कुछ मूल्य थोड़ेही न है? हमारे कारीगरोंकी एक बहुत बुरी आदत यह है कि वे मुद्दतों तक काम नहीं करते और इधर उधर धक्का खाया करते हैं किन्तु यदि हमारी स्त्रियां समझ जातीं! इनका तो जहाँगीरी हुक्म होता है कि अभी बुलाओ और मनुकी आज्ञा है कि स्त्रियोंको प्रसन्न रखो नहीं तो घरकी लक्ष्मी रुष्ट हो जायगी, इससे उनकी आज्ञा पालन किये बिना छुटकारा नहीं मिल सकता। मेरी स्त्री मैट्रिक पास है, उसे रसोई बनाना नहीं आता, अब इस मौसिममें दवा खानेके लिए जानेका समय है तो यह रसोई

ाना सीखनेके लिए कहती है, यदि आप किसी दक्ष रसो-
ाको जानते हों तो बताइयेगा। कलम काट सकने लायक
क मालीकी आवश्यकता है, इसके लिए भी खोज करना है
योंकि हमारा घर गाँवमें है, वहाँ कलम-काटना सीखनेके
ए एक मालीको बुलाया। किसीसे सुनकर वह माली
लम काटनेके लिए बैठा तो उलटे पाँच सात वृक्षको इसने
ाफ़ कर दिया। सीखे विना क्या कुछ आ सकता है? अनु-
वी शिक्षिनकी बात जुदी है।

यह सुनकर उस चतुर मनुष्यने कहा—तुम्हारे कथना-
सार संसारका साधारणसे साधारण काम सीखनेके लिए
ी अच्छे मास्टरकी आवश्यकता है किन्तु अदृश्य ईश्वरका
लौकिक ज्ञान प्राप्त करनेके लिए गुरु नहीं चाहिये, क्यों? यह
हाँकी फ़िलासोफ़ी है? तुम्हारे लड़केको पढ़ना लिखना
खानेकी अपेक्षा दुस्तर संसार-सागरको पार करनेका काम
दि सरल हो, तुम्हारे पेड़की कलम काटना सीखनेकी अपेक्षा
दमें जिसे "नेति नेति" कहा गया है उस जन्म जन्मका पाप
ाटकर शांति देनेवाले ईश्वरका ज्ञान यदि सहल हो, तुम्हारे
ामीके कटाईके कामकी अपेक्षा जिसका कोई पार नहीं पा
कता, उस सर्वशक्तिमान ईश्वरके स्वरूपसुख देनेवाले दुर्लभ
ानमें यदि कुछ काम रस हो, तुम्हारे कुत्ता-बिल्ली सीखनेके
ामसे अलक्ष्य ईश्वरका मोक्ष देनेवाला ज्ञान यदि कम
ूल्य रखता हो और तुम्हारे स्त्रीके किसी चतुर रसोइयासे
स्वादिष्ट मिष्टान्न बनाना सीखनेके आनन्दकी अपेक्षा सच्चिदा-
नन्दस्वरूप ईश्वरके ज्ञानसे ईश्वरमय हो जानेका आनन्द
यदि तुम कुछ कम मानते हो तो शायद तुम्हें गुरुकी आवश्य-
कता न पड़े, यह जुदी बात है, किन्तु यदि तुम यह समझते

हो कि अनन्त ब्रह्मांडके नाथ महान ईश्वरका स्वरूप अलौकि
है, उसका कोई पार नहीं पा सकता और उसके स्वरू
सत्य ज्ञान हुए विना जीवोंका कल्याण नहीं हो सकता, जगत
पाप कम नहीं हो सकता, इसके ज्ञान विना शांति
आनन्द नहीं मिल सकता, संसार-सागर तरा नहीं जा सक
आत्माकी तृप्ति नहीं हो सकती और इसके ज्ञान विना न हम
उद्धारही हो सकता है, तब भला जहाँ, मन, वचन और
भी नहीं पहुँच सकता, उस आदि अन्त रहित सर्वव्या
महान ईश्वरका अलौकिक ज्ञान सद्गुरु विना कैसे
सकता है? इसीसे शास्त्रोंमें कहा है कि तुम चाहे कित
चतुर या बुद्धिमान क्यों न हो, ईश्वरका मार्ग दिखाने
सद्गुरु विना काम चल नहीं सकता। इससे भाई! ईश्वर
मये हुए अनुभवी गुरुकी शरणमें जाओ। गुरुसे प्राप्त होने
लाभोंके लिए महात्मागण कहते हैं:—

भेदी लिया साथमें, वस्तु दिया बताय।
कोटि जनमका पंथ था, पलमें दिया छुड़ाय॥
मन मारनकी औषधि, सद्गुरु देत दिखाय।
इच्छित परमानन्दकी, सो गुरु शरणे जाय॥
गूगा हुआ बावरा, बहरा हुआ कान।
पावनसे पंगुल हुआ, सद्गुरु मार्या बान॥
चार खानमें भरमता, कबहु न लागत पार।
सोतो फेरा मिट गया, सद्गुरुके उपकार॥
आत्मा और परमात्मा, अलग रहे बहुकाल।
सुन्दर मेला करदिया, सद्गुरु मिला दलाल॥

५६

इस जगतकी वस्तुसे जीव कभीभी सुखी नहीं हो सकता

इस जगतके सुख जैसे कि धन, माल और सैर-सपाटा आदिमें हमारी आत्माको संतुष्ट करनेकी शक्ति नहीं है जैसे बनावटी फलमें मिठास नहीं आती, और जैसे कृत्रिम फूलोंमें सुगंध नहीं होती वैसे ही ये सांसारिक सुख भी आत्माको सच्चा सुख नहीं दे सकते।

अग्निमें घी डालनेसे जैसे वह भभकती है वैसेही विषयोंके सुखसे तृप्ति नहीं होती बल्कि जीवमें और भी कंगालपन आता जाता है।

जिस प्रकार नदीका खारा पानी पीनेसे प्यास नहीं जाती उसी प्रकार सांसारिक सुखोंसे जीवको संतोष नहीं होता। जैसे स्त्री मिलनेपर लड़केकी इच्छा होती है, लड़का हो जाता है तो यह इच्छा रहती है कि वह भला चंगा रहे। इसके पश्चात् उसके लिए धन-दौलत छोड़ जानेकी इच्छा रहती है। इसी प्रकार एकके बाद दूसरी इच्छायें बढ़ती जाती हैं किन्तु ऐसे सुखोंसे तृप्ति नहीं होती।

काँटाकी चटाईपर सोये हुएको जैसे सुख नहीं मिलता वैसेही संसारके वैभववालोंको भी सुख नहीं मिलता। मछली काँटामें लगे हुए चारेको खाने जाती है किन्तु वह यह नहीं जानती कि हुक उसके गलेमें धँस जायगी, ऐसे ही जीव संसारका सुख लेने जाता है किन्तु उलटे उसे दुखी होना पड़ता है।

जैसे मकड़ी बड़े परिश्रमसे जाला बनाती है किन्तु झाड़

देनेवाला उसे एक झटकेमें साफ़कर देता है वैसे ही काल घड़ी भरमें हमारा नाश कर देगा।

जुगनूँ रात्रिके समय अच्छे लगते हैं किन्तु दिनके समय खराब मालूम पड़ते हैं, इसी प्रकार संसारके सुख भी अभी हमें अच्छे लगते हैं किन्तु ईश्वरके दरबारमें न्यायके समय उत्तर देते वक्त कुछ भी काम न आयेगा।

जगतके सुख डाक्टरके यंत्रके समान हैं। ज़रासा भी इधर उधर हो जानेसे जो शरीरको हानि पहुँचाये बिना नहीं रहते; इसी प्रकार जगतके सुख भी बहुत बढ़ जानेपर ऐसी ही खराबी पहुँचाते हैं।

सारांश कि अपना सोचा हुआ कार्य इस जगतमें नहं हो सकता। यदि सोचा हुआ कार्य हो भी जाय तो उस संतोष नहीं होता। यदि उससे संतोष हो भी जाय तो ब बहुत दिन तक रहता नहीं है, इससे महात्मागण इस जगत मिथ्या कह गये हैं।

६०

संसारमें लिप्त जो रहते हैं उनके हृदयमें भक्तिरूपी वृक्षका उदय नहीं हो सकता

इस समय हमारे देशके लोग बड़े ही सुस्त हैं, नवीन बा जाननेके लिए बड़े ही अनिच्छुक हैं और जैसे तैसे काम चा लेकर बड़ी तुच्छ बातोंपर संतोष कर लेनेवाले हैं; इसीसे न नयी खोजके विषयमें हम बहुत पीछे हैं किन्तु यूरोप निवा इस विषयमें बहुतसे प्रयोग किया करते हैं। कोई बिजली

ई सूर्यके रोशनीका अधिक उपयोग करनेका, कोई समुद्र-तलके
द जाननेका, कोई आकाशके सितारोंकी विचित्रता जाननेका,
ई हवामें से कुछ तत्व निकालनेका, कोई पृथ्वीके पेटमें मार्ग
ानेका, कोई नयी नयी युक्तियोंसे रोग दूर करनेका, कोई
ी तरहकी गाड़ी व खिलौने बनानेका, कोई नवीन प्रकारके
ाज़ बनानेका और कोई रसायन शास्त्रका तथा कोई मिट्टीमें
सोना प्राप्त करनेका प्रयोग किया करता है। इस प्रकारके
ारों प्रयोग चला करते हैं, इनमेंसे बहुतसे विद्वानोंका यह
चार हुआ कि सब देशोंके सब अच्छे अच्छे वृक्ष उस देशमें
यों न लगाये जायँ? अरबिस्तानसे खजूर, अमेरिकासे सफ़र-
ा, चीनसे चा, मस्कटसे अनार, काबुलसे बदाम, भारतवर्ष-
से आँवला, मोरिससे शेरडी, लङ्कासे कौफ़ी (कहवा) मिश्रसे
म्बाकू, बरमासे चावल, और मालाबारसे मिर्च आये तभी
म लाँय, ऐसा क्यों हो? यहाँके बगीचोंमें ही सब चीज़ोंके
ेड़ क्यों न लगा दिये जायँ? यह विचार करके अपने देशमें
े सब वृक्ष लगानेके लिए वे खूब परिश्रम करने लगे, किन्तु
स देशकी मिट्टी ही भिन्न प्रकारकी है, वहाँके पानीका गुण
भिन्न है, वहाँकी हवा दूसरे देशोंके समान नहीं है तथा वहाँ
रेत बहुत है, इससे बड़ा बड़ा परिश्रम तथा बहुतसा धन
्यय करनेपर भी सब प्रकारके वृक्ष वहाँ लग नहीं सके। इसी
प्रकार भाइयो! याद रखो कि प्रभुप्रेमका और ईश्वरके ज्ञानका
वृक्ष भी कहीं अन्य स्थानपर उग नहीं सकता। जिसपर
ईश्वर कृपा हो, ऐसे ही भाग्यशाली सज्जनोंके हृदयमें पवित्र
भक्तिका ज्ञान-वृक्ष उग सकता है। जिस प्रकार किसी भी
वृक्षके लगानेके लिये पहले बीज फिर ज़मीन, खाद पानी हवा

भी श्रद्धारूपी बीज, पवित्र हृदय रूपी जमीन, सत्संग रूपी खाद, प्रभु-प्रेमरूपी पानी, मायाका मिथ्यापन समझा देने वाली हवा, और हृदयकी लगनरूपी गर्मीकी आवश्यकता है और इनके विना भक्तिका वृक्ष उग नहीं सकता और यदि कभी अधूरे साधनोंसे उगता भी है तो वह मोक्षरूपी फल नहीं सकता। अब विचार करो कि जब ज्वार बाजरा या आ ईमली आदिके वृक्षके लिये इतने साधनोंकी आवश्यकता पड़त है और तब भी अच्छी तरहसे हवा पानी न मिलनेसे वे स स्थानोंपर उग नहीं सकते, तब मोक्षरूपी फल देनेवाला पवि भक्तिका महान वृक्ष अनुकूल साधनों विना सब स्थानोंपर कैसे उग सकता है? इससे भाइयो! यथाशक्ति इस अलौकि वृक्षकी संभाल करो तथा उसके फलने-फूलनेके लिये प्रयत्न करो। क्योंकि इस भक्तिके वृक्षसे मोक्षका फल मिलता है औ जिसे यह फल मिलता है वह अमर होकर हरिकी सेवामें र सकता है, इससे भक्तिरूपी कल्पवृक्षकी सेवा करो, भक्ति रूपी चिन्तामणिकी रक्षा करो।

तुलसी पूरबके पापसे, हरिचर्चा न सुहाय।
जैसे ज्वरके जोरसे भोजनकी रुचिजाय॥
माखी चंदन परहरे, दुर्गंध होय तहँजाय।
मूरख नरको भक्ति न भावे, उंघे कों बठिजाय॥

६१

केवल जबानी जमाखर्चमें तथा ऊपरी दिखावमेंही धर्म हो किन्तु आचरणमें न हो तो कुछ होना जाना नहीं है

प्रत्येक धर्ममें बहुतसे देखउआ मनुष्य होते हैं। वे धर्मका कार्य करते नहीं, नियम पालते नहीं, धर्मका हेतु समझते नहीं प्रभु प्रेम रखते नहीं और प्रभुकी आज्ञा मानते नहीं, तो भी बाहरसे वे धर्मका बड़ा आडम्बर करके घूमा करते हैं। ऐसे मनुष्योंके विषयमें बातचीत चलनेपर एक हरिजनने कहा-एक समय मुझे मक्खनकी आवश्यकता पड़ी। उसे लेनेके लिए मैं बाज़ार गया और अपने जान-पहचानवाले एक दुकानदारसे पूछा कि मक्खन आजकल क्या भाव है? उस दुकानदारने पूछा कितना चाहिये? मैंने कहा-पांच सेर। तब उस दुकानदारने कहा कि इतनी तो तैयार नहीं है, घडीभरमें ला सकता हूं। मैंने कहा कि यह बरनी तो भरी हुई मालूम पड़ती है! इसपर उसने कहा कि यह तो बिलकुल खाली है, किन्तु भरी हुई दिखायी पड़े इसलिए ढांककर ऊपर एक दो सेर मक्खन रख देता हूं। मुझे तो थोड़ी पूंजीसे व्यापार करना है, इससे बरनी भरकर रख कैसे सकता हूं? मैंने कहा कि इसे एक कटोरेमें या छोटी थालमें रखो तो क्या बेजा है? थोड़ी सी मक्खनके लिये इतना बड़ा बर्तन क्यों बझाते हो? और इतनी जगह क्यों फंसाये रहते हो? उस दुकानदारने कहा—यह बरनी अच्छा नहीं है, यह तो फूटी है। भाई! आपको कुछ मालूम भी है? दुकानको भड़कदार दिखानेके लिए ऐसा प्रयत्न करना पड़ता है कि बरनी भरी हुई मालूम पड़े और भीतर तो पोल रहतीही

है। दुनिया दिवानी है मैं करूँ क्या? कालानुसार मुझे भी बाहरी तडक-भडक रखना पडता है। अनन्तर मैं दूसरी दूकानपर गया वहाँ भी यही बात देखा। सभी दूकानोंपर यही हाल दिखायी पडा। अथरीके मुँहपरही केवल मक्खन थी भीतर कुछ नहीं था। इसके पश्चात् मैं एक बड़ी दूकानपर गया, वहाँपर अथरी फथरी कुछ नहीं थी, वहाँ तो एक कठघतमें मक्खनका एक ढोंका रखा हुआ था, वहाँसे सस्ते भाव अच्छा मक्खन मैं ले आया।

भाइयो! इसी प्रकार अथरीके मुँहपर रखे हुए मक्खनके समानही वाहरसे धर्म वाले मालूम पडते हुए बहुतसे लोगोंके जीभमेंही धर्म होता है। उनके हृदयमें धर्म नहीं होता और बहुतसे मनुष्योंके माला कंठी, टीका और स्नानमेंही धर्म होता है, प्रभुके नियमोंका पालन करनेमें नहीं होता। भाइयो! सोचो कि यह कैसी बुरी बात है! व्यापारी अथरीके मुँहपर मक्खन रखता है और भीतर खाली रहता है, तो यह चल सकता है किन्तु हमारी बातोंमें धर्म हो किन्तु आचरणमें गोल हो तो कैसे चलेगा? ऐसी पोलसे शायद कुछ भोले भाले लोगोंको ठग सको किन्तु इससे हृदयको आनन्द नहीं मिल सकता, पापका नाश नहीं हो सकता, जीवन सार्थक नहीं हो सकता, स्वर्ग नहीं मिल सकता और न इस पोलसे प्रभुका प्यारा बन सकते हो। इसमें भाइयो! जीभके लपर लपरमें तथा बाहरी तडक भडकमें अंत तक न रहकर प्रभु प्रेमसे हृदयको सींचनेका प्रयत्न करो।

> आसन मारे क्या हुआ, मरी न मनकी आस।
> तेली केरा बैल ज्यों, घरही कोस पचास॥
> मन दिया कहीं औरही, तन साधुके संग।
> कहे कबीर कोरी गजी, कैसे लागे रङ्ग॥

मन मैला तन ऊजरा, बगला कपटी अंग।
तासे तो कौआ भला, तन मन एकही रंग॥
कानो करके कागको, चले हंसकी चाल।
पूछ पकड़ सियारकी किस विध उतरे पार॥
साँई आगे साँच हो, साँई साच सुहाय।
भावें लंबे केशकर, भावे घोट मुड़ाय॥

६२

महामारी, लड़ाई, हुल्लड़ तथा दुष्कालके कारण

किसीने एक धर्मात्मासे पूछा—प्रभु तो सर्व-समर्थ है, अनंत दयालु है और कृपाका सागर है, तब इस संसारमें महामारी, लड़ाई हुल्लड़ और दुष्काल यह क्यों होने देता है ?

उस धर्मात्माने कहा—जब कोई जाति समृद्धिवान होनेपर एवं उसके मदमें चूर होकर अपने ईश्वरको भूल जाती है तब दयालु प्रभु उसे अपनी ओर खींचनेके लिए यह सब करता है।

राजा जब राजनीति भूल जाता है, प्रजा जब उसका सामना करनेके लिए प्रस्तुत हो जाती है, गुरु जब शिष्यको बुरे मार्गपर ले जाते हैं, शिष्य जब गुरुको नहीं मानते, मा बाप जब लड़कोंको धर्मकी बात नहीं बताते, लड़के जब मा बापका अपमान करते हैं, स्त्रियां जब पतिव्रत धर्मका पालन नहीं करती, पुरुष जब जबर्दस्ती स्त्रियोंको नाटकीय श्रृङ्गार करनेके लिए बाध्य करते हैं, धनवान जब असंतुष्ट बनकर अंत तक धन धन चिल्लाया करते हैं, गरीब जब नीतिके नियमोंका पालन नहीं करते, नौकर निमकहरामी करने लग जाते हैं, प्रजामें जब

असत्य बढ़ जाता है। दस पाँच मनुष्योंके इकट्ठा होनेपर प्रभुका गुन-गान होनेके बदले जब विषयोंके गाने गाये जाने लगते हैं। जहाँ स्वार्थ बढ़ जाता है तथा परमार्थका कुछ भी ध्यान नहीं रहता और जहाँ जातिमें सर्वदा अन्याय होता है वहाँ सर्वदा महामारी लड़ाई, हुल्लड़ या दुष्काल कुछ न कुछ हुआ करता है, क्योंकि ये सब अधर्मके फल हैं। इससे जिस देशमें या जिस जातिमें अधर्म बढ जाता है। वहाँ प्रभु कृपा करके उन्हें अपनी ओर खींचनेके लिए कोई न कोई दुख भेज देते हैं। इसीलिए कि इस दुखसे डरकर जीव प्रभुके मार्गमें आवे। इससे जब देशमें ऐसी कोई आफ़त आवे तब समझना चाहिये कि यह प्रभुका दोष नहीं है बल्कि हमारेही अधर्मोंका फल है। इससे अपने दूसरे भाई बहनोंकी स्थिति देखकर महान प्रभुके लिए हमें शुभकर्म करना चाहिये और धर्मसे चलना चाहिये, इससे ईश्वर-कृपासे ऐसी आफतें अपने आपही दूर हो जायँगी।

६३

सांसारिक सुख चाहे जितने बढ़ जाँय, भक्तिमें पीछे रहनेसे अंतमें हारना पड़ेगा।

दिल्लीके पास पानीपतका एक बड़ा मैदान है, वहांपर महरठों तथा मुसलमानोंमें भयङ्कर लड़ाई हुई थी। यह लड़ाई [illegible] इतिहासमें प्रसिद्ध है। उस समय महरटे बड़े ज़ोरपर [illegible] पेशवा सरकारके नामकी डुग्गी बजती थी। उनका तीन [illegible] मनुष्यका लश्कर लड़नेके लिए गया था। उसका सरदार बहादुर था तथा उसमें आगे बढ़नेका जोश था। दिल्लीके

मुगल बादशाहकी कुछ भी परवाह न करके शत्रुके देशमें घुस जाकर वे काबुलकी सरहद तक पहुँचे थे। उनका यह बल देखकर बहुतसे लोग चकित हो गये और सब लोग कहने लगे कि ओ हो! कहाँ पूना और कहाँ पंजाब? कहाँ दिल्लीका बादशाह और कहाँ पहाड़ी मरहठे? तिसपर भी वे शत्रुओंका देश पार करके सरहद तक पहुँच गये। यह कीर्ति कुछ ऐसी वैसी नहीं थी, किन्तु अफसोस कि एक भयंकर भूल हो गयी जिससे थोड़े समयमें ही यह कीर्ति धूलमें मिल गयी और इस सरकारको तहस-नहस होना पड़ा। यह भयङ्कर भूल कौनसी थी क्या तुम्हें मालूम है? पेशवाके पास धनकी कमी नहीं थी, वे हीरा माणिकसे ढके रहते थे और सोना रूपासे उसका भंडार भरा हुआ था, मनुष्योंकी कमी नहीं थी, उसने अपने प्रजामें ऐसी जागृति पैदा कर दी थी कि सब लोग लड़नेके लिए प्रस्तुत थे, इतना ही नहीं, तीन लाख मनुष्य तो पानीपतके मैदानमें भी पहुँच गये थे। बहादुर सरदारोंकी कमी नहीं थी। भाऊ साहब, विश्वासराव, अप्पा साहब, बाला साहब और सिंधिया तथा होलकर जैसे महान सरदार देशपर बलिदान होनेके लिए शत्रुके सामने गये थे। अच्छे हथियारोंकी कुछ कमी नहीं थी। राक्षसी तोपें, भयङ्कर बंदूकें, तेजमें चमकनेवाले भाले तथा बख्तर यथेष्ट परिमाणमें प्रस्तुत थे और हाथी घोड़ा, तम्बू, खिदमतगार आदि भी तैयार थे। इन सभोंमें किसी प्रकारकी भी कमी नहीं थी, केवल एक ही बातकी भूल हुई थी, वह यह कि इस बड़े जत्थेके लिये भोजनका सामान लेना भूल गये थे। इसपर उन्होंने यथोचित ध्यान नहीं दिया था जिससे थोड़े दिनोंमें ही वे भूखे मरने लगे और अंतमें उनका नाश होगया, क्योंकि और चाहे जो हो बिना भोजन भूखे पेट

मनुष्य क्या कर सकता है ? इससे इतना बड़ा लश्कर व इतना बड़ा वैभव होनेपर भी शत्रुके थोड़ेसे मनुष्योंके हाथ वे सब मारे गये।

भाइयो! यह दृष्टान्त देकर एक भक्त इस प्रकार समझाते हैं कि जैसे देहकी खुराक अन्न है वैसेही आत्माकी खुराक भक्ति है, इससे यदि भक्तिका खुराक लिये विना मायाके सुखोंमें आगे बढ जाओगे तो तुम्हारा भी यही हाल होगा। मरहठा सरदारोंको शत्रुओंके देशमें आगे बढ़ते हुए देखकर, सब लोग पहले जैसे उनकी प्रशंसा करते थे वैसेही तुम्हारा गाड़ी घोड़ा, मान, रोज़गार, धंधा, तुम्हारा बंगला, खाना-पीना, तुम्हारी सत्ता, स्त्री-बच्चोंका सुन्दर वस्त्राभूषण तथा तुम्हारा वैभव और ठाट-बाट देखकर बहुतसे लोग हाँमें हाँ मिलायेंगे, किन्तु खुराक बगैर लश्करमें निकल जानेवाले सरदारोंको पीछेसे जैसे बहुत दुख उठाना पड़ा और जो लोग पहले उनकी प्रशंसा करते थे वे ही उनकी भूल समझ गये, ऐसे ही माया और मोह शत्रुके राज्य हैं उसमें भक्तिका खुराक लिये विना यदि आगे बढ़ जाओगे तो पीछेसे तुम्हारे मित्र और सम्बन्धी ही तुम्हारी निंदा करेंगे, बड़ा कष्ट उठाना पड़ेगा और विना मौत मरोगे। इसलिए भाइयो! सोचो और विचार करो, क्योंकि इस जगतके सांसारिक सुखोंको बढ़ाना कोई बड़ी बात नहीं है। यह तो देश कालानुसार, आसपासके संयोगके अनुसार, बुद्धिबल, पुरुषार्थ तथा प्रारब्धके अनुसार घटा बढ़ा करता है, इससे ऐसे सुखोंका भक्तों या ईश्वरके पास कुछभी मूल्य नहीं है, क्योंकि ये सुख बहुत समय तक टिक नहीं सकते और न भक्तिके खुराक विना वे आनन्दही दे सकते हैं, इससे ऐसे सांसारिक सुखोंके बढ़ जानेसे कुछ भी कल्याण नहीं हो सकता

कहा कि नहीं हजूर सब तैयार है। कोई चीज़ बाकी नहीं है। पत्थर, चूना, लकड़ी, मज़दूर, पानी, कारीगर आदि सब तैयार हैं। मेरी तरफ़से कुछ भी कमी नहीं है। यह सुन ज़रा चिड़चिड़ाकर राजाने पूछा—सब तैयार है तब काममें हाथ क्यों नहीं लगा? कर्मचारीने कहा—हुजूर, अभी विलायतसे इन्जीनियर नहीं आया है। आज आने वाला है। यह आवे तो काम शुरू हो। यह सुनकर राजा कुछ विचारमें पड़ गया। वह सोचने लगे, ओहो! इन्जीनियरकी इतनी सत्ता! इतनी तैयारी करनेपर भी हम कुछ नहीं कर सकते! सचमुच इन्जीनियरकी बलिहारी है! यह सोचकर राजाने कहा कि अब ऐसा उपाय करो कि इन्जीनियर जल्दी आवे।

इसके पश्चात् थोड़े समयमें इन्जीनियर आ पहुँचा, जिससे तेज़ीसे काम होने लगा और थोड़े समयमें महल तैयार होगया।

भाइयो! इसी प्रकार हमारे धर्मदान, कर्मकांड, दर्शन, तीर्थस्नान, व्रत, सत्संग, सेवा-स्मरण और अपने भाई बहनोंकी की हुई भलाई आदि सब हमारे पुरुषार्थ हैं, ये सब हमारे हृदयमें ईश्वरका पवित्र मंदिर बनानेकी वस्तुएं हैं, किन्तु केवल इससे हृदयमें मन्दिर नहीं बन सकता। इन सब वस्तुओंको अपने अपने स्थानपर बैठाने वाला इन्जीनियर चाहिये। इन्जीनियरके न होनेसे इन वस्तुओंका ढेर जहाँका तहाँ पड़ा रहेगा, इससे अपने पुरुषार्थसे इकट्ठी की हुई वस्तुओंको यथास्थान बैठानेके लिए एक इन्जीनियर चाहिये। यह हमारा इन्जीनियर कौन है? क्या इसे तुम जानते हो? यह इन्जीनियर प्रभुकृपा है। जब तक यह इन्जीनियर न होगा तब तक केवल ईंट चूनासे मकान नहीं बन सकता। इसी प्रकार हमारे अकेले पुरुषार्थसे भी प्रभुकृपा बिना मोक्षका मंदिर नहीं बन सकता और यह

भी याद रखो कि सब सर सामान बिना अकेला इन्जीनियर भी कुछ कर नहीं सकता। इससे प्रभुकृपाको मुख्य मानकर आत्माके कल्याणके लिए पुरुषार्थ करते रहो और ईश्वर कृपाकी बलिहारी समझते रहो।

६५

प्रभु-प्रेमसे होनेवाले लाभ

१. जब हमारे हृदयमें प्रभु-प्रेम आता है तब सबसे पहले बारंबार ईश्वरकी प्रार्थना करनेका हमारा मन करता है और विशेषतः प्रातःकालका समय तो इसीमें व्यतीत करना अच्छा लगता है।

२. सब सद्गुण प्रभु-प्रेमसे पैदा होते हैं, इससे जब हृदयमें प्रभु-प्रेम आने लगता है तब स्वभावतः अपने आपही सद्गुण बढ़ते जाते हैं क्योंकि सद्गुणोंकी चाभी और माता प्रभु-प्रेम है।

३. प्रभु प्रेमसे हृदयमें नवीन जातिका अलौकिक बल आ जाता है। जैसे मुर्गी एक कमज़ोर जानवर है और वह किसीसे झगड़ती नहीं पर उसके बच्चेपर यदि कोई हमला करे तो उसका सामना किये बगैर रहती भी नहीं ऐसेही भक्त भी स्वभावसे ही किसीसे लड़ना झगड़ना नहीं चाहती किन्तु कोई यदि उसका प्रभु प्रेम छुड़ानेका प्रयत्न करता है तो उसका सामना किये बगैर रहते भी नहीं। यद्यपि प्रह्लाद किसीका दिल दुखाना नहीं चाहते थे किन्तु जब उसके प्रभु-प्रेममें उसका बाप विघ्न डालने लगा, तब उस निर्दय महाराज तथा

अपने पालक पिताका सामना भी उसने किया था, उस समय ऐसी बाल्यावस्थामें हिरण्यकशिपु जैसे बलवान क्रूर राजाका सामना करनेका उसमें बल नहीं था किन्तु प्रभु-प्रेमसे उसमें ऐसा अलौकिक बल आ गया था।

४. जिसके हृदयमें प्रभु-प्रेम आता है उसे प्रभुकी बनायी हुई प्रत्येक वस्तुओंमें नया नया तत्व मिला करता है, जगतकी सब वस्तुयें उस प्रभुका स्वरूप दिखानेवाली हो जाती हैं।

५. प्रभु-प्रेमल भक्तोंमें स्वभावतः ऐसा वैराग्य आ जाता है कि जगतकी ईश्वर-रहित सब वस्तुयें उसके लिए तुच्छ हो जाती हैं, जगतकी किसी भी वस्तुसे उसका मन लुब्ध नहीं होता, इससे प्रभु-प्रेम द्वारा अखंड आनन्दरूप पवित्र पिता परमात्माके लिए वह सब दुनिया न्योछावर कर देता है।

६. प्रभु-प्रेम आनेसे भला काम करनेकी इच्छा बलवती होती है। इच्छा बलवतीही नहीं होती बल्कि बहुत काम इसके द्वारा अपने आपही हो जाते हैं, और ऐसे किसी कामके हो जानेपरही तृप्ति होती है, इससे प्रभु-प्रेमके कारण हमें मुफ्तमें सत्कम करने पड़ते हैं। इतनी अधिक प्रभु-प्रेममें बल व उत्तमता है

७. प्रभु-प्रेम आनेसे हमारा अंतःकरण शुद्ध होता है, जिससे हमें ईश्वरका ज्ञान अधिक स्पष्ट हो सकता है और शुद्ध अंतःकरण होनेसे उसमें आत्माका प्रतिबिम्ब और भी अच्छी रीतिसे पड़ सकता है, इससे बहुत प्रकारके जटिल प्रश्नोंका उत्तर हमारा अंतःकरण बड़ी सरलतासे दे सकता है, जिससे प्रभु-प्रेम द्वारा दिन-प्रतिदिन हमें सत्यका मार्ग अधिकाअधिक मिलता जाता है और इससे ईश्वरीय आनन्द बढ़ता जाता है।

८. जब हमारे हृदयमें प्रभुप्रेम आता है तब हमें हमारे

पुराने पापोंके लिए क्षमा मिल जाती है, क्योंकि पाप अन्धकार है और प्रभु-प्रेम प्रकाश है; जब प्रकाश आता है तब अन्धकार टिक नहीं सकता। वैसेही प्रभु-प्रेमके आगे पहले जन्मोंके पाप टिक नहीं सकते। जैसे झाड़-झंखाड़में आग लगानेसे कांटे तुरत जल जाते हैं, वैसेही प्रभु प्रेमरूपी अग्निसे पापरूपी कांटे भी तुरत जल जाते हैं, साथही साथ वर्तमान जीवनमें होने वाले पाप भी रुक जाते हैं। सोचो कि यह कितनी बड़ी बात है? हमारे जीवनके सब पुरुषार्थ पापोंसे बचनेके लिए ही हैं तो भी हम अपने बलसे पापसे बच नहीं सकते, किन्तु प्रभु-प्रेम द्वारा बिना किसी परिश्रमके स्वाभाविक रीतिसे पापसे बच सकते हैं और पापसे बचनेपर उद्धार होने कितनी देर लगेगी? भाइयों! इतना अधिक प्रभु-प्रेममें बल है, इससे अपने हृदयमें प्रभु-प्रेम बढ़ानेका प्रयत्न करो।

६. प्रभु-प्रेमसे मन शान्त होता है, प्रभु-प्रेम बिना किसी भी रीतिसे मनको शांति नहीं मिल सकती। अर्जुन जैसे भक्तोंने श्रीकृष्ण भगवानकी सेवामें कहा है—महाराज! जैसे आकाशकी वायु एक घड़ेमें भरी नहीं जा सकती, वैसेही चंचल मन भी वशमें नहीं किया जा सकता। इसके उत्तरमें श्रीकृष्ण भगवानको भी स्वीकार करना पड़ा है कि मनको रोकना बड़ा कठिन है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है किन्तु यह अभ्यास एवं वैराग्यसे रोका जा सकता है। भाइयो! ऐसा चंचल मन अभ्यास वैराग्य बिना प्रभु-प्रेमसे अपने आपही वशमें हो जाता है और अभ्यास तथा वैराग्य तो प्रभु-प्रेमके पीछे पीछे दौड़ता है। इतनी अधिक प्रभु-प्रेममें खूबी है, इससे प्रभु प्रेम बढ़ानेका प्रयत्न करो, इससे धीरे धीरे इसीके द्वारा मनको शांति तुम्हारे पास चली आयेगी।

१० प्रभु-प्रेमसे आत्माकी तृप्ति होती है और आत्मतृ होनेका नामही सार्थकता है, क्योंकि जब सब बन्धन टू जाते हैं, जब करने योग्य सब काम हो जाते हैं और जब आत्म तथा परमात्माका स्वरूप दृष्टि-गोचर हो जाय तभी आत्माक तृप्ति होती है। शास्त्रोंमें कहा भी है कि जिसके आत्माकीतृ हो गयी उसे कुछ करना बाकी नहीं रह जाता। जो भाग्यशाल होते हैं उन्हींकी आत्माकी तृप्ति होती है और जिसे आत्म-तृ हो जाय वे पूजनीय देवके सदृश हैं। ऐसी उत्तमता प्रभुप्रेम सहजमें मिल जाती है।

११ प्रभु प्रेमके हृदयमें आनेसे जीव जगतमें रहनेपर भ हृदयसे प्रभुके साथ जुटा रहता है। हम थोडी देर प्रभुक स्मरण करते हैं, प्रभुका गुण-गान सुनते हैं या प्रभुके लिये कुछ दान-धर्म करते हैं तो इससे हमारे हृदयमें कितना आनन्द होता है? तब प्रभु प्रेम द्वारा जिन महात्माओंकी आत्मा परमात्माके साथ सदा जुटी रहती होगी उनका आनन्द कैसा होगा और उनकी स्थिति कैसी उच्च होगी इसका तो विचार करो। यह सब प्रभु-प्रेमसे अल्प प्रयत्न द्वारा हो जाता है।

१२ महात्मागण प्रभुप्रेमकी अग्निके साथ तुलना करते हैं, क्योंकि अग्निमें जैसे रोशनी और गर्मी दो गुण हैं वैसेही प्रभु-प्रेममें भी रोशनी अर्थात् ईश्वरी ज्ञान और गर्मी अर्थात् जगतके जीवोंपर प्रेम ये दो गुण हैं। जहाँ अग्नि रहती है वहाँ स्वभावतः जैसे रोशनी और गर्मी होती है वैसेही जिसके हृदयमें प्रभुप्रेम होता है उसके अंतरमें ईश्वरीय सत्यज्ञान और जगतके साथ भलाई करना स्वभाविक रीतिसे होता है, ऐसी प्रभु-प्रेमकी महिमा है।

कता, इससे जैसे भी हो अपने हृदयमें प्रभुप्रेम जागृत करनेका यत्न करो !

१७ प्रभुप्रेमसे परिश्रम सरल हो जाता है, क्योंकि प्रभुप्रेमके लौकिक बल द्वारा हम यदि थोड़ासा भी परिश्रम करते हैं तो सका बहुत फल मिल जा सकता है। जिस प्रकार कोई बड़ा त्र चलानेके लिये इन्जीनियरको केवल चाभी दबानी पड़ती है और एक चाभी दबानेसे हज़ारों चक्कर घूमने लगते हैं, उसी प्रकार थोड़े से प्रभु-प्रेमसे सहजमें बड़े-बड़े काम हो जाते हैं, इससे भाइयो ! तन, मन, धन, वचन और कर्म तथा आत्मासे परमात्मापर प्रेम करना सीखो, परमात्मापर प्रेम करना सीखो।

६६

संतोंकी वाणी अमृत तुल्य होती है क्योंकि उनके शब्दोंके साथ उनकी पवित्रता भी बाहर निकलती है

हम सब स्थानोंपर यही सुनते हैं कि भक्त,संत,गुरु आदिके पास जाओ और महात्माओंके उपदेश सुनो। इसके बिना बाहरी-उपदेशसे या लिखी हुई मामूली ज्ञानकी पुस्तकें पढ़नेसे पार नहीं पड़ सकता और विचार करनेसे मालूम हो जायगा कि यह बात झूठ नहीं है, क्योंकि हम देखते हैं कि नीति या धर्मकी जिन बातोंको हम सैकड़ों बार पढ़ चुके हैं या दूसरोंसे सुन चुके हैं, उनका हमारे हृदयपर या आचरणपर कुछ भी प्रभाव नहीं होता,पर उन्हीं बातोंको जब हम किसी गुरु या पवित्र भक्तके मुँहसे सुनते हैं तो उसका हमपर जादूके समान असर होता है। परिचित और पुरानी हो जानेपर भी इन बातोंमें

हमें कुछ नवीनता मालूम पड़ती है और यह हमारे हृदयमें घुस जाती है, इसमेंसे हमें कुछ विशेष आनन्द मिला करता है, उसीके अनुसार चलनेका हमारा मन करता है और जो अधिकारी मनुष्य होते हैं उनमें इन बातोंके सुननेके साथ उनका पालन करनेका बल भी आ जाता है, इसी विषयमें एक सरल हृदयका भावुक मनुष्य कहता था कि जब मैं किसी महान भक्तके पास जाता तब उन्हें देखनेसे मेरे विकार कम हो जाते, उनके पास बैठनेसे मेरे मनमें शान्ति आती, उनकी बातें सुननेसे मेरेमें नया जीवन आ जाता, उनकी चालढाल देखनेसे उनकी जैसी पवित्रता प्राप्त करनेका मन हो जाता, उनके ज्ञानसे मेरे संशय दूर हो जाते, उनकी दृष्टिसे गिरने वाले अमृतसे मैं शीतल हो जाता, उनके आत्मिक बलसे मेरे शरीरमें नये बलका संचार होता और उनके भले कार्योंमें मैं स्पष्ट रूपसे प्रभुको रूपा देख सकता था, इतनाही नहीं, दूसरे पंडित जो बातें कहते हैं वेही बातें यह भक्त भी दुहराता था किन्तु दूसरे विद्वानों-की अपेक्षा इस भक्त द्वारा कई बातोंका मेरे मनपर हज़ार गुना प्रभाव पड़ता था। उनके विचार बात और शब्दोंका इतना अधिक प्रभाव पड़नेका कारण क्या है? यह मैं समझ नहीं सका, इससे मैंने एक भक्तसे पूछा भाई! इस भक्तकी वाणीमें इतना बल कैसे है? इनके शब्दोंमें अद्भुत प्रकारकी ऐसी मिठास कैसे आ जाती है!

उसने उत्तर दिया—भक्तोंकी वाणी केवल पोले शब्द नहीं है। इन शब्दोंके साथ साथ उनके हृदयकी पवित्रता और उनका [illegible] बल भी बाहर आता है, इससे वे उत्तम प्रभाव [illegible] है। अपनी प्यारी स्त्रीका दृष्टान्त लो। यह विद्वान [illegible] उसकी वाणी तुम्हें कैसी मीठी लगती है!

सांसारिक विषय, संबंधियोंकी बातें, खाने पीनेकी बातोंके अतिरिक्त उसे और क्या आता है? तो भी प्रतिदिन उसकी बातोंमें कैसा रस मिलता है, इसका तो ज़रा विचार करो! इसका कारण क्या है? इसका कारण यही है कि उसके शब्दोंके साथ उसके हृदयका स्नेह भी बाहर आता है, इससे यह व्यर्थका किस्सा तुम्हें अच्छा लगता है, क्योंकि रस और बल कुछ बाहरी शब्दोंमें नहीं है बल्कि जिससे निकलता है उसके हृदयकी भावनामें है और हमारे हृदयपर उसका जितना प्रभाव होता है उसी प्रमाणमें हमें ये बातें अच्छी या बुरी लगती हैं। इससे, हम देखते हैं कि साधारण मनुष्योंके मुँहसे जब धर्मकीके शब्द हम सुनते हैं तो उनका कुछ भी असर नहीं होता किन्तु ये ही शब्द जब हम किसी पुलिस, अमलदार, कलेक्टर, न्यायाधीश, या राजाके मुहँसे सुनते हैं तो उनका गंभीर असर होता है, क्योंकि इन शब्दोंके साथ उनकी सत्ता भी बाहर निकलती है जिससे वे हमारेपर प्रबल असर कर सकते हैं। इसी प्रकार भक्तोंकी वाणीके साथ उनके हृदयकी पवित्रता, उनका आत्मिक बल, पुरुषार्थ, परमार्थ और उनका प्रभुप्रेम मिला रहता है। इससे यदि जीवन सुधारना हो और प्रभुका प्यारा होना हो तो संतोंके चरण-कमलमें जाओ, महात्माओंकी सेवा करो और भक्तोंकी बातें सुनो। इसके बिना धर्मका ज्ञान हृदयमें टिक नहीं सकेगा; क्योंकि हृदयसे छूछे किन्तु बाहरी शब्दोंके आडम्बरमें रह जानेवाले पंडितोंसे धर्मकी बातें सुननेसे उनका पोल भी हमारे हृदयमें आ जाता है और स्वयं पुस्तकोंमें से यदि पढ़ें तो उसमें अकेले हमारा ही बल होता है और प्रारंभमें हमारेमें इतना बल नहीं होता कि बारीक और उच्च धर्मकी सब बातें हम समझ सकें और उनका पालन कर सकें। यदि

गुरुओंसे, भक्तोंसे, या महात्माओंसे धर्मकी बातें सुने तो हमारे मनके साथ उनकी पवित्रता और आत्मिक बल मिल जाता है जिससे दूने बलसे हम धर्मका पालन कर सकते हैं, इसमें मायो। जीवन सार्थक करनेका यदि छोटा मार्ग चाहते हो तो संतोंका चरण पकड़ो, महात्माकी सेवामें लगे रहो, और भक्तोंकी इन रूप वाणीका पान किया करो, इससे थोड़े परिश्रमसे बहुत लाभ होगा।

संत बड़े परमारथी, शीतल जनके अंग।
तपन बुझावे और की दे दे अपनो रंग॥
संत धन्वन्तरि वैद सम, जैसो रोगी जेहु।
युक्ति बनावत ताहिको तैसो औषद तेहु॥
संत सबनको हित करै, दे साचो उपदेश।
मुक्ति मिलावे रामसे स्वारथ नहिं लवलेश॥
नहि सीतल है चन्द्रमा, हिम नहिं सीतल होय।
कबीर सीतल संत जन, नाम सनेही सोय॥
कबीर दरसन साधुका, साहेब आवै याद।
लेखेमें सोई घड़ी बाकीके दिन बाद॥
अलख पुरुषकी आरसी, साधुओंकी देह।
लख जो चाहे अलखको, तो इनमें लख लेह॥
साधु मिले साहेब मिले, अन्तर रही न रेख।
मनसा, वाचा, कर्मणा, साधु साहेब एक॥

६७

ईश्वरकी कृपा क्या है?

महात्मा कहते हैं कि प्रभु कृपाका अर्थ प्रभुपर हृदयसे

सच्चा विश्वास करना है, हृदयकी पवित्रता है और प्रभु कृपाका अर्थ हमें मोक्ष-प्राप्तिके लिए प्रभुसे मिलनेवाली सहायता है।

प्रभु कृपाका इससे भी अच्छा अर्थ यह है कि हृदयमें शुभ विचार आवें, पवित्रतासे रहनेकी हृदयमें प्रेरणा हो, ईश्वरके सेवास्मरणमें जीव सदा लगा रहे और मृत्युपर हरिकी पवित्र सेवामें मोक्षधाममें रह सके, इसीका नाम प्रभुकृपा है।

ईश्वर कृपासे होता क्या है:—जिसपर प्रभुकृपा होती है उसकी आँखें खुल जाती हैं, उसका मोह दूर हो जाता है, मायाका मिथ्यापन उसकी समझमें आ जाता है और ईश्वरका सत्य स्वरूप उसके हृदयमें जम जाता है इससे वह मनुष्य भक्त बन जाता है।

प्रभु कृपा दो प्रकारकी होती है:—१ लौकिक और २ अलौकिक।

लौकिक प्रभुकृपा अर्थात् शरीरको सुख, लंबी आयुष्य, लड़के वाले आदिका सुख, रूप, गुण आदिका पुरस्कार, धन-मान, इज्जत और दूसरे प्रकारके संसारके सुख, यह सब प्रभुके लौकिक कृपाका फल है। ये सब हमें इसीलिए मिले हैं कि हम सरलतापूर्वक प्रभुके मार्गमें बढ़ सकें। प्रभुका मार्ग हमें सुख-रूप हो जाय, इसीलिए उपरिलिखित सब प्रकारकी सहायतायें हमें प्रभुकृपासे मिली हैं। यदि हम उनमें मुग्ध हो जायँ और उन्हें देनेवालेके देखनेमें सहायक न हों, अर्थात् लौकिक कृपा अलौकिक कृपामें सहायक न हो तो उलटे वे बंधनकारक हो जाते हैं; इससे लौकिक कृपाको प्रभुकी सेवा-स्मरणमें और प्रभुके प्यारे भक्तोंके धर्मके कर्मोंमें सहायता करनेमें ही लगाना चाहिये।

ईश्वरके अलौकिक कृपाका अर्थ प्रभुको भजनेकीइच्छा होना, पापसे दूर रहनेका प्रयत्न करना और ईश्वरकी चर्चामें दिलचस्पी लेना है।

ईश्वरकी अलौकिक कृपा चार प्रकारकी है:—

१ प्रथम कृपा होनेसे शुभेच्छा उत्पन्न होती है, अर्थात् जगतके जीवोंके साथ भलाईका बर्ताव करनेकी इच्छा होती है जिससे अपने सांसारिक व्यवहारमें नीति धर्मपूर्वक चला जा सकता है।

२ दूसरी कृपा होनेसे प्रभुकी भक्ति करनेकी टेव पड़ जाती है, सेवा-स्मरणमें बल आ जाता है और भक्तिका मानसिक आनन्द बढ़ जाता है।

३ तीसरी कृपा होनेपर सब प्रकारके पाप छूट जाते हैं। प्राण जानेका अवसर उत्पन्न होनेपर भी ऐसी कृपावाले मनुष्य पाप कर्म नहीं करते। इस स्थितिमें प्रभुके साथ अखण्ड तार लगा रहता है, और ऐसे महात्माओंका जीव ईश्वरमें ही रमण किया करता है और वे सर्वदा समाधि जैसे ईश्वरी आनन्दमें मग्न रहते हैं।

४ इसके पश्चात् चौथी कृपा होने पर प्रभुके कृपा-पात्र भक्तका उद्धार हो जाता है। मृत्युके पश्चात् वह प्रभुकी सेवामें-मोक्षधाममें जासकता है और अनन्त काल तक असंडित मोक्षका सुख भोग करता है।

कृपा बिन प्रभुजी! कैसे कार्य सरे रे (टेक)
कैसे कार्य सरे रे, कैसे कार्य सरे रे—कृपा०

करुणाकर आधार तुम्हारो (२) तुम बिन मोरा कष्ट कौन हरेरे—कृपा०
जगतका रक्षण करवावे (२) प्रभु परतिज्ञा तुम्हरी कधि नहि टरेरे—कृपा०
शरण तुम्हारी ग्रहण कियो है (२) भवसिंधु पार्ही तेरो, सत्य वरेरे—कृपा०

लोगोंके कहनेकी ओर ध्यान न [illegible] परमार्थके लिए भले कार्य किये जाओ

एक भला मनुष्य था। वह परमार्थके कामोंमें बहुत स
यता करता था। वह अपनी चाल-चलन बहुत उत्तम रखने
प्रयत्न करता, तब भी बहुतसे लोग जो मनमें आता, कहा क
थे, जिससे वह मनमें बड़ा दुखी होता, क्योंकि बहुत सी भल
करनेपर भी मान प्राप्त करनेकी इच्छा उसके मनमें बनी
थी; जिससे विरोधी बातें वह सुन नहीं सकता था, इससे
सोचता कि मैं इतना करता हूँ तब भी लोग ऐसा क्यों क
हैं? यह मनही मनमें झेला जाता था। अनन्तर एक साधु
उसकी भेट हुई। यह साधु बड़े शांत स्वभावका, सीधे मार्ग
चलनेवाला तथा विद्वान था। उसके साथ मन मिलनेपर
मनुष्यने कहा—महाराज! मैं व्रत करता हूँ तो लोग कहते
यह सब दिखौआ है, जप करता हूँ तब कहते हैं कि ढोंग
कुछ परमार्थ करता हूँ तो कहते हैं कि यह कुछ नया थोड़े
न है? बाप रुपया छोड़ गया है उसे उड़ा रहा है। तीर्थ कर
आता हूँ तो कहते कि यहांका हवा पानी अच्छा न होगा
घरमें कुछ खटपट हुई होगी अथवा कोई मनौती रही होग
जिससे मास दो मासके लिए घूमने चले गये होंगे; कोई पुस्तक
प्रकाशनके लिए दान देता हूँ तो कहते हैं कि नामके लि
करता है, किसी मनुष्यसे मिलनेके लिए आता हूँ तो कहते
कि राय साहब बननेके लिए हाथ पैर पटक रहे हैं, जाति
सुधारनेके लिए कुछ करता हूँ तो उलटे गाली सुनता हूँ, सबके

लड़के बच्चेको सुधारनेका प्रयत्न करता हूँ तो सगे संबंधी जलकर खाक हो जाते हैं, क्या कहूँ ? अपने मा तथा भाईकी सेवा करूं तो सासको अच्छा नहीं लगता और यदि स्त्रीका आदर करूं तो मा नाराज़ होती है। यह सब देखकर मुझे बड़ा दुख होता है, क्योंकि मेरे काम भी लोगोंको क्यों नहीं अच्छे लगते और लोग ताना क्यों मारते हैं, यह मेरी समझमें नहीं आता। महाराज! इसका भेद ज़रा समझानेकी कृपा कीजिये।

महाराजने उत्तर दिया—भाई! प्रत्येक प्रांत व देशकी तोल अलग अलग होती है। कहीं बाईस रुपया भरका सेर है, तो कहीं अट्ठाइस रुपया भरका, तो कहीं चालीसका, तो कहीं अस्सी, तो कहीं एकसौबीस रुपये भरका है इससे जो चीज़ तुम्हारे तोलसे अढ़ाई सेर होगी वह दूसरेके तोलसे पौने दो सेर और तीसरेके तोलसे चार सेर होगी क्योंकि सबकी तोल एक नहीं है। प्रत्येक मनुष्यका काँटा अलग अलग होता है। इतना ही नहीं, बहुतसे बेईमान व्यापारी माल लेनेका काँटा अलग और देनेका दूसरा रखते हैं, इसी प्रकार व्यावहारिक लोग भी अपने अपने कामोंका माप करनेका काँटा अलग रखते हैं, और दूसरे लोगोंके कामोंका माप करनेका काँटा अलग रखते हैं, इससे अपना काम छोटा होनेपर भी बड़ा दिखायी पड़ जाता है और बहुत स्थानोंपर हमारे बड़े बड़े कामोंसे उलटे अपकीर्ति मिलती है क्योंकि साधारण व्यावहारिक लोग हमारे हृदयका प्रेम देखकर हमारे कामोंका माप नहीं करते बल्कि वे तो अपने विचारानुसार उनका विचार करते हैं, इससे किसी समय हमारे कार्य जितने उचित होते हैं उससे कहीं अधिक अच्छे बहुतोंको लगजाते हैं और बहुतोंको अच्छे काम भी खराब लगते हैं क्योंकि दुनियाँके लोग दूसरोंका भाव देखकर कामोंका

अन्दाज़ा नहीं लगाते बल्कि अपने विचारानुसार दूसरेके कामोंकी तौल करते हैं। इससे महात्मागण कह गये हैं कि राग-द्वेषसे रहित होकर भक्तोंको प्रभु-प्रीत्यर्थ कर्म करना चाहिये और किसीके कहने सुननेपर कुछ भी ध्यान नहीं देना चाहिये। यदि कोई अच्छा कहे तो फूल न उठो और बुरा कहे तो अपने कर्त्तव्यको छोड मत दो। संसारमें भिन्न-भिन्न प्रकृतिके जीव हैं उन सबको प्रसन्न नहीं किया जा सकता। राम और कृष्ण जैसे अवतारोंको भी लोगोंने दोष लगाया है तब हमारी क्या गिनती है? हमारा सेर किसीके कांटामें चार छटांक और किसीके कांटामें चार सेर हो जाता है, इससे वे अपने कांटाके अनुसार हमारी वृत्तियोंको देखकर उनकी तौल करते हैं, इसमें उनका कुछ दोष नहीं है, इसी प्रकार उनके कांटामें हमारे कम उतरनेसे हमारा कुछ माल घट नहीं जाता और बढ़नेसे हमारा न कुछ माल बढ़ ही जाता है। इससे भाई! दूसरोंके कहनेपर ध्यान न देकर अपने हृदयमें माल बढ़ानेका प्रयत्न करो, स्वयं भले बनो और शुद्ध अंतःकरणसे दृढ़तापूर्वक यही विचार रखो कि मैं जो कुछ कार्य करता हूँ वह लोगोंसे मान पानेके लिए या किसी पर उपकार करनेके लिए नहीं, बल्कि महान प्रभुके लिए अपनी आत्माका कल्याण करनेके लिए करते हैं। ऐसा विचार रखनेसे लोग भला कहें या बुरा, हमारा अंतःकरण दुखी नहीं होगा और समता भी रख सकोगे, क्योंकि कहनेवाले अपने कांटाके अनुसार हमारा वज़न करते हैं इससे वह कोई सच्ची तौल नहीं है और वे तो अपने स्वभावानुसार बोलेंगे ही, किन्तु हमें उनके कहनेपर ध्यान नहीं देना चाहिये क्योंकि हमें उनके लिए तो काम करना नहीं है, हमें तो अपनी आत्माके लिए तथा अनंत ब्रह्मांडके नाथके प्रति स्नेह उत्पन्न करनेके लिए इस

जगतमें तथा इस जीवनमें भलाई करना है, इससे लोगोंकी निन्दा या स्तुतिपर ध्यान न देकर प्रभु-प्रीत्यर्थ परमार्थ करना सीखो, क्योंकि परमार्थके लिए महात्मागण कहते हैं:—

तुलसी पंछिनके पिये, घटे न सरिता नीर।
धर्म किये धन ना घटे, सहाय करें रघुवीर॥
कुञ्जर मुखते गिर पड़यो, सो घटयो न गजका अहार।
लाखो कीड़ी ले चली, सो पोखनको परिवार॥
माया मेरे रामकी, धरणी धनकी देह।
पूंजी बिराने साहकी, करसे जस कर ले॥
गांठ होय सो हाथ कर, हाथ होय सो दे।
आगे हाट न बानिया, लेना होय सो ले॥
देह धरेका यही फल, देह देह कछु देह।
देह खेह हो जायगी, फिर कौन कहेगा देह॥
कहे कबीरा देह तू, जब लग तेरी देह।
निश्चय कर उपकार ही, जीवनका फल येह॥
खाय खिलाय लुटाय दे, कर ले अपना काम।
चलती बखते रे नरो, संग न चले बदाम॥
आशा न करे और की, आप करे उपकार।
जगमें सो जन जानिये, भगवतका अवतार॥

६६

संसारके सब धर्मके लोग अपने अपने गुरुओंका मान करते हैं, इसका कारण क्या है

एक सेठके यहाँ विवाह था जिससे उसने बड़ी धूमधाम की थी। इस समय उसने अपने बहुतसे मित्रोंको निमंत्रण

दिया था पर्व देशके एक राजाको भी आमंत्रित किया था किन्तु स्वयं न आ सकनेके कारण राजाने अपनी पोशाक देकर अपने एक नौकरको भेज दिया था। इस नौकरमें कोई तत्त्व नहीं था तो भी उसकी बड़ी खातिर की जाती थी, क्योंकि वह राजाका भेजा हुआ था इससे जो मान किया जाता था वह उसके निजके लिए नहीं बल्कि राजाके लिए किया जाता था। इस नौकरकी अपेक्षा सेठ अधिक धनवान और मान मरतबे वाला था तो भी वह इस नौकरको प्रसन्न रखता, उसके पीछे पीछे फिरता, उसे अपने शानदार फिटनमें घूमनेके लिए ले जाता, अपने मित्रोंसे उसकी भेंट कराता, अच्छा अच्छा भोजन कराता, उसके साथी नौकरोंका ख्याल रखता और पैसा तथा अपने परिश्रमसे उसे प्रसन्न रखनेका प्रयत्न करता क्योंकि वह राजा द्वारा भेजा हुआ था। इसी प्रकार भाइयो! इस सेठके समान भक्त भी राजाओंके राजा, देवोंके देव और अनंत ब्रह्मांडके नाथ महान प्रभुको अपने हृदय-मंदिरमें पधारनेकी इच्छा रखते हैं किन्तु जब तक हमारेमें योग्यता नहीं होती तब तक प्रभु स्पष्ट रीतिसे आते नहीं बल्कि अपनी ओरसे भेंट देकर भक्त महात्माओं तथा गुरुओंको हमारे पास भेज देते हैं। वे हमें भक्तिकी पोशाक देते हैं, प्रभुप्रेमका आभूषण, ईश्वरीय ज्ञानका हार, पापके क्षमाका मानपत्र, आचरण सुधारनेका खिताब देते हैं और हमारे ऊपर प्रेम रखकर आस पासके लोगोंको उपदेश देते हैं कि प्रभुके प्रियपात्र बनो। इस प्रकार हमारे कल्याणके लिए भक्त, महात्मा और सद्गुरुगण प्रभुके प्रतिनिधि होकर हमारे पास आते हैं। इससे उनके निजके लिए नहीं तो कमसे कम प्रभुके लिए तो हमें उनका आदर ही मान करना चाहिये और उनकी सेवा करनी चाहिये।

७०

प्रभु-प्रेमी हरिजनोंके लक्षण

१ प्रभु-प्रेमी हरिजनोंके वचनमें बड़ी मीठास रहती है।

२ दूसरोंकी आवश्यकताओंकी ओर वे बहुत ध्यान र हैं. और स्वयं कष्ट सहकर भी दूसरोंके अपराधको क्ष कर देते हैं।

३ दूसरोंको दुख देनेकी या किसी प्रकारकी अड़चन डालने उनकी इच्छा नहीं होती।

४ दूसरोंको सुख देनेके लिए वे अपने सुखका त्य कर देते हैं।

५ अच्छा काम करनेमें उन्हें देर नहीं लगती।

६ उनका उपकार न माननेपर भी वे दुखी नहीं होते।

७ क्रोध या वैर करना तो उन्हें स्वप्नमें भी नहीं आता।

८ ऐसे प्रेमीजनोंका हृदय ऐसा निर्मल हो जाता है कि भी उनसे शत्रुता करना नहीं चाहते।

९ बिमारी या और किसी संकटके आ पड़नेपर भी अधीर नहीं होते और न अपने हृदयकी शांतिको ही भ करते हैं।

१० दिन प्रति दिन इतना विश्वास बढ़ता जाता है शास्त्रकी सब बातें उन्हें सिद्ध हुई दिखायी पड़ती हैं।

११ कल क्या होगा, इसकी उन्हें तनिक भी चि नहीं रहती।

१२ खाने-पीने, बोलने-चालने तथा पहरने-ओढ़नेमें वे सर्व दे होते हैं।

१३ वे अपनी बिलकुल परवाह नहीं करते पर दूसरेके लिए अतिशय चिंतित रहते हैं।

१४ पासमें पाप होते हुए देखकरभी पापमें वे नहीं फँसते।

१५ अपना मिजाज़ वे कभी भी खो नहीं देते और उनके हृदयमें शांति, क्षमा, दया और परमार्थ वृत्ति विराजमान रहती है। सारांश कि नीति शास्त्रमें कथित सब सद्गुण प्रभु-प्रेमी भक्तोंमें अपने आपही धीरे-धीरे आ जाते हैं।

१६ ज्यों ज्यों प्रभुके पवित्र नामका जप होता है तथा ज्यों ज्यों प्रभुके गुणोंका ज्ञान और प्रभुके स्वरूपका ध्यान बढ़ता जाता है, त्यों त्यों वे भक्त, मनुष्यसे बदलकर पवित्र देवतारूप होते जाते हैं।

१७ इस जगतमें रहकर ऐसे प्रभु-प्रेमी भक्त जीवन्मुक्तिका उत्तम सुख भोगते हैं और अंतमें हरिकी सेवामें जाकर तथा मुक्त होकर परमानन्द भोगा करते हैं।

संत लक्षण सील सुहावन, चित्तवृत्ति जिसकी हुई शांत,

ऐसे जन हरिके (टेक)

ब्रह्मानन्द महारस भोग्यो, जीव ईश्वर भाँगि भ्रांत—ऐसे०
दयावान दासातन अति घने, ज्ञान भक्ति विवेक वैराग्य—ऐसे०
क्षमावंत तपे नहिं तापमें, आशारहित अमल अनुराग—ऐसे०
अक्रोध इन्द्रियजीत अनुभवी, कवि कोमल शील संतोष—ऐसे०
पापारहित अमृतबानी बदे, सहजानन्द आनन्द-कोष—ऐसे०
शुद्ध स्नेही स्वारथ मत मले, परमारथ ऊपर प्रीत—ऐसे०
शशी सूरजवत साक्षी रहे, उदार अर्णवकी रीत—ऐसे०
हरष शोकविषे डोले नहि, अर्ध निमिष तजे नहिं नाम—ऐसे०
सुरतरु सुरधेनु चिंतामणि, भजता पहुँचे मन काम—ऐसे०

परिपूरण लक्षण संतके, बत्तीसमें कम हो—ऐसे०
वह प्रीतम सद्गुरु संतको, सब सौंपकर शरणे जाओ—

७१
भक्तोंकी रीति भाँति कैसी होती है

—भक्तगण दूसरी वस्तुओंकी अपेक्षा प्रभुको अधिक चाहते हैं, तथा दूसरी और वस्तुओंको भी इसीलिए चाहते हैं कि यह प्रभुकी दी हुई है और इसे चाहनेके लिए प्रभुने आज्ञा दी है इससे आवश्यकतानुसार इन वस्तुओंकी इच्छा रखते हैं। माँ बाप, रोज़गार-धंधा, खाना-पीना तथा और भी इसी प्रकार जीवनको आवश्यक वस्तुओंका तथा जीवनके कर्त्तव्योंका प्रभु-प्रेमके लिएही भोग करते हैं और सबको प्रभुकी दी हुई समझकर, प्रथम प्रभुको अर्पणकर अपनी चाहके मुताबिक चाहते हैं, किन्तु ऐसी लौकिक चाहनाकी बनिस्बत भक्तोंकी आत्मा प्रभु-प्रेम द्वारा ईश्वरके अलौकिक स्वरूपके आनन्दमें ही रमा करती है।

प्रभुप्रेमसे हरिजनोंके हृदयमें उत्पन्न होने वाली इस प्रकारके आनन्दकी सभी खूबी अब तक हम समझ नहीं सके हैं क्योंकि सांसारिक जंजालोंको हम प्रधानता देते हैं और प्रभुको तो शायद ही कभी अपने हृदयमें आने देते हैं, इससे पानीमें रहनेपर भी कमलका पत्ता जिस प्रकार पानीसे भीगता नहीं उसी प्रकार व्यवहारमें रहनेपर भी सुख-दुखमें लिप्त न हुए हों ऐसी, प्रेमी भक्तोंकी उत्तमताको भी हम समझ नहीं सके हैं। प्रभुसे भक्तोंमें आयी हुई उत्तमता कैसी होती है, इसके संबंधमें साधुगण कहते हैं:—

समाप्त होनेपर वह अपने सेठके पास गया तब सेठने पूछा—इतनी देर कहाँ लगी ? नौकरने कहा—साहब! रास्तेमें खे[ल] हो रहा था वहाँ देखनेके लिए मैं खड़ा हो गया और का[म] करना भूल गया। यह सुनकर सेठने उसे धता किया और उ[स] लापरवाह नौकरका बड़ा बुरा हाल हुआ।

इसी प्रकार परमात्मा रूपी सेठने इस जगतमें हमें भ[क्ति] करने तथा मोक्ष प्राप्त करनेके लिए भेजा है; किन्तु हम [उ]परोक्त नौकरके खेलके समान लड़के, बच्चे और आनन्द-मो[द] आदिमें फँस गये हैं, इससे ईश्वररूपी सेठकी भक्तिरूपी नौक[री] करनेकी बात भूल गये हैं।

जैसे कोई मूर्ख मनुष्य भूसी रखकर दानाको फेंक देता [है] और कांचको रखकर हीराको फेंक देता है वैसे ही, हम [भी] क्षणिक जगतके सुखके लिए हरिरूपी हीराको फेंक देते है[ं] किन्तु यह बड़ी भारी भूल है। एक पैसाके लिए राज्य छो[ड़] देनेके समान है।

दोहा

जो प्रभु भवजल तरनको, दियो मनुष्य तन नाव।
मुक्त कहे भज ताहिको, मत चूके अब दाव॥
मुक्त मनुष्य तन पायके, जो न भजत जदुनाथ।
सो पीछे पछतायगो, बहुत घसेगो हाथ॥
मुक्त मनुष्य तन पायके, करत न हरिसे हेत।
पापभार सिर पर भरे, जीवन जैसे प्रेत॥
रात गमाया सोय कर, दिवस गमाया खाय।
हीरा जन्म अमोल था, कौड़ी बदले जाय॥
कहता हूँ कह जात हूँ, कहा बजाऊँ ढोल।
स्वाँसा खाली जात है, तीन लोकका मोल॥

मनुष्य जन्म दुर्लभ है, मिले न बारंबार।
तरवरसे पत्ता गिरे, फिर न लागे डार॥

७३

ईश्वरपर हमें किस लिए प्रेम रखना चाहिये

ईश्वरपर प्रेम रखनेका कारण हम यदि समझ जायँ तो हम और भी अच्छी रीतिसे प्रभु-प्रेमी हो सकेंगे।

महात्मागण कहते हैं कि प्रभुपर प्रेम रखनेके मुख्य दो कारण हैं। प्रथम यह है:—

राजासे मित्रता करनेका सबका मन चाहता है क्योंकि साधारण मनुष्योंकी अपेक्षा वह अधिकारमें बड़ा है और उसकी मित्रतासे बडेबडे लाभ होते हैं इससे सब लोग राजासे मित्रता करनेकी इच्छा रखते हैं, तब भाइयो! विचार करो कि अनंत ब्रह्मांडका नाथ महान प्रभु जो महाराजाओंका भी महाराजा तथा देवोंका भी देव है। इससे मित्रता करनेकी किसे इच्छा न होगी? महान प्रभुसे बढ़कर दूसरा कोई नहीं है और न कोई उसकी बराबरीही कर सकता है। वह भलेसे भला, उत्तमसे उत्तम तथा सर्वश्रेष्ठ है। उससे बढ़कर सत्तावान, ऐश्वर्यवान, बुद्धिमान तथा आनन्दकी वस्तु और कोई नहीं है, सारांश कि जो कुछ उत्तम वस्तु हम देखते हैं वह प्रभुमें है और उससे सब कुछ प्राप्त हो सकता है, इससे हमें परम कृपालु [illegible]पर पवित्र प्रेम रखना चाहिये।

[illegible] रखनेका दूसरा कारण यह है कि उसने हमें [illegible] हमारा पोषण करता है, उसकी इच्छासेही

हमें जीवन मिला है, उसकी कृपासेही हमें सब प्रकारके सुख मिले हैं और वही हमारा मोक्षदाता है, इससे उसपर शुद्ध मनसे अखंडित प्रेम रखना चाहिये। पिता द्वारा किये हुए उपकारके लिए पुत्र स्वभावतः उसे प्यार करता है और जंगली जानवर भी अपने पालनेवालेको चाहते हैं, तब हम तो श्रेष्ठ मनुष्य हैं और उसमें भी प्राचीन धर्म तथा अनुकूल साधन वाले हैं, इससे हमारे ऊपर अगणित उपकार करने वाले सर्वशक्तिमान जगत्पिता परमात्मापर अनन्यभावसे हमें सदा सर्वदा प्रेम रखना चाहिये। यही प्रभुके साथ प्रेम करनेका का कारण है।

ऐसा होनेसे हमें अब यह जानना चाहिये कि हम कैसे प्रभुपर प्रेमरख सकते हैं? इसके लिए महात्मागण कहगये हैं:

तनसे, मनसे और धनसे ईश्वरमय होकर रहना और सर्व भावसे ईश्वरकीही इच्छा रखनेका नाम प्रभुप्रेम है।

तनसे काम करनेका अर्थ यह है कि जो काम करना वह सब प्रभुके लियेही करना तथा उसे भगवदर्पण कर देना चाहिये।

मनसे चाहनेका अर्थ है कि सर्वदा मनमें ईश्वरका स्मरण किया करो, ईश्वरकाही चिन्तन करो और व्यवहारमें भी मनसे ईश्वरकी भावना दूर मत होने दो।

धनका अर्थ है कि व्यवहारमें, परमार्थमें या दान धर्मके लिए जो धन दो वह अपना बड़प्पन दिखानेके लिए अभिमानसे नहीं बल्कि जगतमें प्रभुकी महिमा बढ़े, मनुष्योंमें धर्म बढ़े और अपने भाई बहनोंमें सुख बढ़े, इस विचारसे प्रभुके अर्थ धन व्यय करो।

इस प्रकार तन मन और धनसे प्रभु-परायण हो जानाही प्रभु-प्रेमका लक्षण है यही प्रेम लक्षण भक्तिकी उत्तमता है

और ऐसा श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेमेंही हरिजनोंकी प्रशंसा है। ऐसा प्रेम जिसपर रखा जाता है वह प्रभु कैसा है ? इसके लिये कबीर साहब कहगये हैं;—

ऐसा देश हमारा साधो, ऐसा देश हमारा है (टेक)
अलख अचिन्त्य स्वरूप अनामी; गुण अवगुण तें न्यारा है—ऐसा०
अगम अगाध अनंत अनादि, अचल अखंड अपारा है—ऐसा०
सत् चित् आनन्द परम मनोहर, सब जीवनका प्यारा है—ऐसा०
मनसे परे बुद्धिसे बाहर, निर्गुण राम विचारा है—ऐसा०
कहत कबीरा सुनो भाइ साधो, ये प्रभु हम निरधारा है—ऐसा०

७४

ईश्वरकी भक्ति करनेकी दो रीतियाँ

प्रभुकी भक्ति करनेकी दो रीतियाँ है। पहली बाहरसे और दूसरी हृदय से।

बहुतसे मनुष्य बाहरसे भक्ति करते हैं किन्तु हृदयसे भक्ति नहीं करते और बहुतसे मनुष्य हृदयसे भक्ति करते हैं किन्तु बाहरसे नहीं करते, किन्तु दोनों प्रकारकी भक्ति करनेकी आवश्यकता है।

हाथ जोड़ना, पैर पड़ना, साष्टांग दंडवत करना, कोई पवित्र वस्तु प्रभुके पास धरना, तिलक करना, माला पहरना, संन्यासी हो तो दंड धारण करना, योगी हो तो शरीरमें राख मलना, जटा बढ़ाना अथवा अपने संप्रदायके मतानुसार वस्त्र धारण करना, ये सब भक्तिके बाहरी चिन्ह हैं।

यद्यपि बाहरसे हाथ जोड़ना, सिर नवाना या दंडवत

करना ये सब हृदयके प्रेम विना-किसी कामके नहीं हैं, तौ भी इन्हें करनेकी बड़ी आवश्यकता है क्योंकि हृदयस्थित प्रेमको दिखानेके ये बाहरी चिन्ह हैं।

किसी घरमें आग लगनेपर धूआँ जैसे बाहर निकलता है वैसेही जिसके अंतरमें सच्ची भक्ति रहती है वह बाहरसे ऐसे चिन्ह धारण करता है क्योंकि जैसे धूआँसे, अग्नि मालूम पडती है वैसेही भक्तिके बाहरी चिन्होंसे हृदयके प्रभु-प्रेमका ज्ञान होता है, इससे ऐसा करनेकी प्रत्येक मनुष्यको आवश्यकता है।

हृदयमें प्रभुप्रेम न रहनेपर भक्तिके बाहरी चिन्होंको धारण करना ढोंग है।

जिसके हृदयमें सच्चा प्रभु-प्रेम या भावभक्ति न हो किन्तु दूसरोंकी देखादेखी, लोक-लाजसे या किसी खास स्वार्थवश जो राख पोतते हैं या गलेमें माला डालकर घूमा करते हैं उन्हें ढोंगी समझो। जैसे किसी गरीब मनुष्यके धनियोंके समान वस्त्र पहनकर और तड़क-भड़क करके घूमनेपर हम उसे ढोंगी और लुच्चा समझते हैं, वैसेही जिसके हृदयमें प्रेम नहीं है और जो भक्तिका बाहरी आडंबर रखते हैं उन्हें भी ढोंगी समझना चाहिये।

जिसका मुख अच्छा नहीं होता वह दूसरोंके सामने सुंदर लगनेके लिए अपने मुँहपर पाउडर पोतकर घूमता है और व्यर्थ मनमें प्रसन्न होता है, तथा पासमें पैसा न होनेपर भी जो शाहजी बने फिरते हैं, इन्हींके समान भक्तिके बाहरी तड़क-भड़क करने वालोंको भी समझो।

ऐसे तड़क-भड़क वाले भक्त प्रतिदिन दर्शन करने जाते हैं, कीर्तन करते हैं, भजन गाते हैं, हरिकथा सुनते हैं, भगवानकी

बड़ी बड़ी बातें सीखते हैं और बाहरके सेवा-स्मरणमें भी बहुत सा समय व्यतीत कर देते हैं, किन्तु उनका हृदय पाप-शून्य नहीं रहता। काम, क्रोध, लोभ, मान और ईर्षा उनके हृदयमें भरी रहती है, तो भी बाहरसे वे भक्तिका ढोंग करते हैं किन्तु याद रखो कि जब तक अंतःकरण शुद्ध न हो तब तक भक्तिके बाहरी शृङ्गारोंसे और ऊपरी ढोंगसे आत्माका कुछ भी कल्याण नहीं हो सकता। इससे सब भाइयोंको ढोंगमें ही अंत तक न पड़े रहकर अंतःकरण पवित्र करनेपर अधिक ध्यान देना चाहिये।

सच्चे भक्त ढोंगी नहीं होते और न वे ऐसे बाहरी तड़क-भड़कपर ज़ोर देते हैं। वे तो सर्वदा प्रभु-प्रेमसे आनंदित रहते हैं और जो उनके पास जाता है उसे भी आनन्द देते हैं क्योंकि भक्तिका लक्षण प्रभु-प्रेमसे उत्पन्न आनन्द है, इससे बड़े भक्त बाहरी चिन्होंकी अपेक्षा हृदयके आनन्दपर ही अधिक भार देते हैं। इतना होनेपर भी बाहरसे भक्ति दिखाना भी बहुत आवश्यक है क्योंकि जैसे प्रत्येक लश्करकी अपनी ध्वजा होती है और प्रत्येक लश्करके सिपाहीकी भिन्न-भिन्न वर्दी होती है, ऐसेही भगवानके प्रत्येक भक्तको संसारमें अपनी भक्ति प्रकट करनेके लिए बाहरी चिन्ह होना चाहिये।

कुछ मनुष्योंको प्रभुपर हृदयसे प्रेम होता है और इसके लिए वे यथाशक्ति व्यय भी करते हैं किन्तु वे बाहरी चिन्ह धारण नहीं करते, क्योंकि वे भक्त या प्रेमी कहा जाना पसन्द नहीं करते और इसीसे वे दूसरे हरिजनोंसे मिलते भी नहीं तथा वे कंठी-माला या तिलक लगाना भी नहीं चाहते। वे कहते हैं कि इसमें क्या रखा है? किन्तु उनका इस प्रकार व्यवहार करनेका कारण यह है कि उनका हृदय-स्थित भाव

करना ये सब हृदयके प्रेम बिना किसी कामके नहीं हैं, तो भी इन्हें करनेकी बड़ी आवश्यकता है क्योंकि हृदयस्थित प्रेमको दिखानेके ये बाहरी चिन्ह हैं।

किसी घरमें आग लगनेपर धूआँ जैसे बाहर निकलता है वैसेही जिसके अंतरमें सच्ची भक्ति रहती है वह बाहरमें ऐसे चिन्ह धारण करता है क्योंकि जैसे धूआँसे अग्नि मालूम पड़ती है वैसेही भक्तिके बाहरी चिन्होंसे हृदयके प्रभु-प्रेमका ज्ञान होता है, इससे ऐसा करनेकी प्रत्येक मनुष्यको आवश्यकता है।

हृदयमें प्रभुप्रेम न रहनेपर भक्तिके बाहरी चिन्होंको धारण करना ढोंग है।

जिसके हृदयमें सच्चा प्रभु-प्रेम या आत्मभक्ति न हो किन्तु दूसरोंकी देखादेखी, लोक-लाजसे या किसी खास स्वार्थवश जो राम बोलते हैं या गलेमें माला डालकर घूमा करते हैं उन्हें ढोंगी समझो। जैसे किसी गरीब मनुष्यके धनियोंके समान वस्त्र पहनकर और तड़क-भड़क करके घूमनेपर हम उसे ढोंगी और झूठा समझते हैं, वैसेही जिसके हृदयमें प्रेम नहीं है और जो भक्तिका बाहरी आडंबर रखते हैं उन्हें भी ढोंगी समझना चाहिये।

जिसका मुख अच्छा नहीं होता वह दूसरोंके सामने सुन्दर लगनेके लिए अपने मुँहपर पाउडर पोतकर घूमता है और इसीसे मनमें प्रसन्न होता है, तथा वास्तवमें वैसा न होनेपर भी जो भगतजी बने फिरते हैं, इसलिये तमाम भक्तिके बाहरी तड़क भड़क करने वालोंको भी समझो।

ऐसे तड़क-भड़क वाले भक्त प्रतिदिन दर्शन करने जाते हैं, कीर्तन करते हैं, भजन गाते हैं, हरिकथा सुनते हैं, भागवतकी

बड़ी बड़ी बातें सीखते हैं और बाहरके सेवा-स्मरणमें भी बहुत सा समय व्यतीत कर देते हैं, किन्तु उनका हृदय पाप-शून्य नहीं रहता। काम, क्रोध, लोभ, मान और ईर्षा उनके हृदयमें भरी रहती है, तो भी बाहरसे वे भक्तिका ढोंग करते हैं किन्तु याद रखो कि जब तक अंतःकरण शुद्ध न हो तब तक भक्तिके बाहरी शृङ्गारोंसे और ऊपरी ढोंगसे आत्माका कुछ भी कल्याण नहीं हो सकता। इससे सब भाइयोंको ढोंगमें ही अंत तक न पड़े रहकर अंतःकरण पवित्र करनेपर अधिक ध्यान देना चाहिये।

सब भक्त ढोंगी नहीं होते और न वे ऐसे बाहरी तड़क-भड़कपर ज़ोर देते हैं। वे तो सर्वदा प्रभु-प्रेमसे आनंदित रहते हैं और जो उनके पास जाता है उसे भी आनन्द देते हैं क्योंकि भक्तिका लक्षण प्रभु-प्रेमसे उत्पन्न आनन्द है, इससे बड़े भक्त बाहरी चिन्होंकी अपेक्षा हृदयके आनन्दपर ही अधिक भार देते हैं। इतना होनेपर भी बाहरसे भक्ति दिखाना भी बहुत आवश्यक है क्योंकि जैसे प्रत्येक लश्करकी अपनी ध्वजा होती है और प्रत्येक लश्करके सिपाहीकी भिन्न-भिन्न वर्दी होती है, वैसेही भगवानके प्रत्येक भक्तको संसारमें अपनी भक्ति प्रकट करनेके लिए बाहरी चिन्ह होना चाहिये।

कुछ मनुष्योंको प्रभुपर हृदयसे प्रेम होता है और इसके लिए वे यथाशक्ति व्यय भी करते हैं किन्तु वे बाहरी चिन्ह धारण नहीं करते, क्योंकि वे भक्त या प्रेमी कहा जाना पसन्द नहीं करते और इसीसे वे दूसरे हरिजनोंसे मिलते भी नहीं तथा वे कंठी-माला या तिलक लगाना भी नहीं चाहते। वे कहते हैं कि इसमें क्या रखा है? किन्तु उनका इस प्रकार व्यवहार करनेका कारण यह है कि उनका हृदय-स्थित भाव

अच्छी तरहसे खिला नहीं है और उनमें प्रकट करनेका साहस नहीं होता, इससे वे लोक-लाज व लज्जासे भक्तिके मैदानमें बाहर नहीं आ सकते। ऐसे लोगोंको भी कच्चा भक्त समझना चाहिये। सच्चे भक्त प्रभुकी सेवा करनेमें संकोच नहीं करते इससे इन्हें भी सच्चा भक्त नहीं कह सकते।

सारांश कि हृदयके भाव बिना बाहरके चिह्न जैसे व्यर्थ हैं वैसेही हृदयमें सच्चे होनेपर भी जो भक्तिके बाहरी चिह्न धारण नहीं करते उन्हें भी ऐसे ही कच्चे भक्त समझो। इससे हम सबको पैदा करनेवाले परमकृपालु परमात्माका हृदयसे तथा बाहरसे मान करना सीखना चाहिये और याद रखो कि जब हमारेमें सच्ची दीनता आवेगी तभी महान प्रभुको पवित्र अंतःकरणका सच्चा मान दिया जा सकेगा, इससे यदि अपनी भक्तिको सफल करना हो तो सर्वदा ऐसी ही भावना रखो कि:—

मो में गुण कछु है नहिं, तुम गुण भरे हो जहाज।
गुण अवगुण न विचारिये, बाँह गहेकी लाज॥
नहिं विद्या नहिं बाहुबल, नहिं खरचनको दाम।
तुलसी मो सम पतितकी, तुम पत राखो राम॥
क्या मुखतें बिनती करूँ, लाज आवत है मोहिं।
तुम देखत अवगुन करूँ, कैसे भाऊँ तोहिं॥
औगुन किये तो बहु किये, करत न मानी हार।
भावे बंदा बकसिये, भावे गरदन मार॥
मैं अपराधी जनमका, नख सिख भरा विकार।
तुम दाता दुख-भंजना, मेरी करो संभार॥
ऊँचे पानी ना टिके, नीचेही ठहराय।
नीचा होय सो भरपीवे, ऊँच पियासा जाय॥

नानक नान्हा हो रहो, जैसी नान्ही दूब
और घास सुख जायगी, दूब खूबकी खूब।
लघुतामें प्रभुता बसे, प्रभुतामें प्रभु दूर।
कीड़ी मीसरी खात है, हस्ती फाकत धूल॥

७५

परमात्माका गुणगान करनेसे दानका फल मिलता है

दान क्या है? हम समझते हैं कि एकादशी, अमावस्या, संक्रांत या ग्रहणके समय तथा आसन्न मृत्युके समय या मरने-के बाद जो कुछ हम देते हैं उसीका नाम दान है। साधुओंको दाल-चावल आदि देना, भिखारियोंको बचा घटा या जूठन देना, किसी गरीबको फटा हुआ कपड़ा या पुरानी पुस्तक देना या किसीको दक्षिणा देना या तीर्थोंमें ब्राह्मण जिमानेका अर्थ दान है। किसी प्यासेको पानी, भूखेको भोजन देना, किसी भूले हुएको रास्ता बताना, बीमारको दवा देना या बताना, दुखीको दिलासा देना, सगेसंबन्धीको कामकाजके समय सहायता देना या सांसारिक व्यवहारमें प्रतिदिन अथवा जब कभी बन सके सब लोगोंके साथ यथाशक्ति रियायत करके उदारतासे बर्तना भी दान है। बहुतसे लोगोंको यह दान साधारण लगता है, किन्तु क्या तुम जानते हो ऐसे छोटे छोटे दानोंका क्या मूल्य है? महात्मा लोग कहते हैं कि जिसके यहां सर्वदा छोटे बड़े दानका प्रवाह बहा करता है वही भाग्य-शाली है। क्या तुम जानते हो कि दान क्या है? संत कहते हैं कि दान जीवन सुधारनेकी दवा, संकुचित पड़ी हुई हृदयकी वृत्तियोंको फैलानेकी दवा, जगतमें ईश्वरी स्नेह फैलानेकी

फल, मनुष्यके स्वार्थको हृदयमें दया रखनेकी लगाम, मनुष्यको ऊँचे चढ़ानेकी सीढ़ी, ईश्वरके मार्गमें आगे बढ़ना सीखानेकी पाठशाला, ईश्वरी कृपा खींचनेका यन्त्र; जगतके सब जीवोंमें ईश्वरका चैतन्यत्व दिखानेकी दुर्बीन, स्वर्गका द्वार खोलनेकी कुञ्जी तथा आत्माको परमात्माकी ओर ले जानेका आकर्षक यंत्र है। दानसे यह सब हो सकता है इससे हमारे उत्तम धर्म शास्त्रोंमें स्थान-स्थानपर दान देनेकी आज्ञा है, किन्तु याद रखो कि यह सब अनन्त ब्रह्मांडके नाथकी कृपासे तथा उन्हें रिझानेके लिएही होता है और ईश्वर तो तभी प्रसन्न होता है जब कि मनुष्य अपनी आत्माका स्वरूप पहचानकर ईश्वरकी महिमा समझकर उसकी ओर आकृष्ट होता है। इसके अतिरिक्त मान या नाम प्राप्त करनेके लिए बड़ाईके लिए देखादेखी, लोकलाजसे, परम्परागत रीवाजके लिए, किसी स्वार्थवश, तथा ऐसेही दूसरे कामोंके लिए जो दान दिया जाता है उससे कुछ भी लाभ नहीं होता, तो भी धीरे धीरे लाभ होनेका मार्ग यह दान ही है, इससे दान देना मनुष्यका जीवनमें सर्व प्रथम कर्त्तव्य है।

भाइयों! ऐसा श्रेष्ठ दान देनेका कारण क्या है? कारण ईश्वरका स्वरूप पहचानना और उसके पास पहुँचना है और दान देनेका फल क्या है? यही कि ईश्वरमय होकर ईश्वरके पास पहुँचकर उसका गुण-गान करना। इस प्रकार विचार करनेसे ऐसा मालूम होता है कि ईश्वरकी ओर आकृष्ट होकर ईश्वरका स्वरूप पहचानना सीखनाही दान देनेका मूल हेतु है और ईश्वरमय होकर उसका गुण गाया करनाही दान देनेका फल है। शास्त्रमें कहा है कि स्नेहके सागर, दयाके भंडार, निराधारके आधार, आनन्दके अवतार, मोक्षदाता महान ईश्वर-

बाओ गुण गाते हैं उन्हें दान देनेका फलमिलता है, क्योंकि दान देनेसे जो फल मिलता है वही फल ईश्वरका गुण गान करनेसे भी मिलता है, और दान देनेमें बहुत प्रकारकी खारीबियां हैं, बहुत सी अड़चनें हैं और बहुतसे मनुष्य बेचारे ऐसे बुरे संयोगमें पड़े होते हैं कि वे दान नहीं दे सकते, किन्तु सर्वशक्तिमान पवित्र पिता परमात्माका गुण-गानको सब लोग सरलता पूर्वक कर सकते हैं इससे यह दानसे भी बढ़कर है। इसमें भाइयो ! ईश्वरकी महिमा समझ कर, ईश्वरमय होकर हृदयमें परमेश्वरका गुण-गान करो, गुण-गान करो।

रामरतन धन पायो, मैया मैं तो राम० (टेक)
सत संगत सद्गुरुकी कृपासे, तो भाग्य बड़ो बनी आयो, मैया मैं तो राम०
खरच्यो न खूटे वाको चोर न लूटे, तो दिन दिन होत सवायो मैया मैं तो–राम०
नीर न डूबे वाको अग्नि न जाले, तो धरणी धस्यो न समायो मैया मैं तो–राम०
रामको नाव भजनकी बतियाँ, तो भवसागर सों तास्यो, मैया मैं तो–राम०
बाई मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर तब चरण कमल चित लायो मैया मैं तो-राम०

७६

दूसरोंकी रसोई पवित्र ब्राह्मणोंको अच्छी नहीं लगती वैसे ही कोरे व झूठे उपदेशकोंकी बातका भक्तोंपर कुछ असर नहीं होता

किसी मंदिरमें व्यासजी कथा कह रहे थे, वहाँ बाहरसे आया हुआ एक भक्त कथा सुननेके लिए गया। कथा समाप्त होनेपर अपनी प्रशंसा सुननेकी इच्छासे मनमें फूलकर कुछ खुशामद करते हुए व्यासने कहा—क्यों भक्त! कथा कैसी

लगी, मेरा तो ऐसे ही चलता है, यदि आप सुनकर प्रसन्न
हों तो मैं चरितार्थ हो गया। यहांके लोग बड़े अज्ञानी हैं
कुछ समझते बूझते नहीं, इससे मैं इसी प्रकार चलाया क
हूँ। आपके समान यदि कोई ज्ञानी आ जाया करे तो
खूब रस जम जाया करे।

व्यासजी महाराज जब इस प्रकार कह रहे थे, उस स
वह भक्त अपनी चद्दरमें से एक पुटली खोलने लगा, तथा
हाथमें लेकर उसने कहा—लो महाराज! यह बादामी हल
लो। बहुत देर हो गयी, ज़रा नाश्ता कर लो। पीछे
कथाकी बात करना। हमारे देशमें ऐसा हलवा-पलवा मिल
नहीं, किन्तु मार्गमें एक दुकानपर यह दिखायी पड़ गया
अच्छा मालूम हुआ इससे साधुओंके लिए मैंने दो सेर ले लि
किन्तु पहले आपही मिल गये, अब आपहो रख लीजि
साधुओंके लिए और ले लूँगा। यह सुनकर व्यासने कह
भक्त यह मुझे अच्छा नहीं लगेगा, मुझे नाश्ताकी ज़रूरत
है। मेरे घरपर खिचड़ी और साग तैयार है। भक्तने कहा
महाराज! घर जाकर खिचड़ी खानेकी अपेक्षा तो यहीं हल
ही खा लेना अच्छा है। मैंने हलवाईसे पूछा था कि तुम क
जाति हो, उसने बताया कि मैं सरयूपारिया ब्राह्मण हूँ। व्यास
कहा—किन्तु मैं औदीच्य ब्राह्मण हूँ इससे मैं खा नहीं सकता

यह सुनकर उस भक्तने कहा—व्यासजी महाराज! मै
आप किसी दूसरेकी बनायी चीज़ नहीं खा सकते, पैसे
भक्तोंका तो मन नहीं है उसकी बातें अच्छी नहीं लगतीं
कथामें बड़े-बड़े शब्द कहना आपको अच्छी तरह आता
भाषा भी आपकी आलंकारिक होती है, लड़के भी आप
हैं, कथा सुननेवाली स्त्रियोंको प्रसन्न रखनेकी कुंजी भी आ

पास अच्छी है, दृष्टांत भी आप अच्छे देते हैं और बातें भी आप शास्त्रानुसार कहते हैं तथा परिश्रम भी करते हैं किन्तु इन सबके होते हुए भी मुझे एक बातकी कमी दिखायी पड़ती है वह है प्रभु-प्रेम-भगवदावेश। व्यासजी! क्षमा कीजियेगा, यदि सच पूछिये तो आपको बाहरी बातें सब आती हैं किन्तु अभी आपका दम मग नहीं है, हृदयमें प्रेम आया नहीं है और इसके बिना बाहरी खूबियाँ व्यर्थ हैं। हृदयमें प्रेम हो किन्तु बाहरी सफाई न हो तो चल सकता है, पर बाहर तो तड़क-भड़क हो और भीतर पोला हो तो मुझे अच्छा नहीं लगता। व्यासजी महाराज! मैं ऊपरका रंग नहीं देखता, मैं तो भीतरका तत्त्व देखता हूँ। भाई! जब आपपर प्रभुकी कृपा हुई है, शास्त्रकी बातें आपके मस्तिष्कमें चक्कर लगा रही हैं और धर्मका उपदेश करनेके लिए आपको मैदान मिला है तब शुद्ध हृदयमें, दया दया कर बोलनेमें, भाषाको अलङ्कारिक बनानेमें तथा बाहरी पंडिताई दिखानेमें न जाकर हृदयमें भगवदावेश लानेका प्रयत्न करना चाहिये, इससे आपकी कथा इस समयकी अपेक्षा सैकड़ों गुनी अधिक प्रभावशाली हो जायगी और तभी यह भक्तोंके काम आयेगी। भाई! केवल पंडिताई न बघार-कर भक्त होकर सरल बनो, सरल बनो और बाहरी ज्ञानमें न रह जाकर ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करो।

> गंगा जमुना सरस्वती, सात समुद भरपूर।
> तुलसी चातकके मते, बिन स्वाति सब धूर॥
> कबीर सीप समुद्रकी रटे पियास पियास।
> और बूँदको ना गहे, स्वाति बूँदकी आस॥

७१

अपना दोष देखना तथा प्रभुकी महिमा समझनाही भक्ति मार्गका तत्त्व है

हम प्रायः पूछा करते हैं कि धर्म क्या है? और धर्म सब विधियाँ हम कैसे पालन कर सकते हैं क्योंकि कुछ लोगों हम सुनते हैं कि प्रभुके अवतारोंको माननाही धर्म है। त दूसरे लोग कहते हैं अवतारोंको नहीं बल्कि एक ईश्वर माननाही धर्म है। कुछ लोग कहते हैं जीव-दयामें धर्म है त दूसरे कहते हैं बलिदानही धर्म है। कुछ लोग कहते हैं कि मूर्त्ति-पूजा धर्म है, तो दूसरे कहते हैं कि यह अधर्म है। कुछ लोग कहते हैं पुनर्जन्म मानना धर्म है तो और लोग जवाब देते हैं कि इसे माननेकी आवश्यकता नहीं है। कुछ लोग कहते हैं कि कर्मके नियम समझकर उसका पालन करनेमेंही धर्म है क्योंकि कर्मके नियमोंसे कोई भी बाहर नहीं जा सकता तब दूसरे कहते हैं कि कर्म तो जड़ है और कर्मका फलदाता ईश्वर है, इससे ईश्वरकी कृपा माननाही धर्म है। श्राद्ध आदि शास्त्रोक्त क्रियाओंके करनेका नामही धर्म है, ऐसा बहुतसे लोग मानते हैं तो दूसरे लोग कहते हैं कि ये क्रियायें जिनके लिए की जाती हैं उन्हें पहुँचती नहीं, इससे इन्हें करना व्यर्थ है। कुछ लोग कहते हैं कि बाल-विधवाका पुनर्विवाह करना धर्म है तो दूसरे कहते हैं कि यह अधर्म है। कुछ लोग कहते हैं कि मनुष्यमात्रके साथ अभेद वृत्तिसे भ्रातृभाव रखनाही धर्म है, तो दूसरे लोग कहते हैं कि अधिकार भेदानुसार वर्णाश्रम धर्मका पालन करनाही धर्म है। कुछ कहते हैं कि ईश्वरके

जीव बना है, यह मानना धर्म है तब दूसरे कहते हैं कि जीव ईश्वरका बनाया हुआ नहीं है बल्कि अनादि है, यह मानताही धर्म है। कुछ कहते हैं कि विश्वाससेही तर सकते हैं दूसरे कहते हैं इसमें कुछ नहीं रक्खा है ज्ञानसेही मोक्ष मिल सकती है और कुछ लोग कहते हैं कि मुक्ति होनेपर आत्मा परमात्मासे मिल जाती है यही धर्म है, तब दूसरे कहते हैं कि आत्मा कभी किसी भी प्रकारसे परमात्मामें मिल नहीं सकती, यह मानना धर्म है। इस प्रकार एक दूसरेके विरुद्ध बहुतसी बातें हम सुना करते हैं। इनमें यह तो मुख्य विषय है किन्तु इन प्रत्येक विषयोंके भीतर दूसरी सैकड़ों क्रियायें होती हैं और उनमें भी बहुत सी बातें मान लेने योग्य होती हैं। और इनमें यदि हम प्रवेश करें तो इनके उलझनमें हमें फँस जाना पडेगा और उनका निर्णय करनेमें कई जीवन व्यतीत करनेपर भी कोई परिणाम न निकलेगा। ऐसा होनेपर भी प्रसंगोपात बारम्बार ऐसी बातें सुना करते हैं जिससे हम सोचमें पडजाते हैं कि धर्म क्या है? इसका कोई छोटा अर्थ और सरल मार्ग मिलजाय तो अच्छा हो। इसबारेमें एक भावुक जिज्ञासुके पूछनेपर एक ज्ञानी महात्माने इस प्रकार उत्तर दिया:—

अपना निजी दोष ढूँढना और सर्वशक्तिमान महान प्रभुकी महिमा समझनाही धर्म है। अपना दोष देखा करनेसे अपनी भूल तथा निर्बलता ज्ञात हो जाती है और पापके स्थान तथा उनके कारण भी समझमें आ जाते हैं। ऐसा होनेपर हममें दीनता आ जाती है और ज्यों ज्यों दीनता आती जाती है त्यों त्यों सर्वशक्तिमान परमेश्वरकी शरणमें जानेकी इच्छा बढ़ती जाती है। अनन्तर प्रभुकी शरणके बलसे शुद्ध हुए जीवके समझमें प्रभुकी अलौकिक महिमा आती जाती है। इस समय

गये सत्‌शास्त्रोंमें कहा है कि जिसने पक्षिओंको पंख, वृक्षोंमें फल, फूलोंमें सुगंध, आकाशको विशालता, तारागणको प्रकाश दिया है, धातुओंको मूल्यवान, वस्त्रोंको निर्दोष बनाया है, प्राणियोंको अपना अपना बचाव करनेका साधन दिया है, मनुष्यको बुद्धि व जलके जीवोंको उसी प्रकारका रक्षणशस्त्र दिया है, देवोंको देवत्व, जीवोंको जीवन दिया है, जगतको उन्नतिके क्रममें लगाया है और जिसने अपने सब गुप्त भेदोंकी कुञ्जी मनुष्योंके सुखके लिए इस जगतमें फेंक दी है, जिसने मनुष्यको तारनेके लिए मनुष्यकी आत्माके साथ सीधा संबंध जोड़ रखा है उस परम कृपालु सर्वशक्तिमान परमात्माका गुन गानेसे भक्तको तप करनेका फल मिलता है, उस दयालु अवि-नाशीका गुण गानेसे शास्त्र पढ़नेका एवं यज्ञ करनेका फल मिलता है, उस गुणातीत, ज्ञानस्वरूप तथा प्रेमस्वरूपका गुण गानेसे वेद पढ़नेका, ज्ञान प्राप्त करानेका तथा दान देनेका अविनाशी फल मिलता है। क्योंकि इन छः प्रकारके भिन्न-भिन्न कार्मोंका हेतु ईश्वरकी महिमा समझकर ईश्वरमय होना ही है और उनका फल भी ईश्वरकी महिमा समझकर तथा ईश्वरमय होकर अखंड-आनंद प्राप्त करना है। यह हेतु ईश्वर-का गुण गानेसे भी सिद्ध होता है और यही फल भी मिल जाता है, इससे हेतु और फल ये दोनों सिद्ध हों ऐसी अपूर्व शक्ति महान प्रभुका गुण गान करनेमें है और उपरोक्त सब प्रकारके धर्म, सर्वशक्तिमान परमात्माके गुण गानेमें आ जाते यदि ये सब फल यहीं सरलतासे तथा शीघ्र प्राप्त करना ईश्वरमय होकर परमकृपालु ईश्वरका गुण गाओ, महान गुण गाओ क्योंकि इसके नाम स्मरण बिना सब व्यर्थ है। इससे भक्तगण गाते हैं :—

इन्जिन बिन ज्यों रेल है, दीपक बिन मन्दिर जैसा है
जैसे प्राण बिन शरीर सूना है, जैसे बिन सूरजकी रजनी है
वैसे तुम बिन मेरा जीवन है। हरि०
जैसे पुष्प बिनकी क्यारी है, जैसे पुत्र बिनकी महतारी है
बनिता पर पुरुष जैसा है। हरि०
दूरा बिन फूल बगीचा है, जैसे जल बिनकी माता है,
जल बिन सरोवर जैसा है। हरि०

७६

ईश्वर कृपा बिना जीव मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता

कोई छोटा बालक वृक्षसे फल तोड़कर खा लेना चाहे किन्तु नाटा होनेसे फल पा न सके, परन्तु पिताके उसे उठाकर ऊँचा करनेपर जैसे वह फल पा सकता है, वैसेही मनुष्य अपने पुरुषार्थसे मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता, बल्कि ईश्वर जब उसपर कृपा करे तभी वह मोक्ष प्राप्त कर सकता है।

दूरकी वस्तुओंको जैसे हम नग्न आँखोंसे देख नहीं सकते, किन्तु दुर्बीनसे वह स्पष्ट दिखायी पड़ती है, वैसेही प्रभुकृपा बिना हम कुछ कर नहीं सकते। प्रभु-कृपासे ही सब कुछ होता है।

अंधेरेमें स्थित मनुष्य जैसे प्रकाशकी सहायता बिना कुछ देख नहीं सकता, वैसेही प्रभु-कृपा बिना हम कुछ कर सकते नहीं, तब मोक्ष कहांसे मिलेगी? इससे हमें प्रति पल प्रभुकृपाकी आवश्यकता है।

बीमार अशक्त मनुष्य जैसे दूसरेकी सहायता बिना उठ बैठ नहीं सकता, वैसेही प्रभुकृपा बिना अकेले जीवसे कुछ हो नहीं सकता।

जीव बिना देह जैसे, मुर्दा कहा जाता है, और इस मुर्देसे कोई काम जैसे हो नहीं सकता, वैसे ही प्रभुकृपा बिना कुछ हो नहीं सकता, प्रभुकृपा बिना हम शवके समान हैं, इससे हमें प्रतिक्षण प्रभुकृपाकी आवश्यकता है।

कोई भी सेना जब लड़ाईमें विजय प्राप्त करके आती है तब उसका सब मान उस सेनाके सेनापतिको मिलता है, इसी प्रकार जो कुछ अच्छे कार्य हम करते हैं उसका मान ईश्वरको ही मिलता है।

हम जानते हैं कि फलफूलके वृक्ष जमीनपर होते हैं किन्तु यदि सूर्यका प्रकाश उन्हें न मिले तो केवल जमीनसे कुछ भी न हो, ऐसेही जो कुछ अच्छे काम हम करते हैं वे सब ईश्वर कृपासे ही होते हैं, इससे उनका मान प्रभुको ही देना चाहिये।

लिखनेके लिए चाहे कितना ही अच्छा कलम क्यों न हो, यदि स्याही न हो तो केवल कलमसे लिखा नहीं जा सकता ऐसेही प्रभुकृपा बिना केवल अपने पुरुषार्थसे कुछ नहीं हो सकता।

किसान बड़ा परिश्रम करके खेत जोतकर बीज बोता है, किन्तु केवल अपने परिश्रमपर ही भरोसा नहीं कर सकता, वह हाथ जोड़कर दीनतापूर्वक प्रार्थना करता है कि हे प्रभु! मैं तो सब कुछ कर चुका, अब तू कृपा कर तो हो सकता है।

> प्राणी करे प्रयत्न पर, बने अदृष्ट बनाव।
> सबलाके सबला पड़े, पासा फेरा दाव॥
> विश्वपतिकी कृपा बिन, काम न सीधे कोय।
> खाते खेड़े क्षेत्र पर, हरि करे-ते होय॥

सत्संगमें गायी जानेवाली भगवानके नामकी भजन

वृक्षका जैसे जलकी आवश्यकता है और शरीरको जैसे भोजनकी आवश्यकता है वैसेही जीवको भजनकी आवश्यकता है, किन्तु बहुतसे मनुष्य कहते हैं कि भजन ध्यानके समय बहुतसे विचार आ जाया करते हैं। इसकी दवा भक्तोंके लिए यह है कि ध्यानके समय भगवानके अतिरिक्त दूसरे विचार यदि मनमें आवे तो नीचे लिखी हुई किसी भी भजनको गाये, इससे जीव ईश्वरके साथ अनन्य हो जाता है:—

(१) जय कृष्ण कृष्ण, जय कृष्ण कृष्ण—
(२) जय राधेकृष्ण, जय राधेकृष्ण—
(३) हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे,
हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे—
(४) विट्ठल रखमाई, विट्ठल रखमाई श्यामला—
(५) प्रह्लाद भने रामकृष्ण गोविन्दा,
सब संत भने नरहरि विट्ठल गोपाला—
(६) हरि रे राम राम राम, सीता राम राम राम—
(७) जय जय रामचन्द्र रघुवीर सीता रामचन्द्र रघुवीर—
(८) रघुपति राघव राजाराम, पतितपावन सीताराम—
(९) राधेकृष्ण प्रभु कुंजबिहारी, मुरलीधर गोवर्धनधारी—
(१०) जय जय यशोदानन्दनकी, दशरथसुत आनन्द-कन्दकी—
(११) जय जय गोवर्धनधारी, मुकुन्द माधव गिरिधारी—
(१२) रामकृष्ण गोविन्द गोपाल हरे, गोपाल हरे गोपाल हरे—
(१३) नरहरि नंदलाल, भजो गोविंद गोपाल—
(१४) हरिनारायण गुरुनारायण—

(१५) रामकृष्ण गोविंद वासुदेव गोविंद

(१६) रामचंद्र रघुवीर, जय जय रामचंद्र रघुवीर—

(१७) हरिनारायण हरि, हरिनारायण हरि;
हरिनारायण हरिनारायण नारायण हरि;
हरि नारायण हरि, हरि नारायण हरि—

(१८) हरि हरि नारायण हरि—

(१९) श्रीमन्त नारायण नारायण नारायण—

(२०) रण छोड़ रंगी, मारा जन्मोजन्मका संगी,
रण छोड़ राया, मने लागी तुम्हारी माया;
रण छोड़ रसिया, मेरे हृदय कमलमें बसिया

(२१) तेरी बन जायेगी, तेरी तो बन जायेगी,
तेरी बन जायेगी, गोविन्द गुण गाये से

(२२) हरि बड़ा हरि बड़ा, सबसे बड़ा हरि बड़ा,
बाकी सर्व गपोटा, सबसे हरि बड़ा हरि बड़ा

(२३) सच्चा सच्चा है नाम, तेरा हरि विट्ठला,
हरि विट्ठला, प्रभु विट्ठला, सच्चा

(२४) हमारा रामधनी है जी, हमारे क्या कमी है जी,
हमारा रामधनी है जी, हमारे क्या कमी है जी।

(२५) हमारी राम राम सबसे, हमारी राम राम सबसे,
हमसे तुमसे गुरु गोविन्दसे, साधुभक्त संतो से, हमारी

८१

श्रद्धासे होने वाले लाभ

विश्वास वृक्षके मूलके समान है। मूल बिना जैसे नहीं हो सकता, वैसेही विश्वास बिना मनुष्य मुक्ति पा सकता।

पीर पैगम्बरोंकी पूजा करते हैं उन्हें ओछे विश्वासवाला सम
झना चाहिये क्योंकि चाँदीके लिए जो तुम्हारे पीछे पीछे फिरत
है उसे जब सोना मिलेगा तो वह तुम्हें छोड़ देगा, ऐसेही पूज
करनेवालोंका कार्य जब हो जाता है अथवा नहीं होता तब
वे भी प्रभुको छोड़ देते हैं, इससे ऐसे किसी भी पूजाक
विश्वास मत करो।

विश्वाससे हमारा प्रभु-प्रेम बढ़ता है और विश्वाससे प्रभुके
लिए दुख सहनेकी हमें शक्ति आती है।

स्वच्छ जलमें जैसे सूर्यका प्रतिबिंब पड़ता है, ऐसेह
विश्वाससे जिनका हृदय स्वच्छ हो गया है उन्हें ईश्वरीय
सत्य मार्ग मिलता है।

जिस घरकी नीव कमज़ोर होती है वह गिर पड़ता है, ऐसे
ही जिसमें विश्वास नहीं होता उसका काम भी प्रभु तक पहुँच
नहीं सकता।

किसी भी प्रकारकी अग्नि बिना दीपक जल नहीं सकता
ऐसेही विश्वास बिना कल्याण नहीं हो सकता।

अन्नसे जैसे शरीरका पोषण होता है ऐसेही विश्वासमे
आत्मा पुष्ट होती है। वृक्षको हरा रखनेके लिए जैसे सवदा
जल देना चाहिये, ऐसेही अपने विश्वासको दृढ़ करनेके लिए
शास्त्रका अभ्यास तथा सत्संग करना चाहिये।

जो भगवानपर भरोसा रखते हैं वे भाग्यशाली हैं क्योंकि
वे शांतिसे रह सकते हैं और एकान्तमें सो सकते हैं।

प्रायः धनी लोग सिक्का नहीं देते बल्कि चेक देते हैं, इन
चेकोंको मनुष्य विशेषके विश्वासपर लोग ले लेते हैं, ऐसेही
प्रभुपर विश्वास रखकर हमें प्रभुके नामका चेक लेना चाहिये।

कबूतर ऐसे डालपर अपना खोता बनाता है जो गिर नहीं

सकती और फिर बेफिक्र हो उड़ा करता है, ऐसेही हमें विश्वास पूर्वक प्रभुरूपी डालको पकड़कर संसारके सब काम-काज करना चाहिये।

मुर्दाको कपड़ा पहरानेसे वह कुछ सुन्दर नहीं दिखाई पड़ता, ऐसेही प्रभुपर विश्वास न रखनेवाले मनुष्योंकोभी मुर्दाके समान समझो और उनके श्रद्धारहित कर्मकांडोंको बाहरी शृङ्गार समझो, क्योंकि जैसे मुर्दाका शृङ्गार करनेसे वह कुछ विशेष सुन्दर नहीं हो जाता वैसेही विश्वास रहित कर्मकांड भी कुछ फल नहीं दे सकते।

दोहा

जीव जीवके आसरे, जीव करत है राज।
तुलसी रघुवर आसरे क्यों बिगड़ेगो काज॥
तुलसी लोहा काठ संग, चलत फिरत जल मांह।
बड़े न बूड़त देत है, जाकी पकड़े बांह॥
आशा तो एक रामकी, दूजी आस निरास।
नदी किनारे घर करो, कधि न मारे प्यास॥
एक भरोसो एक बल, एक आस विश्वास।
स्वाति बूँद रघुनाथ है, चातक तुलसीदास॥
काहुके धन-धाम है, काहुको परिवार।
तुलसी मो सम दीनको, सीताराम आधार॥

८२

महात्माओंके चरित्रका गुण-गान करनेसे शास्त्रके अभ्यास करनेका फल मिल सकता है

भकराज महाराज कहते कि मनुष्योंका जीवन सुधा-

रनेमें महात्माओंका चरित्र जितना सहायक हो सकता है उतना और कोई वस्तु नहीं हो सकती। शास्त्र में भी कहा है कि महात्माओंका चरित्र सुननेसे और उनका गुणगान करनेसे शास्त्र पढ़नेका फल मिलता है। यह सुनकर एक मनुष्यको संशय हुआ कि ऐसा कैसे हो सकता है? महात्माओंका गुण-गानेसे शास्त्रका फल कैसे मिल सकता है?

भक्तने उत्तर दिया—भाई! शास्त्र पढ़नेका हेतु क्या है? यही कि हमें यह काम करना चाहिये और इसे नहीं करना चाहिये किये हुए पापोंके लिए क्षमा माँगना सीखना, पुनः नये पाप न होने पायें, इसकी उपाय करना, हृदयमें भगवद् प्रेम लानेका प्रयत्न करना, अपने स्वार्थको वशमें रखना, जगतका मिथ्यात्व समझना, हमारा जन्म अपने लिए नहीं बल्कि जगतके लिए है यह समझना, आत्माका बल समझना, सर्वशक्तिमान अनंत ब्रह्मांडके नाथकी महिमा समझना और परमात्माका तार लगा रखना ही शास्त्र पढ़नेका फल है और महात्माओंके चरित्रोंमें भी अनुभवसिद्ध ये ही बातें होती हैं और शास्त्र तो केवल उपदेश देते हैं किन्तु महात्मा लोग तो इन उपदेशोंको अनुभवमें परिणत करके जगतके सामने नमूनारूपमें अपना प्रत्यक्ष दृष्टान्त दिखाते हैं। इससे शास्त्रके अभ्यासकी अपेक्षा महात्माओंका चरित्र भक्तोंपर अधिक प्रभाव डाल सकता है क्योंकि महात्माओंकी बात करनेसे स्वभावतः उनके गुणोंकी बातें निकल पड़ती हैं और पीछे उनमें ये गुण कैसे आये यह बात निकलती है। उसमें और भी प्रवेश करनेपर अंतमें यही समझमें आता है कि उनमेंसे किसी किसीने बहुत पवित्रता रखा था, किसीने नीति, सेवा या वैराग्यकापालन किया था, किसीने नामस्मरण तो किसीने प्रभुके लिए बहुत दुःख सहा था। किसीने अपने

भाई बहनोंमें ज्ञानका प्रचार किया था, कोई दयाकी मूर्ति था तो कोई सत्यका नमूनारूप था, कोई धर्मका अवतार समान था और कोई आनंद महासागर समान था। ऐसा बननेमें उन्हें कितना परिश्रम पड़ा था ? बीचमें कौन कौनसी अड़चनें पड़ीं, इन अड़चनोंको उन्होंने कैसे तोड़ा। पहले कैसे थे और पीछे वे कैसे हो गये। प्रथम उनके हृदयमें प्रभु प्रेम कैसे आया, पीछे उन्हें कैसे पोषण मिला, कैसे वह बढ़ा और पहले हमारे समान होनेपर भी समय पाकर प्रभुके मार्गमें वे कैसे आगे बढ़ गये तथा अंतमें लोगोंने उन्हें महात्मा कैसे माना ? आदि मुख्य बातें जानने योग्य होती हैं। इन बातोंके भीतर और भी बहुत सी जनस्वभावके जानने योग्य दिलचस्प बातें होती हैं। यह सब रसिकवाणीमें उत्तम वक्ताके मुँहसे सुननेपर इन दृष्टांतोंका हमारे जीवनपर जादूके समान असर होता है और इनमें जो गुण हमारे प्रकृतिके अनुकूल होते हैं उनकी ओर स्वभावतः हमारा मन खिंच जाता है और धीरे धीरे ये दृष्टांत हमारे मनको अच्छे लगते हैं। इससे मन उसीमें रमा करता है जिससे अपने रहन-सहनपर वह प्रभाव डालने लगता है और हमारा जीवन सुधरने लगता है, इससे भाइयो ! याद रखो कि शास्त्रका अभ्यास करनेका जो फल होता है वही फल महात्माओंका गुणगानसे भी हो सकता है। हे हरिजनो ! यदि सरलतासे जीवन सुधारना चाहते हो, पापोंसे बचना हो, आत्मिक बल समझकर प्रभुके मार्गमें आगे बढ़ना हो, अपना तथा अपने भाई बहनोंका कल्याण करना हो और अखंड आनन्दरूप सर्वशक्तिमान परमात्माके साथ आत्माका तार लगाकर उसका आनंद लूटना चाहते हो तो संतों, महात्माओं, आचार्यों भक्तों, साधुओं तथा आगे बढ़े हुए हरिजनोंका चरित्र सुनो।

तथा दूसरोंको सुनाओ, क्योंकि यह सबसे सरल एवं उत्तम मार्ग है। जीवन सुधारनेके लिए महात्माओंके उत्तम चरित्रको नमूनारूप अपने सामने रखो और मनको उसीमें लगाये करो, इससे अंतरकी भावनानुसार उनके चरित्रका बल तुम्हारे हृदयमें आने लगेगा, जिससे शास्त्रका अभ्यास करनेका फल मिल जायगा। इसलिए महात्माओंका चरित्र सुना करो, उसका अवलोकन एवं मनन किया करो, तथा उसका अपने जीवनमें उपयोग करनेका प्रयत्न किया करो, इससे तुम भी महात्माओंके समान हो सकोगे क्योंकि महात्माओंके बारेमें प्रभुके प्यारे भक्त कहते हैं:—

दोहा

धन्य भूमि धन्य गामते, जहाँ संत बिराजे आइ।
सभी भूमि पावन करे हिलिमिल हरिजश गाइ॥
भक्तकी महिमा अधिक, पार न पावे कोय।
जहाँ भक्तजन पगधरे, अड़सठ तीरथ सोय॥
भक्तसंग छाडूँ नहिं, सदा रहूँ नित पास।
जहाँ न आदर भक्तको तहाँ न मेरो वास॥
फिरत धाम वैकुन्ठ तज, भक्त जननके काज।
जो जो भक्त मन भावहीं, धारत सोइ तन साज॥
सूर्य संत-समको हरे, ताते भये समान।
मुक्त बाहर तम रवि हरे, संत हरत अज्ञान॥
पारसमें अरु संतमें, बड़ो अन्तरो जान।
वह लोहा कंचन करे, यह करे आप समान॥
ज्यों मैं दुर्लभ संतको, त्यों मोहे दुर्लभ दास।
मुक्त कहे श्रीमुख कह्यो, संतमहिमा अविनाश॥

अपने बलसे माया नहीं छूटती, प्रभुकी कृपा होनेपरही छूट सकेगी, और प्रभुका नियम पालन करनेपरही प्रभु कृपा करेंगे

एक राजाके यहाँ पहरा देनेके लिये बाघ जैसा जबरदस्त कुत्ता पाला गया था। यह कुत्ता राजाके महलके दरवाज़ाके पास बैठा रहता और किसी भी बिना पहचानके मनुष्यको अन्दर जाने न देता। बाहरी मनुष्य इस कुत्तेको चाहे चमकावें, भोजन दें या प्यार करें, किसी भी प्रकारसे वह उन्हें भीतर जाने न देता किन्तु राजाके कहतेही कि टीपू! चुप, यहाँ आओ वह तुरत पूंछ हिलाता हिलाता उसके पास चला आता था। अनन्तर जब राजा दूसरोंके साथ प्रेमके साथ मिलता तो कुत्ता भी उनसे हिलमिल जाता और उनकी इच्छानुसार चलता, क्योंकि इस पालतू कुत्तेको हमसे कुछ मित्रता या शत्रुता नहीं थी। वह तो अपने मालिककी इच्छानुसार चलता था। यदि राजा किसीकी ओर इशारा करे तो उसे वह फाड़ खाय और यदि वह उसे सलाम करनेके लिए कहे तो वह झुककर उस मनुष्यका पैर चाटने लगे। मतलब कि वह कुत्ता अपने आनन्दके लिए हमें घूरकर मुहँ नहीं चिढ़ाता था बल्कि अपने मालिकके घरकी रक्षा करनेके लिए मालिककी आज्ञानुसार कार्य करता था तथा मालिकके प्यारे सम्बन्धियों, मित्रों और नौकरोंके साथ वह बड़े प्रेमसे बर्ताव करता था।

भाइयो! इसी प्रकार माया प्रभुकी दासी है। वह स्वर्गके द्वारकी द्वाररक्षक है। प्रभुकी दृष्टि जिनपर नहीं है ऐसे माला-

यक मनुष्य उसमें चले न जायँ, इससे मनुष्योंकी परीक्षा करनेके लिए प्रभुने इसे संसारमें तथा स्वर्गके द्वारपर रखा है। इसका हमारे साथ वैर न होनेपर भी वह हमारे परिश्रमसे दूर नहीं हो सकती। जब प्रभु आज्ञा देते हैं कि दूर हो जा तभी वह दूर हो सकती है और प्रभु किसके लिये ऐसी आज्ञा देंगे? केवल प्यारे भक्तों तथा प्रेमी हरिजनोंके लियेही। इनके अतिरिक्त किसी दूसरेके लिये ऐसी आज्ञा नहीं दे सकते। यदि संसारके पार जानेके लिये मायाको जीतना हो तो पर कृपालु, दीनदयालु, सर्वशक्तिमान महान प्रभुकी शरणमें जाओ प्रभुके सेवक हो, जगतमें प्रभुप्रेम फैलानेके लिये प्रभु सिपाही बनो और धर्मके मार्गमें रहकर महाप्रभुके पवि मार्गपर चलो, इससे प्रभुके प्यारे बन सकोगे और य निश्चित बात है कि अपने भक्तोंके लिये मायाको रोक न रखेंगे। जब हमारे आचरण सुधरेंगे तब तुरतही हमारे क बिना कृपालु परमात्मा हमारे मार्गमेंसे उसे हटालेंगे। इस मायाको जीतनेके लिये, मायाके साथ लड़ाई मत करो बलि अनन्त ब्रह्माण्डके नाथकी कृपा प्राप्त करो, इससे माया अप आपही दूर हट जायगी और जब हम प्रभुके हो जायँगे तब प्रभु हमारा हो जायगा तो उलटे माया हमारी दासी हो जायगी किन्तु यह सब हमारे अभिमानसे नहीं, बल्कि धर्मके बर्ता तथा प्रभुके नियमोंका पालन करनेसे होता है। मायाको मायाको जीतनेके लिये प्रभुके मार्गमें आओ, प्रभुके मार्गमें आओ और प्रभुके मार्गमें करना क्या है? यही

नारायण या जगतमें यहही वस्तु सार।
सबसों मीठा बोलवो, करवो पर उपकार॥

दुनी या जगमें आइके, कालीजे दो काम ।
देनेको टुकड़ो भलो, लेनेको हरिनाम ॥
कबीर कहे कमाइयो, दो बातें सिखले ।
कर साहेबकी बंदगी, भूखेको कछु दे ॥

८४

भक्ति क्या है

सद्गुरु महात्मा व हरिजनगण हमारे आस-पासके भले मनुष्य तथा पवित्र धर्मशास्त्र कहते हैं-भक्ति करो, भक्ति करो। संसारके सब भिन्न-भिन्न धर्म भिन्न-भिन्न रीतिसे कहते हैं कि भक्ति करो, भक्ति करो, और प्रभु कहते हैं कि भक्ति करो तथा हमारा अंतर भी भीतरसे यही कहता है कि भक्ति करो, हम और भी ध्यानोंसे लोगोंसे सुनते आते हैं कि यह संसार स्वप्नवत है, जीवन क्षणभंगुर है, देह पानीके बुलबुलेके समान है, यहांका विवाह थोड़ीदेरके लिये है, जर जायदाद यहीं रह जाने वाली है, मुक्तकी हाथ हाथमें कुछ रहता नहीं है, माया मिथ्या है और ईश्वर सत्य है इससे भक्ति कर लो, भक्ति कर लो। इस प्रकार सब ओरसे भक्तिपर जोर दिया जाता है, किन्तु भक्ति है ! क्या इसका सच्चा अर्थ तो कोई कोई साधु या प्रेमी भक्तही समझ सकते हैं और इन समझने वालोंमेंसे कोई भाग्यशाली महात्माही उसके अनुसार चल सकते हैं क्योंकि भक्ति कुछ बाहरी वस्तु नहीं है—किन्तु हृदयका प्रेम है। जैसाकि एक

. बार [illegible] ये हैं:—

अंश है, किन्तु यह ईश्वरसे
[illegible] यह ईश्वरसे मिलनेके लिए

तड़पता है। जीवकी यह तड़फड़ाहट तथा उसके अंगमें
बढ़नेके लिए जो क्रियायें होती हैं उसीका नाम भक्ति है।
होनेसे प्रत्येक जीव ईश्वरकी ओर खिंचा रहता है और
भी जागृत जीवके अन्तरमें यह स्वाभाविक आकर्षण
बढ़ जाता है। इस आकर्षणको शास्त्रमें प्रभुप्रेम कहते हैं
यह सत्य प्रेम बढ़ जाता है तब उसे भक्ति कहते हैं,
भक्तोंका आचरण बदल जाता है क्योंकि प्रभुका आकर्षण
आनेसे इस दुनियाकी सब मायिक वस्तु उन्हें फीकी
लगती है, शास्त्रके प्रत्येक वाक्यमें सत्य देख सकते हैं,
त्माओंके संगमें रहना उन्हें अच्छा लगता है और प्रभुके
पर चलनेका उनमें बल आ जाता है जिससे व्यवहारके
सुखोंकी ओर वे ध्यान नहीं देते और जब कोई सगा संबं
इस बारेमें उनपर दबाव डालता है तो वे कहते हैं कि
मेरे अंतरकी इच्छा मुझे अपने करतारकी ओर जानेकी
देती है, इसे तुम कैसे रोक सकोगे? मुझे बताओ तो जरा
महान प्रभुके आकर्षणमें आकर टूट पड़ गई हुई मेरी इच्छा
इस जगतकी कोई वस्तु क्या रोक सकती है? अब मुझे
रखनेका व्यर्थ परिश्रम मत करो, क्योंकि तुम्हारे वैभव,
सुख लालच और स्नेहके आकर्षणकी अपेक्षा प्रभुप्रेममें
बहुत अधिक मिल चुका है। तुम्हारे संसारके ये सब
सर्वशक्तिमान महान प्रभुके आनंदसागरके आगे एक
बराबर भी नहीं हैं। इससे अब मुझे पीछे फेरे लौटा सकोगे
अब तो मुझे इस आनन्दके महासागरमें जाने दो, जाने
और यदि हो सके तो तुम भी मेरे साथ चलो।

जिसके हृदयमें भक्तिका ऐसा उच्च भाव आ जाता है, उनके
दिलमें ईश्वरके लिए ऐसी व्यग्रता होती है कि इस दिव्य

प्राय बिना किसी भी रीतिसे हम उनका थाह नहीं लगा सकते और उनके भजन ऐसे उच्च भावपूर्ण होते हैं कि उन्हें हम समझनेमें भी असमर्थ होते हैं। बिना मुख्य कारणके अपना मस्तक ऊंचा करते ही नहीं और जब कभी कुछ कहना होता है तो ये यही कहते हैं कि भजन करनेके हमारे एकान्त स्थानमें कौनसा खज़ाना रखा है इसे क्या तुम जानते हो? इस एकांत कोनेपर तो दुनिया भरका कुल धन न्योछावर है, इस एकांत कोनेके लिए सात समुद्रका नवरत्न भी यदि मुझे दे देना पड़े तो भी यह मेरे लिए तृण बराबर है, उसके लिए कुबेरका भंडार भी कंकणके समान है और अपने प्यारेको स्मरण करनेके इस एकांत कोनेके बदलेमें यदि मुझे इन्द्रासन भी दिया जाय तो उन्हें भी मैं लात मारे बिना न रहूं क्योंकि इन सब दौलतोंको एकत्र करनेपर भी वे थोडी हैं तथा नष्ट हो जाने वाली हैं किन्तु मेरे एकांत कोनेमें तो केवल यह अविनाशी प्यारा विराजमान है जिसमेंसे अनंतब्रह्मांड उत्पन्न हुआ है, इससे उसे छोड़कर दूसरे धनकी किस लिए परवाह करूँ, पारसको छोड़कर पत्थर कौन लेगा! मैं तो यही मांगता हूं कि हे परम कृपालु पिता! मेरे हृदयके एकांत कोनेमें अपना अविचल वास रखो, अपना अविचल वास रहने दो।

भाइयो! बाहरसे दृष्टिगोचर होनेवाला कोई भी कारण न होने-पर भी स्वभावतः जैसे लोहा चुम्बककी ओर आकर्षित हो जाता है, वैसेही बिना किसी स्वार्थके जिसकी आत्मा परमात्माकी ओर आकृष्ट हो जाती है, यह केवल इतनेसे रुक नहीं सकता।
[illegible] है कि क्या तुम जानते हो कि
[illegible] लिए कितना मिल जाता है?
[illegible] है तब यह जगत उसके आगे

एक खिलौनाके समान हो जाता है, तब आकाशके सितारों ऊँचाई मिट जाती है, तब महासागर एक प्यालेके समान जाता है, तब सात स्वर्ग उसमें समा जाता है और जब मु जितने हृदयमें प्रभुप्रेम आता है तब आकाश भी उसके आ छोटा हो जाता है, तब इस संसारकी तुच्छ छोटी वस्तुओं तो बात ही क्या पूछना है ?

भाइयो ! जो हृदय ऐसा विशाल होता होगा उसका आन कैसा अलौकिक होगा ? इसका तो विचार करो ! और जिसक हृदय इतना बड़ा हो जायगा वह हमारी तुच्छ वस्तुओंमें कैसे पड़ा रह सकेगा ? वह तो प्रभुकी तानमें लीन होकर मस्त हो जाता है और सब स्थानोंपर इन वस्तुओंको देख-देखकर यह कहा करता है कि हे प्यारे ! तेरेमें सूर्यसे भी अधिक प्रकाश है, चन्द्रसे भी बढ़कर शीतलता है, गुलाबसे भी बढ़कर कोमल लता है, द्राक्षासवसे भी बढ़कर मीठा नशा है, आकाशसे भी बढ़कर बड़प्पन है, कामदेवसे बढ़कर सुन्दरता है, स्वर्गके नंदनवनकी अपेक्षा अधिक शोभा है और इच्छित फल देनेवाले कल्पवृक्षसे भी बढ़कर तेरी दृष्टिमें फल देनेका बल है। अहो ! प्यारे ! तू तो तू ही है, तुझे छोड़कर अब मैं और किसको भजूं । अब तो तेरे सौन्दर्यमें तथा तेरी मस्तीमें ही मेरा जीवन व्यतीत हो जाय यही मेरी इच्छा है । धन्य है, प्यारे तू धन्य है !

भाइयो ! इसी प्रकार विना किसी कारणके स्वभावतः आत्मा परमात्माकी ओर आकर्षित हो जाय और उसमें तन्मय हो जाय, इसीका नाम भक्ति है । इस भक्तिको ही अनन्य भक्ति कहते हैं, इसीको प्रेम लक्षणा भक्ति कहते हैं, इसीही परम भक्ति कहते हैं । नारदजी, शुकदेवजी, सनकादिक, महादेवजी आदि

[illegible]योगेश्वरोंने तथा श्रीकृष्ण भगवान और दूसरे भक्तोंने जिस [illegible]की महिमा बारंबार गायी है वह भक्ति, आत्माका परमा[illegible]न्तरी और आन्तरिक ही है। इसके अतिरिक्त भक्तिके नामसे जो बाहरी क्रियायें प्रसिद्ध हैं वे किसी कामकी नहीं हैं, तथा व्यर्थ हैं। इसमें कुछ तथ्य नहीं है। भाइयो! यदि सच्ची भक्ति करना है तो आत्माको परमात्माके पास जाने दो अर्थात् बाहरी आडम्बरमें न रहकर जैसे हो सके प्रभु प्रेम बढ़ानेका प्रयत्न करो। वह प्रेम पूर्ण स्थिति कैसी होती है इसके बारेमें महात्मा[illegible]न कहते हैं:—

दोहा

पहिचाना जब जानिये, हरिसे लागे मन।
रात दिवस ना विसरे, ज्यों कृपनको धन॥
लागी लागी क्या करे, लागी नाहिं एक।
लागी सोई जानिये, जो करे कलेजे छेक॥
मांस गया पिंजर रहा, ताकन लागे काग।
साहेब अजहुँ न आइया, कोई मंद हमारा भाग॥
कबीर प्याला प्रेमका, अन्तर लिया लगाय।
रोम रोममें रम रहा, और अमल क्या खाय॥
सीस उतारि भुइ धरे ऊपर राखे पाँव।
दास कबीरा यों कहे, ऐसा हो तो आव॥
यह तो घर है प्रेमका, मारग अगम अगाध।
सीस काट पगतल धरे, तब निकट प्रेमका स्वाद॥
तुलसी रघुविर भक्त-बिन, साधनता सबशून।
शून आगे जो एक मिले, तो एक एक दसगून।
सब देखे परखे लिखे, बहुत कहे क्या होय।
तुलसी सीताराम बिन, अपनो नाहीं कोय॥

तीन टूक कौपीनके, अरुभाजी बिन लोन।
तुलसी रघुवर उर बसे, इन्द्र बापड़ो कौन॥

८५

सब प्रकारके व्यापारमें घाटा होना संभव है, किन्तु भक्तिके व्यापारमें घाटा होताही नहीं

सांसारिक विषयमें प्रवीण तथा व्यवहारमें पहुँचा हुआ विचित्र बुद्धिवाला एक वृद्ध अनुभवी दलाल था। वह छुट्टीके दिन अपने मित्रोंके साथ घरमें बैठा हुआ कहवा पी रहा था तथा व्यापारके विषयमें बातचीत कर रहा था। इसी समय उसके मित्रके लड़केने आकर कहा—चाचाजी! मुझे व्यापार करनेकी इच्छा है इससे ऐसा व्यापार बताइये जिसमें घाटा न उठाना पड़े। उस दलालने उत्तर दिया—भाई! मेरी एकसठ वर्षकी उम्र हुई जिसमें चालीस वर्षसे बड़े ध्यानपूर्वक मैं सब प्रकारका व्यवहार देखता चला आ रहा हूँ किन्तु मैंने ऐसा कोई रोजगार नहीं देखा जिसमें कुछ न कुछ नुकसान न होता हो। मेरे पिताजी नोटका व्यापार करते थे उसीमें वे पट पड़ गये थे, मेरे दादा रूईका व्यापार करते थे उसीमें उन्हें तीन बार दिवाला निकालना पड़ा था, मेरे चाचाजीको अफीम के व्यापारमें अफीम खाना पड़ा था, मेरा बड़ा भाई शेयरका व्यापार करता था उसमें लाखका बारहहज़ार हो गया था, मेरा छोटा भाई गल्लाका रोजगार करता था उसीमें वह निर्धन हो गया था, मेरा साला घी तेलका रोजगार करता था उसीमें उसे मारा पड़ा था, मेरा एक दोस्त लोहाका व्यापार

करता था उसीमें उसे घाटा हुआ था, मेरा पहला सेठ कपड़ाके व्यापारमेंही गिर गया था, और इसके बादके सेठका सट्टामेंही सत्यानाश हो गया था। मैंने दुनिया देखनेमें कुछ बाकी नहीं रखा है। चालीस बरसमें अठारह अठारह तो सेठ मैं बदल चुका और अट्ठारह प्रकारका व्यापार कर चुका किन्तु अभी तक मैंने ऐसा कोई भी रोजगार नहीं देखा जिसमें घाटा न आता हो और साथही ऐसा भी कोई रोजगार नहीं देखा जिसमें लाभ न होता हो। यद्यपि सब व्यापारमें बार बार घाटा नहीं आता और जिनकी बातें मैंने ऊपर कहा है, उन्होंने समयपर माल भी मारा था यह बात सत्य है, किन्तु अभीतक घाटा रहित रोजगार मैंने देखा नहीं है और ऐसा व्यापार जिसमें कभी घाटा न हो संसारमें कोई है, यह भी मैं नहीं मानता।

यह सुनकर वहांपर बैठे हुए एक भक्तने कहा—ऐसे व्यापारको, जिसमें घाटा न होता हो मैं जानता हूं और मुझे ऐसा व्यापार करना भी आता है जिसमें कभी भी घाटा नहीं होता। यह सुनकर वहांपर बैठे हुए सब लोग अचम्भित हुए और सोचने लगे कि ऐसा कौनसा व्यापार है जिसमें घाटा होता ही नहीं! इतनेमें उस वृद्धने कहा-तुम भक्त होकर गप मत मारो। मुझसे दुनिया कुछ छिपी नहीं है, मैं सब लोगोंकी दलाली करके बैठा हूं और सबको चराता हूं। ऐसे नये छोकरोंके सामने ऐसी बातें करो तो चल सकता है, क्या मेरेपर भी यह चाल चली जा सकती है? यदि घाटा रहित कोई व्यापार बतादो तो मैं सौ रुपया हार जाऊंगा। बोलो स्वीकार है?

भक्तने कहा—शर्त लगाना तो तुम्हारे समान दलालोंका काम है, यह मेरा काम नहीं है। चाचा! आपने बहुत सा धंधा

देखा है किन्तु स्मरण रखिये कि जब तक घाटा-रहित व्यापार नहीं देखते तभी तक आप घाटेमें हैं और तब तक भलेही आप अपनेको मनमें पक्का समझा कीजिये, किन्तु मैं तो आपको कच्चा ही समझता हूँ। यह घाटा-रहित व्यापार भक्ति है, सर्वशक्तिमान महान प्रभुका मार्ग है, अकल गतिवाला निरंजन निराकार सर्वव्यापक, शरणागतवत्सल, कल्याणकारी महान परमात्माके स्वरूपको पहचानना है। घाटा रहित धंधा प्रभु प्रेम है, हृदयकी पवित्रता है, अहमत्व भूलकर जगतके जीवोंकी सेवामें लग जाना है, महान प्रभुका पवित्र नामस्मरण है, घाटा रहित धंधा हरिजनोंपर प्रेम रखना तथा उनका सत्संग करना, किसीभी प्रकार छोटेसे-छोटे पापसे बचना, भगवद् आसरा बल रखना, जैसे प्रभु रखे वैसे रहना तथा आनंदरूप, शांति सागर अनंत ब्रह्मांडके नाथ कृपालु परमात्माकी सच्ची भक्ति करना है। इस व्यापारमें घाटा नहीं है, बल्कि इस भक्तिके व्यापारमें महात्माओंका आशीर्वाद है, देवोंकी मदद है और प्रभुकी कृपा है, तथा लाभमें स्वर्गका राज्य और मुक्तिका अनंतकालका अखंड सुख है। चाचा! आपने सब कुछ देखा है, किन्तु जब तक इस घाटा रहित व्यापारको नहीं कीजियेगा तब तक बड़े घाटेमें ही रह जाइयेगा। अब इससे बचनेका प्रयत्न कीजिये और याद रखिये कि प्रभुका नाम लेना कभी भी व्यर्थ नहीं जाता।

दोहा

राम नाम रटते रहो, जब लग घटमें प्रान।
कबहुँक दीन दयालको भनक पड़ेगी कान॥
राम नाम कहते रहो, धरे रहो मन धीर।
कबहुँक काज सुधार ही, कृपासिंधु रघुवीर॥

राम नाम आराधवो तुलसी वृथा न जाय।
लड़काईको पौरवो, आगे होत सहाय॥
राम नामकी लूट है, लूट सके तो लूट।
अंतकाल पछतायगो, प्राण जायगो छूट।

८६

सती होनेके लिए जायगा वह अग्निसे कैसे डर सकता है?
वैसे ही जो भक्त होना चाहता है वह त्यागसे क्यों डरेगा?

एक सेठने किसी महात्मासे कहा कि महाराज! अब मैं
क्त होना चाहता हूँ, ऐसा कोई मार्ग बताइये जिससे मेरा
ल्याण हो। महात्माने पूछा कि अमीरोका आनन्द छोड़कर
क्त होनेकी इच्छा कैसे हुई? गृहस्थने उत्तर दिया-महाराज!
त सी बातोंमें सर पटका किन्तु कहीं भी सच्चा आनन्द
हीं मिलता। आज तक कोई बात मैंने उठा नहीं रखी किन्तु
सका परिणाम हाय हायके अतिरिक्त और कुछ नहीं दिखायी
ता। सुखकी आशासे ज्यों ज्यों वैभवोंकी ओर बढ़ता हूँ त्यों
ों उपाधियाँ बढ़ती जाती हैं और मानकी ओर दौड़ता हूँ तो
हरसे तथा भीतरसे अपमानका धक्का बढ़ता जाता है।
ससे मैं तो अब थक गया हूँ। अब तो मन करता है कि
पके समान महात्माके चरणोंकी सेवा किया करूँ जिससे
ह शांति मिले, यही सोचकर अब मैं भक्त होना चाहता हूँ।

महाराजने कहा—यही प्रसन्नताकी बात है। जिसका
ौभाग्य होता है उसे ही यह बात सूझती है और जिसका
ुण्य होना होता है वही भक्त हो सकता है, किन्तु भाई!

भक्त होना कठिन है क्योंकि इसमें अपने प्रिय वस्तुओंका त्याग करना पड़ता है: इससे जो वस्तु तुम्हें सबसे अधिक प्रिय है और जिसे तुमने खूब हिफाजतसे बैंकमें या तिजोरीमें छिपाकर रखा है तथा जिसे प्राप्त करनेके लिए बहुत प्रकारका श्रम किया है उसमें से बड़ी रकम परमार्थमें लगाओ और मत तुम हो जाय वहाँ तक पहले अपने हाथसे खूब धर्म करके पीछे भक्त बनो। यह सुनकर वह सेठ विचारमें पड़ गया। कुछ देर तक महाराजकी ओर देखता रहा। पीछे मुंह नीचा करके ऊँगली से ज़मीनपर लिखते हुए हँसकर वह बोला—हाँ महाराज! बात तो सत्य है, होना तो ऐसा ही चाहिये किन्तु अभी मेरेमें इतना बल नहीं है। प्रभुने बहुत कुछ दिया है, किन्तु जीव ऐसा अभागा है कि खर्चनेकी इच्छा नहीं होती। महाराज! खूब धर्म किये विना क्या भक्त नहीं हो सकते?

तब महाराजने कहा—सतीमा होनेके लिये जाए और अग्निसे डरे. यह कैसे हो सकता है? यह तो बड़ी बुरी बात होगी। तुम यदि भक्त होना चाहते हो तो त्यागसे क्यों डरते हो? याद रखो कि अपनी शक्तिके अनुसार महान प्रभुके लिए जब तक बड़ेसे बडा त्याग न किया जाय, तब तक भक्त नहीं हो सकते; इससे अपने पास जिस प्रकारकी समृद्धि, जिस प्रकारका गुण और बल हो उसका धर्मके लिए त्याग करना चाहिये। जब तक अपनी प्रिय वस्तुका त्याग नहीं करते तब तक सच्चे भक्त नहीं हो सकते, इससे यदि भक्त होना है तो अपना बलाबल देखकर त्याग करना ही पड़ेगा। अभी नहीं तो धीरे धीरे, यदि सच्ची वस्तुकी ओर तुम्हारी आत्मा आकृष्ट हुई है तो उसके लिए बुरी वस्तुका त्याग करनाही पड़ेगा। हड्डीके बदलेमें हाथीकेदाँत मिले, दानाके बदलेमें मोती मिले,

चके टुकड़ेके बदलेमें हीरा मिले और कपड़ाके टुकड़ाके लेमें अंजलि भरकर सोनेकी मोहर मिले तो इसे कौन छोड़ ता! ऐसेही हमें एकका अनेक गुना जो दे सकता है ऐसे र्वशक्तिमान महान प्रभुके लिए, अपने गरीब भाइयोंके लिए ल्प थोड़ा भोजन, कुछ कपड़ा, कोई पुस्तक, मुँहसे उपदेश थोड़ा बहुत धन हम देते हैं किन्तु दयाके सागर, निराधारके धार, देवोंके देव, भक्त-वत्सल, अनन्त ब्रह्मांडका परम- वित्र पिता परमात्मा तो इसके बदलेमें हमें देवत्व, स्वर्गका ज्य और अनंत-कालका मोक्षधामका अखंड सुख देता है। सि भाइयो! यदि भक्त होना है तो प्रभुके लिए त्यागसे डरो बल्कि जब भी हो सके फेंकतेही रहो क्योंकि अनुभवो ज्ञगण कह गये हैं:—

दोहा।

क्या करिये क्या जोड़िये, थोड़े जीवन काज।
छाँड़ि छाँड़ि सब जात है, देह गेह धन राज॥
धन योवन यों जायगो, जा विधि उड़त कपूर।
नारायण गोपाल भज, क्यों चाखे जग धूर॥
एक दिन ऐसा होयगा, कोऊ किसीका नाहिं।
घरकी नारी कौन कहे, ये तनकी नारी नाहिं॥
जाना है रहना नहिं, मरना बिस्वाबीस।
दो दिन दुनियाके लिए, मत भूलो जगदीश॥
चाह गई चिंता गई, मनमें नहिं परवाह।
जाके मनमें चाह नहिं, सो शाहनको शाह॥

———

८७

और सबकुछ करनेका अवकाश है केवल प्रभुका भजन करनेका अवकाश नहीं है

बहुतसे मनुष्य कहते हैं कि प्रभुकी भक्ति करना मुझे बहुत अच्छा लगता है किन्तु समय नहीं मिलता इसने लाचार हूं। यदि अवकाश मिले तो मैं यही काम किया करूँ। ऐसा बहुत लोग कहा करते हैं, किन्तु मनुष्योंके स्वभावके अनुभवी ज्ञानी महात्मा कहते हैं कि यह बात बुरी है। यह तो केवल एक प्रकारका बहाना है। भजन करनेकी मुझे फुरसत नहीं है, या ईश्वरपर प्रेम नहीं है, अपने धर्मपर विश्वास नहीं है अपनी आतम के कल्याणकी इच्छा नहीं है, और मुझे स्वर्ग अच्छा नहीं लगत बल्कि नरक अच्छा लगता है, यह कहनेके बराबर है, क्योंकि प्रभुका भजन न करनेसे यह सब होता है। इससे भाइयो! या रखो, यह कहना कि प्रभुका भजन करनेकी मुझे फुरसत नहीं है अपने मनकी एक प्रकारकी निर्बलता प्रकट करना है समय नहीं मिलता तो क्या करूँ? इस प्रकार मनको समझाक भक्ति न करना अपने आपहीको ठगनेके बराबर है, और जि महान प्रभुने हमें उत्पन्न किया है, और जिसने आयुष्य शरीरके लिए सुख, धन, बुद्धि, बल, सद्गुरु, पवित्र शास्त्र तथ और भी बहुत सी दूसरी अनुकूलतायें दी हैं, उस महामंगल कारी, शांतिदाता, सर्वशक्तिमान प्रभुका भजन करनेका अव काश नहीं है—कहना हमारी सबसे बड़ी नालायकी है औ सबसे बड़ी नमकहरामी है।-----

भाइयो! हमें गपसप करनेकी, तेरी मेरी करनेकी धंधारो

गार करनेकी, दूसरेके घर जाकर धक्का खानेकी, बुरे व्यसनामें लिप्त रहनेकी, लड़ाई-झगड़ा करनेकी, नाटक देखने जानेकी, ठट्ठा मस्खरी करनेकी, दूसरोंके अवगुण देखनेकी, अपना कुछ लगता न हो ऐसी पंचायत करनेकी, दुनिया भरका हाय हाय करनेकी, किसीके दसवांमें जानेकी, सगे संबंधियोंकी निन्दा करनेकी तथा नींद न आनेपर भी बिस्तर पर पड़े रहनेका समय मिलता है किन्तु हमारा अंधेर तो देखो। प्रभुका भजन करनेका समय हमें नहीं मिलता! सब कामोंके लिए फुरसत है केवल भक्ति करनेके लिएही फुरसत नहीं है।

भाइयो! ऐसी पोल कब तक चलेगी, इस प्रकार अपने मनको कब तक ठगोगे? ऐसी निर्बलता कब तक रखे रहोगे? ऐसी भूलसे छुटकारा कब पाओगे? और इस महापापका परिणाम क्या होगा? इसका तो जरा विचार करो! अभी जब हमें बहुत प्रकारकी अनुकूलता है हम कहते हैं कि मुझे प्रभुका भजन करनेकी छुट्टी नहीं है, तब मृत्यके पश्चात जब हमारे पास कोई साधन न रह जायगा, तब नरककी धधकती हुई महाभयङ्कर अग्निके समय प्रभु कहेंगे कि मुझे भी तुम्हारा कल्याण करनेका समय नहीं है, उस समय हमारा क्या हाल होगा? इसका तो विचार करो। इससे भाइयो! परम कृपालु आनन्ददायक, शान्तिदाता, सर्वशक्तिमान ईश्वरकी भक्ति करनेके लिए यथाशीघ्र छुट्टी लेनेका प्रयत्न करो। अन्यथा फिसल पड़ोगे, इससे अभीसे सावधान हो जाओ।

दोहा

काल करे सो आज कर, आज करे सो अब।
पलमें परलै होयगी, बहुरि करोगे कब॥

आज कहे मैं कल भजूँ, काल कहे पुनि काल।
आज कालके करत ही, अवसर जासी चाल॥
पाव पलकी सुधर नहिं, करे कलकी बात।
जीव उपर जम फिरत है, ज्यों तितर पर बाज़॥
कबीर पगड़ा दूर है, बीचमें पड़ी है रात।
क्या जानूँ क्या होयगी, रवि उगते प्रभात॥
तुलसी विलंब न कीजिये, भज लीजे रघुबीर।
तन तरकस ते जात हैं, श्वास सरीखे तीर॥
श्वासे श्वासे राम भज, मिथ्या श्वास मत खोय।
ना जानूँ या श्वासकी, आवन फिर नहिं होय।
या दुनियामें आइके, छोड़ देहि तूँ ऐंठ।
लेना होय सो लेइले, उठी जात है पैंठ॥

८८

बड़ा कौन है ? मुर्दाको जिन्दा करे वह या पापसे बचाये व

किसी समय प्रसंगोपात हरिजनोंकी भक्ति मंडलीमें बा
निकली कि फलां मनुष्य सांपका विष उतारनेमें बड़ा चतु
है, तब एकने कहा कि मेरे गांवमें शेरखां शिकारीक
सर्पने काटा था जिससे वह मर रहा था कि एक साधु आ
गया। उसने दूर बैठे बैठे ही मंत्र पढ़कर विषको उतार दि
जिससे वह तुरत उठ बैठा और अपने कामपर चला गया
यह सुनकर एक दूसरे मनुष्यने कहा कि हमारे यहां एक पंजाब
फ़कीर आया था वह ऐसा होशियार था कि उसकी कुछ बा
ही मत पूछो। इस समय हीरा मरणासन्न हो गया, तीन दिनसे
उसे सन्निपात हो गया था तथा वह ज़मीनपर उतारा हुआ

था, इतनेमें एक फ़कीर आ पहुँचा। उसने तीन फूँक मारा
जिससे वह बच गया। इस घटनाको हुए बहुत वर्ष हो गये,
किन्तु वह अभी तक जीवित है तथा नया-नया प्रपंच रच
करता है। यह सुनकर तीसरेने कहा कि हम जानते नहीं
दुनियाँमें ऐसे बहुतसे पड़े हुए हैं। हुसेनी नामका मेरेपास
एक सिपाहीका लड़का था जो गिरिनार पर लकड़ी काटकर
अपना जीवन व्यतीत करता था तथा ठालेके समयमें आकर
हुक्का पानी कर दिया करता था। एक दिन उसे कोई साधु
मिल गया। उसने इस लड़केसे गाँजा मँगाया। लड़का दूसरे
दिन गाँजा ले गया, जिससे बहुत प्रसन्न होकर उससे साधुने
कहा कि कल जितनी तुम्हारी इच्छा हो ताँबा ले आना, किन्तु
उस गरीबके पास ताँबा आये कहाँसे ? उसके पास दो अधेले
थे जिसे वह ले गया। साधुने इन अधेलोंको भट्ठी चढ़ाकर
आधे घंटेमें सोना कर दिया। इस समय वह लड़का वहाँ बैठा
था किन्तु वह देख नहीं सका कि हांडीमें उसने कौनसी चीज़
डाली। किसी पत्तेको गारकर उसका दो तीन बूँद रस उसमें
डाल दिया था जिससे ताँबा सोना बन गया। इसके पश्चात्
दो दिनके बाद हुसेनीने मुझसे यह घटना कहा, तब मैंने बहुत
तलाश किया किन्तु वह साधु मिला नहीं। महात्माओंकी बात
कुछ मत पूछो! वे तो पलमें निहाल कर देते हैं तथा बेड़ा पार
कर देते हैं। गाँजाकी एक चिलमसे प्रसन्न होकर इतना सोना
बना दिया। आज वह हुसेनी बड़ा जमादार हो गया है।
अनंतर एक मनुष्यने कहा कि मेरा एक माली है, उसके पास
ऐसा जादू है कि देखकर सब लोग अचंभित हो जाते हैं। जहाँ
वह बैठा रहता है वहाँ जो वस्तु माँगो आ जाती है। बरफ़ी
चाहो तो बरफ़ी, मीठा चाहो तो मीठा, फूलका माला चाहो तो

वह भी तैयार मिल जाय और रेलका टिकट तक वह दे देता है। मैंने बहुत बार उसकी मँगाई हुई मिठाई खायी है।

ये सब बातें सुनकर वहाँपर बैठे हुए एक भक्तने कहा— यह सब बात सच्ची है क्योंकि इस संसारमें बहुतसे रत्न पड़े हुए हैं और दयालु प्रभुने मनुष्योंको कितनी प्रकार की शक्ति देकर भेजा है इसकी कोई हद नहीं है, ऐसा कोई काम नहीं है जो मनुष्योंसे न हो सके। सब मनुष्योंमें कमी वेशी भिन्न-भिन्न गुण होते हैं। कोई चाँदीसे सोना बनाता है, कोई जमीनके भीतरका धन बता देता है, कोई भूत-भविष्यतकी बातें बताता है, कोई फूँक कर दर्दको अच्छा कर देता है और कोई मुर्देमें जीव डाल देता है। ये सब गुण बहुत अच्छे हैं और ये संसारके कामके हैं किन्तु इसमें कोई बड़ी बात नहीं है क्योंकि इन गुणोंसे या चमत्कारोंसे स्वर्ग प्राप्त नहीं हो सकता। इससे हृदयमें प्रभुप्रेम नहीं आता और न अपना या दूसरेका पापही दूर हो सकता है, इससे ये चीज़ें हमारे किस कामकी? मैं तो उसेही बड़ा महात्मा समझता हूँ जो स्वयं पापसे छुटकारा पाकर प्रभुको देखे तथा दूसरोंको भी पापसे मुक्त कर स्वर्गमें ले जाय।

जिस साधुने विष उतारा, वह क्या उस सर्पकी हिंसा कर सका? जिसने मरते हुए व्यक्तिको बचाया वह क्या उसके आचरणको सुधार सका? जो फ़कीर फूँककर रोग अच्छा करता है वह अच्छे होनेवाले मनुष्यका क्या स्वभाव बदल सकता है? जो साधु तांबासे सोना बना सकता है वह क्या उसका कल्याण कर सकता है जिसे उसने सोना दिया था और जो मनुष्य मनोवांछित वस्तु मँगा सकता है वह क्या दूसरोंको पापसे छुड़ा सकता है? नहीं, तब जिससे अपना

तनकर मनकर वचनकर, काहुको दुखावतनाहिं।
तुलसी ऐसे संत जन, राम हृदय जगमाहिं॥
अष्ट सिद्धि नवनिधिकी, उरमें लेश न आस।
मुक्त कहे तेहि संतसे, मिले प्रगट अविनास॥
गांठे दाम न बांधे, ले, नहिं नारीसे नेह।
कहे कबीर ता साधुकी, हम चरननकी खेह॥
नर तन धरि जाको नहिं, संत असंत पहिचान।
मुक्त कहे ताको नहिं, कोटि जन्म कल्यान॥
बड़ भागीसे होत है, सांचे संतकी सेव।
मुक्त कहे तेथी रिझत है, अलख निरंजन देव॥

८९

विशाल तालाबमें लगे हुए बड़े पाइपके साथ यदि अपनी
जोड़ दी जाय तो जैसे घर बैठे पानी मिलता है, इसी
प्रकार जो सत्संग मँडलीमें मिल जायगा उसे
घर बैठे ईश्वरी ज्ञान मिलने लगेगा।

बंबईमें पहले पानीका बड़ा कष्ट था, पीने लायक म
जल लोगोंको सरलतासे मिलताही नहीं था। कुछ कुएं
किन्तु उनका जल अच्छा नहीं था और वह भी थोड़े स
में समाप्त हो जाया करता था, जिससे पानी लेनेके लिये ब
परेशानी तथा धक्का-मुक्की होती थी। एक स्त्री कहती थी
रातमें तीन बजे उठकर कोर्टके मैदानमें, अरसे कोसों दूर प
भरनेके लिए जाती थी, इस समय भी वहां भीड़ हो जा
करती थी और यदि कुछ और देर हो जाय तो बालटीमें प

जलका पड़ता था। इसमें बहुत सी मिट्टी साथ आती जिससे पानी उस समय काममें न आ सकता। उसे कुछ देर तक रख देनेपर मिट्टी नीचे बैठ जाती थी। अनन्तर तीन बार जब इसे उड़ेलती थी तब यह कहीं पीने लायक होता था। जलका ऐसा दुःख देखकर सरकारने लोगोंपर दया करके पहाड़पर एक बड़ा तालाब बनवा दिया और इस तालाबमें बड़ी बड़ी पाइप लगा कर उसे शहर भरमें पहुँचाया। इस बड़े नलमें जिसने अपनी छोटी पाइप जोड़ दिया, उसे बिना परिश्रम घर बैठे पानी मिलने लगा और जिसने पाइप नहीं जोड़ा, वह पानी बिना हैरान होने लगा।

यह दृष्टान्त देकर पू० शंकराज महाराज कहते कि इसी ... प्रभाव एवं सुन्दर कांतिवाले, संसारसागरको ...के लिए सेतुरूप, धर्मको स्थापन करनेवाले, परम ...नाशी परमात्माने सनातनधर्मका पवित्र तालाब ... इस तालाबमें से जो बड़ी नलें निकली हुई हैं वे ...मंडलियाँ हैं, प्रार्थना करनेकी मन्दिर हैं, हरिकथा ...न हैं, और भजन करनेवाली भक्तोंकी मंडलियाँ हैं। ...के बड़े नलके साथ जो अपनी छोटी नली जोड़ ...सत्संग करेगा, व जब हो सके तब अलौकिक ईश्वरके ...माकी कल्याणकारक बातें सुनेगा, भक्तोंके साथ ...जन करेगा और सेवा करते हुए संतोंके चरणमें ..., उसके हृदयमें जो अपार है, जिसका स्वरूप सर...ना नहीं जा सकता, जिसमें कभी किसी प्रकारका ...हीं होता, जो अनुपम असीम है, जो अपार मूर्तिवाला ...श है, जो अचिन्त्य है और जो आनंदरूप है, उस ...ान महान प्रभुका उत्तम सत्य ज्ञान अपने आपही

सत्संगके प्रतापसे घर बैठे आ जायगा। इससे भाइयो! तालावमें निकले हुए बड़े नलके साथ अपना छोटा नल दो अर्थात् धर्मका पालन करनेके लिए उत्पन्न सत्स मंडलीमें मिल जाओ, भक्तों तथा प्रभु-प्रेमीके मित्र बन ज इससे उनके साथ तुम्हारा भी बेड़ा पार हो जायगा; महात्मागण कह गये हैं:—

दोहा

बिनु सत्संग न हरिकथा, ता बिन मोह न जात।
मोह गये बिनु रामपद, होत न दृढ़ अनुराग॥
सत्संगको फल यहि है, संशय रहे न लेश।
रहे स्थिर शुचि सरल चित्त, जाने नहिं को कलेश॥
एक घड़ी आधी घड़ी, आधीमें पुनि आध।
तुलसी संगत साधुकी, कटे कोटि अपराध॥
बहुत पुन्य करि मिलत है, ज्ञानीको संग आय।
सब ग्रंथनको तत्त्व सो, पलमें देत दताय॥
कोटि जन्मके पुण्य जब, उदय होत एक संग।
छुटत मनकी मलीनता, अरु भावत सत्संग॥
मिलन चाहो परब्रह्मको, तो करना सत्संग।
मुक्त कहे सद्ग्रन्थको, यह सिद्धान्त अभंग॥
सर्व स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरो तुला एक संग।
तुले ताहि सकल मिली, जो सुखलव सतसंग।

९०

हमारे काम प्रभुको कैसे अर्पण हो सकते हैं

भक्ति मार्गका यह मुख्य सिद्धांत है कि अपने सब प्रभुको अर्पण कर देना चाहिये। धर्मके प्रत्येक ग्रन्थमें

यह बात आया करती है, और सब महात्मा भी प्रसंगपर इसका उपदेश दिया करते हैं, तो भी बहुतसे लोग जैसा चाहिये वैसी स्पष्ट रीतिसे इस बातको समझते नहीं, इससे इसे अधिक स्पष्ट करनेकी आवश्यकता है।

इस विषयमें एक महात्मा कह गये हैं कि अर्पण विधिमें धर्मके बहुतसे अंग आ जाते हैं और इससे सरलतापूर्वक हमारा जीवन सुधर सकता है, जैसे भगवद् इच्छाके आधीन रहकर जीवन व्यतीत करने अर्थात् जैसे प्रभु रखे उसीमें प्रसन्न रहकर जीवनका कामकाज करनेसे वे काम प्रभुको अर्पण हो सकते हैं। रागद्वेष, आसक्ति तथा फलकी इच्छा न रखकर कर्तव्य समझकर जो काम किये जाते हैं वे प्रभुको अर्पण किये जा सकते हैं। सर्वशक्तिमान ईश्वरकी ओर अपना अंतःकरण सदा झुका रहे तथा प्रति पल उसका उपकार मानते हुए जीवनका कर्तव्य करता रहे तो वे कर्म प्रभुको अर्पण किये जा सकते हैं। जगतमें ईश्वरी स्नेह बढ़ानेके लिए प्रभु प्रीत्यर्थ अपने भाई बहनोंके कल्याणके लिए जो काम किया जाय, वह काम प्रभुको अर्पण हो सकता है। अपना जीवन उत्तम रीतिसे संचालित करनेके लिए तथा प्रभुके मार्गमें आगे बढ़नेके लिए शुद्ध अंतःकरणसे पवित्र धर्मके जिन जिन नियमोंका हम पालन करते हैं वे कर्म प्रभुको अर्पण किये जा सकते हैं। अपना अहंभाव त्यागकर और महान् ईश्वरकी महिमा समझकर जो काम किया जाय, वहप्रभुको अर्पण हो सकता है और स्वभावतः हमारा जीव ईश्वरकी ओर आकृष्ट हो, उसके लिए तड़पा करो और उसके विरहसे रोया करो, ऐसी स्थितिमें जो काम हो वह प्रभुको अर्पण किया जा सकता है।

पत्रोंमें नाम छपे तथा लोग प्रशंसा करें, इसके लिए जो

काम किया जाता है वह प्रभुको अर्पण नहीं किया जा सक
मान तथा खिताब पानेकी लालचसे जो काम किया ज
है, अथवा सगे संबंधी, मित्र और नौकरको जिनका ह
ऊपर कुछ हक होता है थोड़ा बहुत दे दिलाकर जिस क
हम मनमें फूले नहीं समाते, ऐसे कार्य प्रभुको अर्पण
किये जा सकते। लड़का या धनके लिए जो जप-तप कि
जाता है, लोक-लाज या देखा-देखी जो कार्य किया जा
देशकी, जातिकी या कुलकी या प्राचीन रीतिके अनुसार
काम किये जाते हैं, मनमें तुच्छ वासना रखकर लोगसे
कार्य किये जाते हैं, जीवको जलाकर, मनको कोंचकर या
बिगाड़कर जो कार्य किये जाते हैं, वे प्रभुको अर्पण नहीं
जा सकते। धर्मगुरुओंके संकल्प करानेसे, पानी छोड़
और श्रीकृष्णार्पणमस्तु अथवा ब्रह्मार्पण मुँहसे कहलाने
कार्य प्रभुको अर्पण नहीं हो सकते और दयालु ईश्वरने
करके यदि धन दिया हो तो उसमें पाई दो पाई खर्चकर
प्रसन्न होनेसे यह कार्य प्रभुको अर्पण नहीं किया जा स
किन्तु हृदयसे जब यह समझने लगे कि करनेवाला मैं
हूँ ? मेरी क्या बिसात है, मुझसे क्या हो सकता है ? मैं
कल प्रातःकाल अग्निकी चितामें फूंक दिया जानेवाला
जो ऐश्वर्य है वह तो मेरे नाथका है। जीवन देते समय उ
मुझसे कुछ पूछा नहीं है और न मृत्यु समय मुझसे
पूछेगा। मैं तो खाली हाथ जाऊँगा। मेरा यहां रखा क्या
जो कुछ है मेरे प्रभुका दिया हुआ है इससे उसके लिए उ
पवित्र नामसे अपने भाई बहनोंको देना मेरा कर्त्तव्य है।
मैं नवीन कौनसी बात कर रहा हूँ कि अभिमान करूँ
अपना अपना किया करूँ ? बल्कि मेरे हाथसे जो कुछ बन

इसके लिए तो मुझे उलटे उनका उपकार मानना चाहिये क्योंकि कृपाकरके उन्होंने मुझे सब अपना ऐश्वर्य तथा गुण दिया है तब म मैं यह सब कर सका हूँ, नहीं तो मैं क्या कर सकता था ! यह उनकी कृपा है कि उन्होंने मुझे निमित्त बनाया क्योंकि यदि उन्होंने जीवन न दिया होता तो मैं क्या कर सकता था ! मुझे कोई महारोगी बनाया होता या सद्बुद्धि न दी होती अथवा धन न दिया होता तो मैं क्या करता ! और उस सर्वशक्तिमान परमकृपालु पिताने यदि बहुतसे अनुकूल साधन न दिये होते तो मैं कुछ भी न कर सकता, इससे भाइयो ! शुद्ध अंतःकरणसे यही कहो कि हे अनंत ब्रह्मांडके नाथ ! जो बलिहारी, जो खूबी, जो तत्त्व, और जो जीवन है यह तेराही है । मेरा इसमें कुछ नहीं है । मैं तो एक निमित्त मात्र हूँ।' ऐसा समझकर द्रवित हृदयसे निस्वार्थ भावसे प्रभुप्रीत्यर्थे जो काम किया जाता है वह अपने आपही ईश्वरको अर्पण हो जाता है। इससे भाइयो ! इस प्रकार प्रभुकी महिमा, जगतका मिथ्यापन तथा जीवोंकेसाथ ईश्वरी संबंध समझकर प्रभुको प्रसन्न करनेके लिए निष्काम कर्म करनेका प्रयत्न करो ।

दोहा ।

तुलसी जगमें यों रहे, ज्यों जीभ्या मुख माहिं ।
घोर घना भक्षण करे, तो भी चिकनी नाहिं ॥

६१

म सब बातोंमें पके हैं किन्तु प्रभु-भजनमें कचे हैं, यह क्यों ?
संसारकी बहुत सी बातोंमें हम कितना ध्यान देते हैं और

व्यवहारके कामोंमें हम कितने पक्के हैं यह सबको माल
क्योंकि हम अपने तथा अपने पड़ोसियोंके व्यवहारमें
दिन देखते हैं कि भोजनका समय न होनेपर भी लोग पूछ
कि क्यों महाराज ! अब कितनी देर है ? जल्दी करो, बड़ी
लगी है। भोजनपर बैठनेके पश्चात् कहते हैं कि यह कद
अच्छी नहीं है, इसमें नीबूकी कमी है; आज पकौड़ी बड़े म
बनी है, किन्तु इसमें यदि मिर्चा और पड़ा होता तो औ
मज़ेकी होती, गरीब समझकर हम चलाये जाते हैं, नह
रसोइया तो अच्छा नहीं है, देखो आज भात गीलाकर f
है। अरे यार ! तुम तो लोभ करते हो, इससे कहाँ चल स
है ? कोई अच्छा रसोइया रखो, दो चार रुपया अधिक
पड़ेगा तो क्या हुआ, खाना पीना तो अच्छा मिलेगा।

अनन्तर पानी पीनेके समय यही हाल होता है कि ह
कुआँका पानी खराब हो गया है। देखो, कोई पीना म
रामा ! मीठे कुएँका पानी लाना ! अरे कहाँ गयी ? सुना है
अखबारमें छपा है कि कलके पानीमें कीड़े पड़ गये हैं, इ
ध्यानसे देखकर लाना। अपना दूधवाला देखनेमें तो भ
मालूम पड़ता है किन्तु मुझे इसके दूधका भरोसा नहीं है,
धोखा दिये बिना रहेगा नहीं, मीरूसे कह दो कि पास
रहकर अपने सामने भैंस दुहायेगा। यह अनार-शर्बत ब
फर्स्ट क्लास है किन्तु है बड़ा महँगा, सुना। जब बहुतसे ल
बैठे रहें, उस समय इसे मत निकालना। तू तो मालूम प
है नवलखी नागरदासकी लड़की है ! सबके सामने शर्बत
गिलास लाकर रख देती है और सबको भर भरकर देती
किन्तु एक एक गिलासका बारह बारह आना पड़ता है,
कुछ मालूम है। भाइयो ! इन सब बातोंमें हम पक्के

किन्तु धर्मकी बातोंमें हम सब बड़े कच्चे हैं। इसका कारण क्या है ? इन सब बातोंमें हम जितना ध्यान रखते हैं, जितनी मायापच्ची करते हैं, और बार बार ये बातें जितनी करते हैं उतनी क्या कभी किसी दिन प्रभुकी भी करते हैं ? नहीं, क्योंकि हमें सांसारिक क्षणिक मायिक सुख जितने प्यारे हैं उतना प्रभु प्यारा नहीं है, इसीलिए हम अपने तुच्छ स्वार्थमें पक्के हैं, और ईश्वरी आनन्द लूटनेमें कच्चे हैं।

इसके पश्चात सोनेके समय भी ऐसाही होता है। आज भी गाट नहीं कसा क्या ? आठ दिनसे मुझसे नींद नहीं आती, तब भी आंख नहीं खुली ! गद्दी पतली पड़ गयी है, इसे खोलकर फिरसे भरालो। इतने गद्दे पड़े हुए हैं तब एकही गद्दा क्यों बिछाया जाता है ? मेरे पलंगपर दो गद्दे बिछाना। खिदमतगार बड़ाही लापरवाह है, देखो, अभी तक उसने चांदनी नहीं बदला, वह गया कहां ? खिदमतगार—हजूर ! सेठने कहा—हजूर हजूर क्या बकता है ? चांदनी क्यों नहीं बदला ! उसने कहा—धोबीके यहांसे अभी आयी नहीं है। सेठ—जैसा तू है वैसाही तेरा धोबी है। न मालूम दोनों मुर्दे मेरे यहाँ कहांसे इकट्ठा हुए हैं ! सात बजे तक पड़ा रहूँ तो खराब, ऊपर डाक्टर कहते हैं कि टोकस नहीं सोने से मांदे पड़ जाओगे। निद्रा न आनेपर भी घंटे-घंटे तक बिस्तरपर पड़े रहे सेठजी पंखा झला करते थे किन्तु मीठी निद्रा आती नहीं थी क्योंकि पेटका अजीर्ण, ब्याज भरनेकी फिक्र, मनमें उठने वाले सैकड़ों प्रकारके विचार, हुंडी देनेकी मुद्दत तथा बुरे चरणवाले लड़कों आदिके दुर्गुण चांदनी या गद्दी बदलने पर भी नींद कहांसे आये ! ऐसा होनेपर भी हमारी चतुराई इसीमें रह जाती है किन्तु महामंगलकारी, परमदयालु शांति-

धाता सच्चिदानन्दस्वरूप ईश्वरको ओर हमारा लक्ष नहीं जाता यह हमारा दुर्भाग्य तो देखो।

अब कपड़ाकी बात सुनो! मैंने तुमसे कहा था न कि मेरे चोलीपर ऐसी धूल जैसी झालर नहीं लगेगी। खोल और उसे फिरसे बराबर कर। बड़ा दूकानवाला न हो गया है जा, जा, कुछ दिन हजामत बना। अपने सेठसे कहना कि मुझे यह नहीं चाहिये। न बन सके तो मत बनाओ, दूसरे जगह काम दे दिया जाय। तुम्हारे ऊपर सुखविका पर थोड़ेही लगा है! बंबईमें तो छप्पन सौ दूकानें हैं। यह फीता अच्छा किन्तु इस साड़ीपर यह शोभा नहीं देता। यह मसाला नमूनासे नहीं मिलती, ज़रा ध्यानसे देखो तो मालूम होगा रंगमें फर्क है। यह चाल मुझसे न चलेगी। मुझे पसंद होगा तो मैं वापस कर दूँगी और मज़दूरी भी तुम्हारे सर पड़ेगी। यदि तुमसे हो सके तो हाँ करो नहीं तो ना कर मैं दूसरा प्रबंध करलूँगी। मुझे तो अच्छा काम चाहिये वादा पर मिलना चाहिये; इस प्रकार सेठानीजी कपड़ाके दर्जीको धमका रही थी; भाइयो! ज़रा विचार करो कि सफाई, प्रेम, जोश तथा चतुराईसे हमें धर्मकी बातें क्या काम भी करना आता है? नहीं; तब यह सब सफाई आदि मरनेके बाद किस काममें आयेगा? इसका तो विचार

... अनन्तर लड़कीका विवाह आया। हैं तो बहुत जल्दी, आबरूके मुताबिक किये बिना क्यों छुटकारा हो सकता घर ठीक कर आया हूँ, बाजा पक्का कर आया हूँ, [illegible] रोशनीका प्रबंध हो जायगा, ज्योनार एक करना कि दो विचारमें हूँ। चाचा कहते हैं कि दो ज्योनार करना जो हो साथ। ठीक है। हमारे सेठ कहते हैं नाच करावे

चलेगा नहीं। मैंने कहा लड़कीके विवाहमें नाचकी क्या आवश्यकता है। लड़केका विवाह होगा तो नाच कराऊँगा, किन्तु वे कहते हैं कि यह नहीं होगा। कौन जानता है कल क्या होगा! लड़केके विवाहमें अभी पाँच वर्षकी देर है। इस समय नाच कराओगे तो कौनसी नयी बात कर लोगे? इस समय तो ऐसी धूमधाम करो कि दुनिया देखकर चकित हो जाय। मैंने नाचके लिए 'नहीं' कर दिया है किन्तु किये बिना छुटकारा नहीं है। अभी विवाहको तीन मास बाक़ी हैं, किन्तु मुझे बड़ी फ़िक्र लगी रहती है कि इतने थोड़े समयमें सब कुछ कैसे हो जायगा। कुछ और समय मिला होता तो अच्छा होता। अब तू दिल्लगी मत कर, आजसेही साड़ी-वाड़ी बनवानेमें हाथ लगादे।

भाइयो! ज़रा विचार करो कि ऐसी उदारतापूर्वक हम धर्मके भले काममें कभी क्या पैसा व्यय करते हैं? ऐसी तत्परतासे तथा इतने पहलेसे अनन्त ब्रह्मांडके नायका प्यारा बननेके लिए कभी तैयारी करते हैं? और दो चार दिनके धूमधामके लिए कार्यमें हम अपने मित्रोंसे सहायता तथा सलाह लेते हैं किन्तु अनन्तकालके सुखके लिए, धर्मका नियम पालन करनेके लिए तथा धर्मका काम करनेके लिए भी कभी क्या अपने मित्रोंसे सहायता लेते हैं? नहीं। तब विचार करो कि विवाहका नाच करनेसे धाम-प्रभुके दरबारमें हमारे किस काममें आवेगा? इससे भाइयो! धर्ममें पक्का बनना सीखो, प्रभुमें पक्का होना सीखो।

भाइयो! यह आश्चर्य तो देखो! हमारा सांसारिक मोह तो देखो! व्यवहारकी रीतिभाँतकी दासता तो देखो! और हमारी मूर्खता तो देखो कि लोग हँसना न आवे, तो आजकलमें

दाता सच्चिदानन्दस्वरूप ईश्वरकी ओर हमारा लक्ष नहीं जाता, यह हमारा दुर्भाग्य तो देखो।

अब कपड़ाकी बात सुनो! मैंने तुमसे कहा था न कि मेरी चोलीपर ऐसी धूल जैसी झालर नहीं लगेगी। खोल और उसे फिरसे बराबर कर। बड़ा दूकानवाला न हो गया है। जा, जा, कुछ दिन हजामत बना। अपने सेठसे कहना कि मुझे यह नहीं चाहिये। न बन सके तो मत बनाओ, दूसरे जगह काम दे दिया जाय। तुम्हारे ऊपर सुखायका पर थोड़ेही न लगा है! बंबईमें तो छप्पन सौ दूकानें हैं। यह फीता अच्छा है किन्तु इस साड़ीपर यह शोभा नहीं देता। यह मखमल नंमूनासे नहीं मिलती, ज़रा ध्यानसे देखो तो मालूम होगा कि रंगमें फर्क है। यह चाल मुझसे न चलेगी। मुझे पसंद न होगा तो मैं वापस कर दूंगी और मज़दूरी भी तुम्हारे सर पड़ेगी। यदि तुमसे हो सके तो हाँ करो नहीं तो ना कर दो, मैं दूसरा प्रबंध करलूंगी। मुझे तो अच्छा काम चाहिये तथा वादा पर मिलना चाहिये; इस प्रकार सेठानीजी कपड़ाके लिए दर्जीको धमका रही थी; भाइयो! ज़रा विचार करो कि ऐसी सफाई, प्रेम, जोश तथा चतुराईसे हमें धर्मकी बातें क्या धर्मके काम भी करना आता है? नहीं; तब यह सब सफाई जोश आदि मरनेके बाद किस काममें आयेगा? इसका तो विचार करो।

अनन्तर लड़कीका विवाह आया। है तो बहुत जल्दी, किन्तु आबरूके मुताबिक किये बिना क्या छुटकारा हो सकता है! घर ठीक कर आया हूँ, बाजा पक्का कर आया हूँ, बिजलीकी रोशनीका प्रबंध हो जायगा, ज्योनार एक करना कि दो, इसी विचारमें हूँ। चाचा कहते हैं कि दो ज्योनार करना चाहिये। जो हो साथ! ठीक है। हमारे सेठ कहते हैं नाच कराये बिना

चलेगा नहीं। मैंने कहा लड़कीके विवाहमें नाचकी क्या आवश्यकता है। लड़केका विवाह होगा तो नाच कराऊँगा, किन्तु सेठ कहते हैं कि यह नहीं होगा। कौन जानता है कल क्या होगा? लड़केके विवाहमें अभी पाँच वर्षकी देर है। इस समय नाच कराओगे तो कौनसी नयी बात कर लोगे? इस समय तो ऐसी धूमधाम करो कि दुनिया देखकर चकित हो जाय। मैंने नाचके लिए 'नहीं' कर दिया है किन्तु किये बिना छुटकारा नहीं है। अभी विवाहको तीन मास बाक़ी हैं, किन्तु मुझे बड़ी फिक्र लगी रहती है कि इतने थोड़े समयमें सब कुछ कैसे हो जायगा। कुछ और समय मिला होता तो अच्छा होता। अब तू ढिलंगी मत कर, आजसेही साड़ी-वाड़ी बनवानेमें हाथ लगादे।

भाइयो! ज़रा विचार करो कि ऐसी उदारतापूर्वक हम धर्मके भले काममें कभी क्या पैसा व्यय करते हैं? ऐसी तत्परतामें तथा इतने पहलेसे अनन्त ब्रह्मांडके नायका प्यारा बननेके लिए कभी तैयारी करते हैं? और दो चार दिनके धूमधामके लिए कार्यमें हम अपने मित्रोंसे सहायता तथा सलाह लेते हैं किन्तु अनन्तकालके सुखके लिए, धर्मका नियम पालन करनेके लिए तथा धर्मका काम करनेके लिए भी कभी क्या अपने मित्रोंसे सहायता लेते हैं? नहीं। तब विचार करो कि

आबरू जाय किन्तु प्रभुके लिए परवाह न करो तो कुछ नहीं !!
लोक लाजके लिए मुर्दोके पीछे चार जातिवाले, किन्तु प्रभुके
नामपर एक भी नहीं ! ऐसी तुच्छ बातें करनेमें या सुनने
जैसा रस आता है।वैसा रस क्या कभी प्रभुके पवित्र नामकी
माला फेरनेमें भी आया था !

भाइयो ! अभी भी गर्भवतीका लाड़ प्यार व अभिलाषा
छट्टीकी रीतभांत, पड़ोसियोंके साथकी लड़ाई, स्कूलोंके तुफान
तथा रोजगार धंधेकी मारामारी आदि कहनेकी बातें तो छु
ही जाती हैं। इन सब बातोंमें हम बड़े पक्के हैं, जितना होन
चाहिये उससे सैकड़ों गुना अधिक पक्के हैं। एक ही बात
हम केवल कच्चे हैं, यह आत्माका कल्याण है तथा यह बा
सर्वशक्तिमान परमात्माको देखना है। इन आवश्यक बातों
हम बिलकुल कच्चे रह जाते हैं। यह मज़ा तो देखो कि ज
लेने देनेकी बात आती है तो एकका सवाया और डेवढा कह
हैं, किन्तु जब धर्मकी बात आती है तब देनेके नामपर शून्य क
देते हैं। व्यवहार-चतुर मनुष्य लाखका बारह-हजार बता
लगते हैं, तथा संसारके मायावादी तो पहलेसेही दिवाला नि
देते हैं। भाइयो ! विचार करो कि ऐसी पोल कैसे चलेगी ! ज
बात क्षणिक है, दुखदायक है, जो रिवाज अज्ञानपूर्ण है, उसी
तन्मय हो जाना, उसीके लिए तन, मन, धन, अर्पण कर देन
तथा उसीमें अमूल्य जीवन नष्ट कर देना, और जिसने हमें त
अनंत ब्रह्मांडको उत्पन्न किया है उस सर्वशक्तिमान ईश्वरक
कर्त्तव्य पालन करनेमें इतनी बे दरकारी, मोक्षधामके अनं
सुखको लात मारना, और जीवनको सार्थक करके ईश्व
यंका मालिक होकर ईश्वरकी सेवामें रहनेकी परवाह
, इन सभोंसे बढ़कर मूर्खता और कौन सी हो सकती है

नतो! जैसे और सब बातोंमें पक्के हो वैसेही धर्ममें, प्रभुमें
ी पक्के बनो: इसके बिना संसारकी किसी भी चतुराईसे
र नहीं लग सकता। इससे पुनः कहते हैं कि धर्म जाननेमें
ौर धर्मका पालन करनेमें पक्के बनो तथा प्रभुका स्वरूप
मझनेमें तथा प्रभुकी महिमा जाननेमें पक्के बनो।

६२

आत्मासे परमात्मा तक बिना तारका प्राकृतिक तार लगा है उसीका नाम श्रद्धा है

भिन्न-भिन्न लोगोंसे हम यहां सुनते आते हैं कि श्रद्धा रखो,
द्धा रखो, पवित्र शास्त्र तथा सर्वशक्तिमान ईश्वरपर श्रद्धा
तो। यह उपदेश जब हम बिलकुल छोटे होते हैं तबसे लेकर
यु पर्यन्त तक सुनते चले जाते हैं तो भी शुद्ध अंतःकरणसे
न ज़रा भी सात्विक श्रद्धा नहीं रख सकते। इसका कारण
या है? इसका कारण यह है कि हम समझ ही नहीं सकते
 श्रद्धा है क्या? यदि श्रद्धाका सत्यस्वरूप हमारी समझमें
 जाय तो हम अवश्य श्रद्धा रख सकें। यह स्वरूप सम-
ाते हुए एक साधु कहता है कि हालमें वायर्लेस टेलिग्राम
र्थात् बिना तारके तारसे संदेश भेजनेकी युक्ति निकली
। यह युक्तिवाला यंत्र जहां लगा हो वहां हज़ारों मील दूर
ानका संदेशा पहुँच सकता है। इन दो यन्त्रोंके बीचमें
सी कोई संबद्ध वस्तु नहीं होती जिसे हम आंखसे देख
कें, तो भी संदेशा पहुँच जाता है क्योंकि ऐसी सूक्ष्म बिजली
गत भरमें भरी हुई है जिसे हम अपनी नग्न आंखोंसे देख

नहीं सकते। जिस प्रकार इस बिजली द्वारा अमुक आंतिक युक्तिसे धरे हुए स्थानपर संदेश पहुँच सकता है, उसी प्रका इस सूक्ष्म बिजलीके सदृश प्रभु भी सर्वव्यापक है, साथ ह वह परम कृपालु विना सर्वज्ञाता तथा सर्वशक्तिमान है ए श्रद्धा ही हमारे हृदयमें संचित यंत्र है। यह यंत्र प्रभु तक हमार संदेशा पहुँचा सकता है और प्रभुकी प्रेरणा हमारे अंतरमें ह सकता है। यह सब कैसे होता है ? संसारके व्यवहारकी ज दृष्टिसे देखनेसे यह समझमें नहीं आ सकती, किन्तु धर्म दृष्टिसे, ज्ञानदृष्टिसे और हृदयकी भावनासे देखनेसे य समझमें आ सकता है; इससे भाइयो ! विचार करो कि ज लोहा और लकडी जैसी जड़ वस्तुओंसे बने यंत्रों द्वारा विना तारके संदेशा पहुँच सकता है तब पवित्र अन्तःकरणमेंसे निकले हुये गम्भीर श्रद्धाका उत्तम संदेशा सर्वशक्तिमान पर मात्माको कैसे नहीं पहुँच सकता ? यदि तुम्हारी श्रद्धाका यंत्र साफ होगा तो तुम्हारा संदेशा वहाँ अवश्य पहुँचेगा और यदि वहाँ संदेशा पहुँचेगा तो उसका उत्तर भी तुम्हें अवश्य मिलेगा, इसमें कुछ भी संदेह नहीं है। इससे भाइयो ! महान प्रभुके साथ बातचीत करनेका विनातारका यंत्र जिसे महात्मा लोग श्रद्धा कहते हैं बढ़ानेका तथा उसे पवित्र रखनेका प्रयत्न करो!

६३

संसारका झंझट होनेपर भी प्रभुको न भूलनेमेंही खूबी है

कुछ निर्बल मनवाले मनुष्य ऐसा सोचते हैं कि साधु हो जायें तो एकान्तमें खूब भक्ति कर सकेंगे, ऐसा समझकर

तुममें मनुष्य त्यागी हो जानेका विचार किया करते हैं किन्तु
वह यहीं सोचते कि शीघ्र वैराग्य आये बिना कुटुम्ब-स्नेहको
तोड़ना महापाप है। हमारे महात्मा ऋषि पवित्र शास्त्रमें कह
गये हैं कि चारों आश्रममें गृहस्थाश्रम सबसे बड़ा है क्योंकि
दूसरे तीनों आश्रम गृहस्थाश्रमके आधारपर हैं। ऐसे भगवद्
कृपासे प्राप्त पवित्र गृहस्थाश्रमके कर्त्तव्योंको छोड़देना बड़ा
अपराध है तथा हमारे सिरपर मित्रों पड़ोसियों, राज्य गुरु,
पितरों और देवोंकाभी ऋण लदा हुआ है उसे चुकाये बिना
साधु हो जानेको श्रीकृष्ण भगवानने श्रीमद्भगवद्गीतामें
नपुंसकत्व कहा है। ऐसा नपुंसक होकर भक्ति करनेमें पुरु-
षार्थही क्या है? गृहस्थाश्रम धर्मका पालन करते हुए भक्ति
करनाही उत्तम भक्ति है। इस सम्बन्धमें एक साधु महात्मा
कहते थे कि:—

मैंने घरबार छोड़ा, स्त्री बच्चोंका त्याग किया, रोजगार
धंधा छोड़ा तथा दूसरेका माल उड़ाने लगा, दिन भर आराममें
रहने लगा और बड़ा बनकर जगतमें पूजा जाने लगा। इस
प्रकार माल खाखाकर, पूजा लेकर भक्ति करनेमें क्या रखा है?
यह तो सब करता है किन्तु भक्ति तो तुम्हारीही सच्ची है जो
संसारके जंजालमें फंसे रहनेपर भी उसमेंसे बचकर भक्ति
करते हो। भाई! बलिहारी तो तुम्हारी है। मांदे सादे लड़कोंको
पालते हो, विचित्र प्रकारके स्वभाववाली स्त्रियोंको प्रसन्न
रखते हो, वृद्ध मा-बापकी सेवा करते हो, व्यापारका धक्का
सहते हो, संबंधियोंका कर चुकाते हो, लोगोंके बाण सदृश कटु
वचन सहते हो तथा जगतके जीवोंके कल्याणमें रहकर धर्ममें
ध्यान रखते हो, सच्ची भक्ति तो तुम्हारीही है और बलिहारी
भी तुम्हारी है कि हृदयमें बहुतसे घाव लगे रहनेपर भी सामने

खड़े होकर लड़ा करते हो, सच्चे बहादुर तो तुम्हीं हो। प्रभुसे भत्ता पाने वाले हमारे समान सिपाही लड़ें तो इसमें नवीनता क्या है? किन्तु तुम्हारे समान सब तरहसे घायल बिना भत्ताके सिपाहीके लड़नेमेंही खूबी है और वही सबसे अधिक पुरस्कार पाने योग्य है क्योंकि तुम गृहस्थ हो, इसके बिना भत्ताके स्वयं सेवक हो और हम साधु हैं इससे प्रभुके भत्तायुत नौकर हैं भत्ता पाने वाले नौकर लड़ें तो क्या हुआ? यह तो उनका कर्त्तव्यही है, किन्तु जो इसके नौकर नहीं हैं, बिना भत्ता पाने वाले उन मनुष्योंका लड़नाही बड़ी बात है। भाई! मुझसे तुम्हीं बड़े हो, क्योंकि कुटुम्बकी व्याधियाँ व्यापारकी पीड़ायें तथा सांसारिक जंजाल रहनेपर भी तुम भक्ति करते हो प्रभुके दरबारमें तुम्हारा पुरस्कार बहुत बड़ा है, इससे निष्कारण साधु बननेकी निर्बल इच्छा न रख संसारमेंही रहकर परम कृपालु परमात्माकी भक्ति करो। इसमें अधिक बहादुरी है और परमकृपालु महान ईश्वरके दरबारमें इसका फल भी बहुत बड़ा है।

६४

मंदिरमें थोड़ी देरके लिए भक्त बन जानेसे क्या होता है? प्रत्येक स्थानमें, काममें तथा सर्वदा भक्त बने रहो, तभी कल्याण होगा

मैंने देखा है कि बहुतसे मनुष्य मंदिरमें दर्शन या प्रार्थना करनेके लिए जाते हैं तो वे वहाँ अपनी इच्छानुसार थोड़ी देरके लिए भक्त बन जाते हैं अर्थात् उतने समय तक वे प्रभुका

नाम स्मरण करते हैं, दीनतासे माथा झुकाते हैं, अपने पापोंके लिए क्षमा माँगते हैं, धर्मके गोलकमें अधेला या पैसा छोड़ देते हैं, चरणामृत या पान लेते समय मुखियाजीसे मिठाससे बोलते हैं, अच्छा कपडा पहनकर आते हैं, स्वयं मंदिरमें अदब-से रहते हैं, तथा दूसरा भी भूल चूक न करे, इसका ध्यान रखते हैं, अपने नहाने धोने, माला-तिलक लगानेमें बाहरी सफाई रखते हैं और सब भक्तोंको अपने रीत्यानुसार जैगोपाल करते हैं। इस समय देखो तो बाहरसे वे भक्तके समान मालूम पड़ते हैं किन्तु मंदिरसे बाहर आते ही उनके आचरण बदल जाते हैं, तरकारी बाज़ारमें पहुँचनेके पहले रस्तेमें ही उनकी उदारता उड़ जाती है, स्त्री पुत्र तथा नौकरके साथ बातचीत करते समय दीनता दूर भाग जाती है, दूकानपर बैठनेपर विशेष समय ग्राहकके हाथमें आनेपर पापका भय सब पलायन कर जाता है, दलालीके समय ग्राहकको ऊँचानीचा समझाते समय धर्म यथायनमः हो जाता है, पड़ोसीके साथ झगड़ा होनेपर नवीन डिक्शनरी (कोष) का पन्ना उलटने लग, तथा मित्रोंमें भी जब स्वार्थकी बात आ जाती है तब जैगोपाल बिचारा भूल जाता है। मामूली छोटीसी अड़चनोंके आ पड़ने पर मंदिर अपने स्थानपर पड़ी रह जाती है, ज़रा भी इच्छित वस्तु प्राप्त न हुई कि मुँह लटक जाता है, स्वांके बीमार पड़ने-पर प्रभुके बदले डाक्टरका स्मरण होने लगता है, पार्टी बारिमें जाना हो तो भक्ति कहाँ है इसका ध्यान नहीं रहता और जब किसीसे बैर हो जाता है तब इस प्रकार वे वर्तते हैं मानो इस संसारमें प्रभु है ही नहीं।

भाइयो! अब बताओ कि हमारे ऐसे आचरणोंसे हमारा दैवनपर क्षणिक मन्दिरके भीतरकी बाहरी भक्ति क्या प्रकार

डाल सकती है ? और सर्वज्ञाता, पापियोंको शिक्षा देनेवाल अन्तर्यामी प्रभु हमारा कैसे कल्याण करेगा ? भाइयो ! केव थोड़ी देर मंदिरमें नहीं, बल्कि जीवनके अंतिम श्वासतक प्रत्ये धानों तथा काममें प्रभुको उपस्थित समझ प्रभुमय होकर रहने का प्रयत्न करो। अमावस्या या रविवारको मंदिरमें जाक थोड़ी देरके लिए भक्त बननेसे पार नहीं लगेगा। यदि जीव सार्थक करना हो, चौरासी लाखके फेरामेंसे छुटकारा पाना ह तथा प्रभुकी सेवामें रहकर अनन्तकाल तक मोक्षधामक अखंड सुख भोगना हो तो जीवनके प्रत्येक काममें प्रतिदि प्रभुको साथ रखकर उसकी प्रेरणानुसार चलनेका प्रयत्न करो इससे प्रभु अपना हो जायगा तथा हम प्रभुके हो जायँगे।

९५

शहरमें जब राजा आने वाला होता है तब बड़ी धुमधाम की जाती है तब राजाओंके राजा तथा देवोंका देव प्रभु जब अंतरमें आनेवाला हो तब कितनी तैयारी करना चाहिये

किसी बड़े शहरमें जब उस देशका महाराजा आनेवाला होता है तब समस्त प्रजामें कितना आनन्द छा जाता है, यह देखकर हमें आश्चर्य होने लगता है, जहाँ देखो वहाँ मार्ग तथा गलियोंकी सफाई होने लगती है, सड़कोंपर पानीका छिड़काव होने लगता है, कोई अपने घरपर झंडी टाँगता है, कोई मंडप खड़ा करता है, कोई "भले पधारो नामदार महाराज साहब" आदि सुनहले अक्षरोंका साइनबोर्ड टाँगता है, मोती-

के व्यापारी अपने दरवाज़ेपर मोतीकी माला टांगते हैं, रेशमी कपड़ावाले रंगबिरंगे कपड़ोंसे अपनी दूकान सजाते हैं, कविगण यशगानके कवित्त बनाने लगते हैं, पंडितगण आशीर्वादके श्लोक पढ़ने लगते हैं, अध्यापक स्कूल सजाते हैं तथा लड़कोंसे साफ कपड़ा पहनकर आनेके लिए कहते हैं, सेनाके सिपाही अपना हथियार झुकाकर महाराजाका सम्मान करते हैं। अंग्रेजी बाजोंमें "महाराज दीर्घजीवी हों" आदि संगीत गाये जाते हैं, तथा महाराजाका आगमन सूचित करनेके लिए तोपें छोड़ी जाती हैं। इस समय जहां देखो वहां सड़कोंपर झुंडके झुंड लोग दिखायी पड़ते हैं। छोटे बालक तथा गृहस्थ स्त्रियां भी अपना काम छोड़कर खिड़कीमें खड़ी रहती हैं और उन सभोंमें महाराजकी ही बातें होती रहती हैं। कोई कहता है महाराज बड़े बहादुर हैं, इन्होंने बहुतसे युद्धोंमें विजय पायी है, कोई कहता है महाराज बड़े उदार हैं, इनकी उदारताकी तो बात ही कुछ मत पूछो। कोई कहता है, ये बड़े दयालु हैं, इन्होंने हजारों कैदियोंको छोड़ दिया है, कोई कहता है कि महाराज बड़े धर्मात्मा हैं, इन्होंने बहुत सी मन्दिरें बनवाया है, ये बड़े न्यायी हैं, इनके राज्यमें शेर और बकरी एक घाटपर पानी पीते हैं। कोई कहता है, इनकी कीर्त्ति चारो ओर फैली हुई है और कोई कहता है आज कल इनके समान भला दूसरा राजा दूसरा कोई नहीं है। इसके पश्चात् जब सुन्दर चौकड़ीपर महाराजा साहबकी सवारी निकलती है तब लोग ध्यानपूर्वक एक टक इन्हींको देखने लगते हैं और बहुतसे लोग पुष्पकी वृष्टि करने लगते हैं और जब सामनेसे गाड़ी निकल जाती है तब पीछेसे "महाराजकी जै हो, जै हो" आदि लोग चिल्लाते हैं।

एक समय ऐसी ही धूमधाम देखकर लौटते हुए लोगोंसे एक भक्तने पूछा-महाराजके साथ क्या तुम्हारी जान पह‍चान है? उत्तर—नहीं। तुम लोग उसके लिए इतना सब करते हो, इसके बदलेमें वह तुम्हें कुछ देता भी नहीं है? उत्तर-नहीं। तुम लोग उसकेलिए इतना दौड़धूप करते हो किन्तु क्या वह अपनी गाड़ी खड़ी कराके तुम्हें बुलाता भी है, या तुम्हें अपने पास कभी, बैठावेगा? उत्तर-नहीं? उस भक्तने कहा—अरे भलेमानस! तब अपना काम धंधा छोड़कर धक्का मुक्की खाते हुए इस भीड़में किसलिए आये हो? यह सुनकर उन मनुष्योंने कहा कि राजापर हमें बहुत प्रेम है जिससे उसकी भलाई तथ तेजसे हम चौंधिया जाते हैं, इससे निजी लाभ कुछ न होनेपर भी उसकी बातें सुनना हमें बहुत अच्छा लगता है, उसे देखनेकी इच्छा होती है और उसकी सेवा करना अच्छा लगता है। आजकी सवारीका वृतांत जब अखबारोंमें पढ़ूंगा तब जीवको शांति मिलेगी। यह सुनकर उस भक्तने कहा—अरे राजाके लिए जब इतना आकर्षण होता है तब जिसने राजाओंको राज, देवोंको देवत्व, जीवोंको जीवन दिया है तथा अपनी इच्छाके अनुसार अनंत ब्रह्मांडको चला रहा है, उस सर्वशक्तिमान परम कृपालु परमात्माके लिए आकर्षण कितना अधिक होना चाहिये? उसकी बातें सुननेमें कैसा अलौकिक आनंद प्राप्त होगा? उसके प्रेममें कैसी मस्ती होगी? उस ध्यानमें कैसी पूर्णता होनी चाहिये तथा उसकी कृपादृष्टि ी सार्थकता होगी? इसका तो ख्याल करो! क्योंकि ात्मा अति दयालु, पवित्र, सत्यस्वरूप, दुखमें सहायता ाता, महाबलवान, सबका सृजनहार, हमारे अपराधोंको ाफ करनेवाला तथा सर्वज्ञ है, सबका अभिमान चूर करने

क्षमा तथा आँखोंको उठाने उस स्थानपर खड़ा दे सकनेवाला है, न्याय-पुष्प उसके हाथमें है, वह सुन्दरसे सुन्दर, कोमलसे कोमल, बड़ेसे बड़ा, छोटेसे छोटा, सबकी प्रार्थनाओंको सुनने वाला, सर्वव्यापक, प्रेमकी मूर्त्ति, अखंड प्रतापी, मरे हुओंको पुनः जीवन देनेवाला, सदा अविचल, अविनाशी, जगतका मित्र, हमारे पाप-पुण्यका हिसाब रखनेवाला तथा बदला देनेवाला है, वह प्रगट गुप्त तथा सबपर हुकूमत चलानेवाला है, वह गुरुओंका गुरु, स्वयं प्रकाशमान तथा सर्वशक्तिमान है। भाइयो! शुद्ध अंतःकरण तथा निष्काम वृत्तिसे इसकी ओर आकृष्ट हो तथा उसकी कृपा प्राप्त करनेका प्रयत्न करो क्योंकि महात्मागण कहते हैं:—

दोहा

सब धरती कागद करूँ, लेखन सब बनराय।
सात समुद्र स्याही करूँ, हरिगुन लिखा न जाय॥
जो यह एक न जानिया, तो बहु जाने क्या होय।
एकै ते सब होत है, सब तें एक न होय॥
जो यह एकै जानीया, तौ जान्या सब जान।
जो यह एक न जानीया, तौ सबही जान बेजान॥

६४

प्रभुको जो अर्पण किया जाता है वह अनंत गुना होकर उसे मिलता है, इससे यदि हम अपना पाप उसे अर्पण करें तो वह भी अनंत गुना होकर हमें मिलेगा, इसलिए सावधान हो जाओ

एक महाराज भागवतकी मंडलीमें उपदेशके समय कह रहे थे कि भगवानके भंडार, अनाथके नाथ, पावनपावन, महान परमात्माकी ऐसी आज्ञा है कि जो होम, दान तप या कोई उत्तम कार्य करो, उन सबको मुझे अर्पण कर दो। भाइयो! हमारे पवित्र सनातन आर्य धर्मका यह महा सिद्धांत है तथा हमारे कामोंको प्रभु स्वीकार करता है यह उसकी परम दया है। अपने कामोंको प्रभुको अर्पण करनेसे हम पवित्र रह सकते हैं, अहंकार तथा ममता कम हो जाती है। हममें दीनता आ जाती है, हमारा भार हलका हो जाता है, दूसरा नवीन कार्य करनेके लिए हममें बल आ जाता है, हृदयमें प्रभु-प्रेम तथा ईश्वरीय ज्ञान ठहर सकते हैं, जीव प्रभुमय हो सकता है तथा अपने कामोंको प्रभुको अर्पण करदेनेसे वह एकका अनंत गुना होकर मिलता है, इससे अपने सब शुभ कर्मोंको ब्रह्मार्पण विधिसे प्रभुको प्रसन्न करनेके लिए ही करना चाहिये।

यह सुनकर एक भक्तने पूछा—महाराज! आपकी बातें हैं
... किन्तु आप कहते हैं कि अपने उत्तम कर्मोंको प्रभुको
... तो पापका क्या किया जाय? पाप किसके अर्पण
... हमसे अच्छे और बुरे दोनों प्रकारके काम होते

हैं, इनमेंसे अच्छे कर्मोंको तो अर्पण करदें और पापको रखलें,
यहाँका न्याय है? यदि अच्छे कार्य प्रभुको अर्पण किये
हैं तो बुरे काममी उन्हींको अर्पण कर देना चाहिये। अच्छा
म तो अर्पण करदें तथा बुरा रख छोड़ें ऐसा पागलपन
। करेगा? यदि दो तो दोनों दो, नहीं तो कोई मत दो, क्यों
हैं कि नहीं?

महाराज—भाई! अपने बुरे काम प्रभुको अर्पण नहीं किये
सकते। क्या तुम अपने राजाको या अमलदारको सड़ा
। भेंट देनेका साहस कर सकते हो? अपने गुरुको फटा-
ना वस्त्र देनेकी क्या तुम्हारी इच्छा होती है और अपने
तोंको सड़ी गली हुई चीज़ क्या तुम कभी भेंट करते हो?
।, कारण कि किसी भी भले मनुष्यको कोई भी खराब
तु भेंट करना इसका अपमान करनेके बराबर है तथा
नो मालापकी प्रकट करता है और ऐसा करना सांसारिक
मके तथा अपने अंतःकरणके विरुद्ध है। इससे किसी राजा,
साहुकार, सम्बन्धी मित्रके पास कोई भी खराब वस्तु
ी नहीं जाती और बहुतसे सज्जन तो भिखारिओंको भी
ाब वस्तु नहीं देते। अब विचार तो करो कि जो सबसे
ा, श्रेष्ठ, बड़ा तथा प्यारा है, उस अनन्त ब्रह्मांडके नाथको
। कोई बुरा कार्य अर्पण किया जा सकता है? नहीं; इसपर
यदि तुम न मानो और अपने खराब कर्मोंको अर्पण कर
तो मालूम है कि इसका परिणाम क्या होगा? याद रखो
प्रभुको अर्पण किया हुआ कार्य प्रभुकी प्रभुताके अनुसार
का अनन्त गुना हो जायगा, तथा इतना पाप बढ़ जानेका
न क्या होगा? इसका फल यही होगा कि अनन्त काल तक
कमें रहना पड़ेगा और नरकके दुख कैसे भयङ्कर हैं यह

किसीसे छिपा नहीं है। ऐसा नरकका दुख भोगना न पड़े, इसलिये अपने बुरे कामोंको प्रभुको अर्पण न करनेका तथा प्रेमपूर्वक भले कार्योंको अर्पण करनेका प्रयत्न करो, इससे भले कर्मोंके पुण्यसे धीरे-धीरे तुम्हारे पाप अपने आपही नष्ट हो जायँगे। क्योंकि पुण्य अग्नि है तथा पाप ईंधन है, और ईंधन को जला डालते हुए अग्निको कुछ देर लगती नहीं, इसलिये सर्वशक्तिमान महान प्रभुको बुराकाम अर्पण न हो इसका ध्यान रखो तथा हृदयके उल्लाससे प्रेमपूर्वक शुभ कर्मोंको अर्पण करनेका प्रयत्न करो।

६७

विश्वास

शास्त्रमें कही हुई बातोंको श्रद्धापूर्वक मानने का नाम विश्वास है। जिसे विश्वास है वह लंगर डाले हुए जहाज़के समान स्थिर रह सकता है।

धर्मकी तथा प्रभुकी बहुतसी बातोंको जिसे हम देख नहीं सकते तथा जान नहीं सकते उनबातोंको भी महात्माओंने शास्त्रमें कहा है, इसलिये किसी प्रकारका संदेह रखे विना उन बातोंको माननेका नाम विश्वास है।

विश्वासकी बातें हमारी बुद्धिसे शायद परे हों किन्तु वे प्रभुकी बुद्धिसे परे नहीं हैं और उनका भेद भी महात्माओंसे जाना जा सकता है. इससे जो प्रभु बुद्धिदाता तथा शास्त्रकर्ता है उसके वचनोंपर अश्रद्धा न करना चाहिये।

बेलून आकाशमें उड़ता है उसे देखा न हो और सहारा रेगिस्तान या यूरोप खण्ड देखा न हो तो भी विद्वानोंके लिखे अनुसार हम उसे मानते हैं और शास्त्रमें कही हुई प्रभुकी बातोंको नहीं मानते, यह कैसा अज्ञान है!

याद रखो कि मनुष्यमें भूल हो जाय, वह ठगा जाय या दूसरोंको ठगे भी भी प्रभु भूल जाय या ठगा जाय, यह नहीं हो सकता। इसलिये उनके वचनोंपर अपनी आत्माके कल्याणके लिये विश्वास करना चाहिये।

विश्वासमें धर्मके सब अंग आ जाते हैं। वस्तुको सामने देखकर चाहे हम उसपर विश्वास न करें किन्तु प्रभुके पवित्र वचन विश्वास करने योग्य हैं।

विश्वास-रहित काम बिना नीवके मकानके सदृश हैं। जैसे बिना नीवका मकान बहुत दिन तक नहीं टिक सकता, वैसेही बिना विश्वासके कामका फल भी नहीं मिलता, शास्त्रके बहुतसे वचनोंमें जो अच्छे लगें उनका तो पालन करना और जो न अच्छे लगें उन्हें छोड़ देना, यह प्रभुको व्यापारी समझकर व्यवहार करनेके समान है।

फूटे घंटेमेंसे जैसे ठीक आवाज नहीं निकलती, वैसेही प्रभुकी कुछ बात माननेसे और कुछ न माननेसे भी कोई परिणाम नहीं निकलता।

तंबूराका एक तार टूट जानेसे जैसे ठीक आवाज नहीं निकलती वैसेही प्रभुकी सब बातें न माननेसे भी मोक्ष नहीं मिल सकता।

आंखमें कंकड़ी पड़ जानेसे जैसे ठीकसे दिखाई नहीं पड़ता वैसेही थोड़ा विश्वास रखनेसे, थोड़ा मानने तथा थोड़ा न माननेसे भी सच्चा ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता।

जो पवित्र जीवन व्यतीत करता है तथा सर्वदा ईश्वरकी प्रार्थना करता है उस भक्तको अलौकिक विश्वास मिलता है तथा पीछे उसे सत्य ईश्वरीय ज्ञान भी प्राप्त होता जाता है।

९८

विश्वास घट जानेके कारण,

जो मनुष्य विश्वास योग्य बातको भी जान बूझकर मानता तथा सत्संग नहीं करता, उसका जो थोड़ा विश्वास रहता है वह भी चला जाता है। बुरे तौरसे जी वितानेसे भी अविश्वास पैदा हो जाता है।

जैसे भीत पर पानी पड़नेसे वह कमजोर होती जाती वैसे खराब पुस्तकें पढ़नेसे भी विश्वास जाता रहता है।

रोज रोज बराबर खराब भोजन करनेसे मनुष्य जैसे बीम पड़ जाता है, वैसेही अश्लील पुस्तकें पढनेसे विश्वास नष्ट जाता है और अंतमें नरकमें जाना पड़ता है। ऐसा न होने पा इसलिए प्रभुपर विश्वास न हिलने देनेका प्रयत्न करो, औ विश्वास ढीला न पड़ने देनेके लिये महान प्रभुकी शरण जाकर सर्वदा ऐसीही भावना रखोः—

दीनके दयालु छोड़ि किसकी शरण जाऊँ,
किसकी शरण जाऊँ प्रभु, किसकी शरण जाऊँ (टेक)
मात तात जानि प्रभु, चरण प्रति धाऊँ,
पाइकर प्रसाद पूर्ण कृत कृतार्थ होऊँ, प्रभु कृतकृतार्थ होऊँ-दीनके
प्रीति भक्ति रूपी पुण्य तीर्थमें मैं न्हाऊँ,
परम इष्ट प्रभुकी मैं स्तुति गुण गाऊँ—दीनके०
प्रभु कृपानिधानकी मैं पूर्ण कृपा चाहूँ
संकट समय, माय पलव मैं सहाऊँ, प्रभु-पलव मैं सहाऊँ-दीनके०
स्वामी मेरी परात्परा मैं, शरण तुम्हारे धाऊँ,
प्रेम पुष्प अंजलि मैं प्रभु पदमें बँधाऊँ, प्रभुपदमें बँधाऊँ दीनके०

६६

क्या करें भाई! अभी तो कलिकाल चल रहा है, ऐसा हम बहुत कहते हैं किन्तु यह नहीं सोचते कि प्रभुके लिए यह कैसे लागू होता है

बहुत लोगोंसे जब तब हम सुना करते हैं कि क्या करें भाई! अभी तक कलिकाल चल रहा है इससे ऐसेही चलेगा। वृद्ध लोग इस बातकी पुष्टि करते हुए कहते हैं कि ऐसा समय तो मैंने कभी अपने जीवनमें देखाही नहीं था। अब तो बिलकुल कलियुग आगया है, और बहुतसे पंडित तथा गुरुभी कहते हैं कि मनुष्योंका क्या जोर है? कालके आधीन होना पड़ेगा, इसमें किसीका वश नहीं है, समय सब कुछ करा देगा। इस प्रकारके थोड़े बहुत विचार बहुतसे मनुष्योंके मनमें आ गये हैं, इससे जहां तहां ऐसीही बातें सुननेमें आती हैं कि हां, अब तो ऐसेही चलेगा। जैसा देश वैसा वेश और इनमेंसे बहुतसे निर्बल चित्त-मनुष्य तो इस बातपर बहुतही जोर देते हैं। मानो ज़माना स्वयंही सबकुछ कर रहा है, हम कुछ नहीं कर रहे हैं, हम केवल डोरीमें बंधे हुए पुतलाही हैं। हमें अपनी बुद्धिसे मानो कुछ करनाही नहीं है और मानो प्रभुकी इच्छा भी कलिकालके अनुसार पाप करानेकीही है, इस प्रकार वे बातें किया करते हैं। और ये कहते हैं कि कालही ऐसा है तो हम क्या करें! इसमें हमारा क्या वश है! शास्त्र क्या झूठा हो सकता है! शास्त्रमें लिखा है कि कलयुगमें सब प्रकारके अधर्म होंगे, ऐसाही हो रहा है, इसे हम अपनी आंखोंसे देख रहे हैं। अभी तो गनीमत है, इसके बाद तो इससे भी खराब समय आयेगा

धर्मके स्तंभरूप ब्राह्मण, गुरु राजा बिगड़ गये तथा धर्म भी स्वयं बिगड़ गया, उसमें बहुत प्रकारकी गड़बड़ी हो गयी है, तब यदि हम बिगड़ जायँ तो नवीनताही क्या है। यह तो ऐसेही चला करता है। व्यर्थकी हाय हायमें क्या रखा है? जैसे चल रहा है चलने दो। इसमें हम क्या कर सकते हैं? काल अपना कार्य करता जायगा।

प्रसंगोपात एक ज्ञानी भक्तने इस बातको सुना, तब उन्होंने कहा—भाई! कलियुग चल रहा है, यह बात सत्य है, किन्तु कलियुग है किसमें? हममें या सर्वशक्तिमान महान प्रभुमें? कलियुग आनेसे अनन्त ब्रह्मांडके नाथमें कौनसी कमी आ गयी? उनके लिए तो सब काल बराबर हैं। वे तो सदा वर्त्तमान कालमें ही रहते हैं, वे तो कालके भी काल हैं तथा कालसे परे हैं। उनमेंसे कौनसी बात निष्फल गयी? यह तो बताओ! कलियुग आनेसे क्या उनकी दया कम हो गयी, या तेज कम हो गया? उनका ऐश्वर्य जाता रहा, कि उनका सौन्दर्य घट गया? क्या उनमेंसे अखण्ड आनन्द भाग गया या उनकी शांति कम हो गयी है? जगतका कल्याण करनेकी उनकी शक्ति क्या क्षीण हो गयी है या पापको क्षमा करनेकी शक्ति नष्ट हो गयी है? क्या उनकी जीवोंपरकी कृपा कम हो गयी है? उनका न्याय क्या निर्बल पड़ गया है? पापिओंको संहार करनेकी शक्ति क्या घट गयी है? क्या उनका अंतर्यामीत्व मिट गया है? क्या भक्तोंपर होनेवाली उनकी दया भाग गयी है? उनका प्रेम जो जगत पर है वह क्या कम हो गया है? और कलियुग आनेसे क्या प्रभुकी प्रभुता भाग गयी है? नहीं। तब कलियुग कलियुग क्या बका करते हो? याद रखो कि कलियुगके आनेसे हमारे सर्वशक्तिमान महान ईश्वर्में

ई भी कमी नहीं आ गयी है। उलटे शास्त्रमें तो यह कहा
गा है कि दूसरे युगोंकी अपेक्षा कलियुग बहुत अच्छा है
कि इसमें थोड़े परिश्रमका तुरन्तही बड़ा फल मिलता है।
हाँ सतयुगमें हजारों वर्ष तप करनेसे जो फल
लता था, त्रेतायुगमें लाखों रुपया खर्च करके बड़ा बड़ा यज्ञ
रनेसे जो फल मिलता था और द्वापरमें शास्त्र-ज्ञानसे,
और तथा बहु विधि विधिका पालन करनेसे जो फल
लता था वह फल कलियुगमें केवल श्यामसुन्दरका गुणगान
रनेसे और उनका नामस्मरण करनेसे मिलता है। इससे
यों। कलियुगमें तो पापही होगा, ऐसा विचार न रखकर,
समझो कि भगवत् प्राप्तिके मार्गमें कुछ कमी नहीं हो
ई है। केवल हमारे मनकी निर्बलताही यह कलियुग है;
ने पुरुषार्थकी कमी, मनकी चंचलताही यह कलियुग है,
रे काम क्रोध, मद, लोभ, आदि जो बढ़ गये हैं, यही
लियुग है, हमारा ब्रह्मचर्य जो घट गया है यही कलियुग है,
बालकपनमें जो धर्मका ज्ञान नहीं मिलता, हम सब जो
विषय स्वार्थी हो गये हैं, अन्दरके अन्तर्यामीके अखण्ड
नन्दको छोड़कर बाहरी क्षणिक सुखोंकी खोजमें जो दौड़
ते हैं, यही कलियुग है; खराब सोहबतमें पड़े रहते हैं व्यर्थ
यों की बातें किया करते हैं, भगवद् इच्छाके अधीन न
र, अपनी इच्छाके अनुसार चलना चाहते हैं, यही कलियुग
महान ईश्वरमें, शास्त्रोंमें और सद्गुरुओंमें श्रद्धा नहीं रखते
। कलियुग है तथा विश्वको आनन्द देनेवाले, संसार-
गरसे तारनेवाले, महाआनन्दरूप महान प्रभुको भजते नहीं
र उसके मार्गपर चलते नहीं, यही कलियुग है। सारांश
हमारे बिना लगामके मनका हलकापन, हमारा ईश्वर

संबंधी अज्ञान तथा पुरुषार्थकी कमीही कलियुग है; भाइयो हममें ही कलियुग है, प्रभुमें नहीं। ऐसा समझकर इस कलियु को दूर करनेके लिए प्रभुकी महिमा फैले, प्रभुका गुण गाय जाय, प्रभु संबंधी ज्ञान बढ़े, और सदासर्वदा सर्वस्थानप महान प्रभुके नामकी ही जय जयकार हो, ऐसा प्रयत्न कर ऐसा करनेसे कलियुग अपने आपही भाग जायगा।

१००

शास्त्र सीढ़ी है। सीढ़ीसे नीचेभी उतरा जा सकता है ऊपरभी चढ़ा जा सकता है, इससे ध्यान रखो कि नीचे न उतर जाना

प्रायः देखा जाता है कि अपने स्वार्थके समय बहुत मनुष्य अपने धर्मशास्त्रके अनुसार नहीं चलते, किन्तु जब अपने प्राचीन रीति रिवाज एवं मतके विरुद्ध बात हो, अप स्वार्थको वशमें रखना पड़ता हो अथवा दूसरोंके साथ तकरा करनेकी इच्छा हो, उस समय वे बारबार शास्त्रकी दोहाई दे हैं। लोगोंका ऐसा स्वभाव देखकर एक जिज्ञासुने किस महात्मासे पूछा-महाराज! कोई पण्डित शास्त्रके अमुक श्लोक का अमुक प्रकारसे अर्थ करता है, तो दूसरा पण्डित उसक दूसरे प्रकारसे, तो तीसरा तीसरे प्रकारसे अर्थ करता है; संप्र दाय वाले अपने अपने मतानुसार अर्थ करते हैं, परदेशी अप फैशनके अनुसार अर्थ करता है। कुछ लोग आसपास संयोगके अनुसार तो कुछ लोग मूल शब्दके अनुसार अर्थ

करते हैं कुछ स्थूल अर्थ करते हैं तो कुछ ऊपरी अलंकारमें ही रह जाते हैं, और कुछ लोग प्रत्येक शब्दका उससे उच्च आध्यात्मिक अर्थ बताते हैं। इन सबोंमें सच्चा कौन सा है? किसका अर्थ ठीक है और किसका गलत? संसारके सब मनुष्य शास्त्रका अर्थ तो समझ सकते नहीं, किन्तु सबको कभी न कभी शास्त्रका काम पड़ता है, इससे उन्हें अपने जाने बूझे हुए पंडितके आधारपर रहना पड़ता है और पंडितोंमें ही शास्त्रके अर्थपर ऊपर लिखे अनुसार आपसमें मारामारी होती है, तो उसमें हमें कौनसा ठीक समझना चाहिये?

महात्माजीने उत्तर दिया—भाई! प्राचीन पवित्र ऋषियोंने अधिकारके ऊपर ही आधार रखा है और प्रत्येक मनुष्यका अधिकार जुदाजुदा होता है, इससे शास्त्रके एक ही वचनका देश कालके अनुसार प्रजाओंके नीति रिवाज, आसपासके संयोग तथा अर्थ करनेवाले विद्वानोंकी विद्वत्ता एवं पवित्रताके अनुसार, शास्त्रोंका भिन्न भिन्न अर्थ हुआ करता है। यह सब अर्थ प्रजाके अमुक वर्गके लिए अमुक हद तक ठीक होता है। किंतु सब प्रजाके लिए और सब कालके लिए यह अर्थ ठीक नहीं है, क्योंकि प्रत्येक देश तथा कालमें मनुष्योंका अधिकार भिन्न भिन्न होता है। इसलिए सर्व काल, देश व लोकके लिए शास्त्रके प्रत्येक वचनका अर्थ उपयोगी नहीं हो सकता और जो उपयोगी नहीं हो सकता वह टिक भी नहीं सकता, इससे अधिकार भेदसे भिन्न भिन्न अर्थ तो होगा ही, क्योंकि यह शास्त्र ही नियम जीव और जीवको ईश्वरके साथ जोड़नेवाली कड़ी है; किन्तु शास्त्र स्वयं प्रकाश नहीं है, वह अपने आपही दौड़कर लोगोंके हृदयमें घुस नहीं सकता, पर भक्तोंकी पवित्रता, पंडितोंकी विद्वत्ता और लोगोंके आचार-विचारके अनुसार उसका अर्थ

होता है जिससे वह प्रकाशमें प्रकाश और अंधकारमें अंध
डालता है अर्थात् जो उसके पास जाता है उसीपर वह प्रभ
डाल सकता है किंतु जो दूरसे बात करता हो या पत्थर फेंक
हो तो वह उसपर कुछ असर नहीं कर सकता। ऐसा होने
शास्त्रके एक ही वचनका भिन्न-भिन्न अर्थ तो अवश्यही हो
क्योंकि शास्त्र तो आमके वृक्षके समान है, जिससे वह कि
समय देश कालानुसार छायामात्र देता है; किसी समय श
पवन, किसी समय सुन्दर बौर, कभी कच्चा टिकोरा, क
खट मिट्ठा फल और कभी पका हुआ उत्तम रसदार आ
देता है। इसके अतिरिक्त कोई वैद्य इसके जड़से फोड़ा फुन
अच्छा करता है, कोई उसके छालके काढ़ासे रक्त-विकार
करता है, कोई उसके बौरसे आवाज़ सुधार सकता है, को
उसके फल-पाकके पुष्टि करा सकता है, कोई उसके फल
मुरब्बासे रुचि बढ़ा सकता है, कोई उसके पके हुए पत्तियों
भापसे दर्द दूर कर सकता है और कोई वैद्य केवल उसक
छायासे ही बड़ा लाभ बता सकता है। इस प्रकार आम
प्रत्येक वस्तुका भिन्न भिन्न उपयोग होता है, यह बात सत्य
किंतु प्रत्येक वस्तु उसके देनेवालेकी मर्ज़ीके अनुसार उपयु
प्रकृतिके मनुष्यको लाभ कर सकती है। सब मनुष्योंके लि
सब वस्तु सर्वथा उपयोगी नहीं हो सकती। इसी प्रकार शास्त्र
भिन्न भिन्न अर्थ भी भिन्न भिन्न अधिकारके अनुसार भिन्न
भिन्न लाभ करते हैं, किंतु याद रखो कि शास्त्र सीढ़ीके समान
है अर्थात् जैसे उसमें ऊपर चढ़ा जा सकता है वैसे ही नीचे
भी उतरा जा सकता है, नीचे न उतर जाओ इसका ध्यान
रखो। एक तरफ़ा मर्माल तथा स्वार्थपूर्ण अर्थोंमें न पड़ जाने-
का, दासताके सांकलमें अपने हाथ पैरका बंधनमें न डालने का

...सा करनेका प्रयत्न न होनेका प्रयत्न करो। यदि ऐसा अर्थ हो ...तो हम शास्त्रकी सीढ़ीद्वारा नीचे उतरनेके समान है और यदि ऐसा अर्थ हो जिसमें प्रजाके पुरुषार्थ, लोगोंमें साहस बढ़े, कर्मोंका बन्धन टूट जाय, देशका कल्याण हो, आत्माकी उन्नति हो, ईश्वरका सत्यस्वरूप समझमें आ जाय और जीवका प्रभुके साथ मेल हो, तो हम उस अर्थको ऊपर चढ़ना कहेंगे। इसलिए शास्त्रके अर्थको मारामारीमें नीचे न उतर जानेका तथा ऊपर चढ़नेका प्रयत्न करो, इससे परमकृपालु परमात्मा तुम्हें शास्त्रका सच्चा अर्थ समझनेका बल देगा।

१०१

सत्संगकी मंडलियोंकी आवश्यकता

संसारकी आबादीके लिए, मनुष्य जातिके सुखके लिए और हम ईश्वरी मार्गमें बढ़ सकें इसलिए संसारमें भिन्न भिन्न मंडलियोंकी आवश्यकता है। शहरके सुधारके लिए और लोगोंके स्वास्थ्यको ठीक रखनेके लिए, शहरके आगे बढ़े हुए लोगोंको चुनकर म्युनिस्पलिटीकी सभा स्थापित की जाती है, व्यापारियोंके हक़की रक्षा हो और भीतरकी बाधायें दूर हो सकें, इसके लिए व्यापार-संघ स्थापित किये जाते हैं, प्रजाके राजसंबंधी हक़ोंकी रक्षा करनेके लिए नेशनल कांग्रेस जैसी संस्थायें स्थापित हैं, देशके कल्याणके लिए, राजभक्त बनानेके लिए और प्रजामें शूरवीरताका जोश टिका रखनेके लिए स्वयं-सेवक दल बनाया जाता है, जातिका सुधार करनेके लिए, आपसका संबंध बढ़ानेके लिए तथा एक दूसरेकी सहायता

करनेके लिए भिन्न-भिन्न जातियोंमें भिन्न-भिन्न मित्र मं
स्थापित किये जाते हैं और देशके शासनको उत्तम री
चलानेके लिए पार्लामेण्ट स्थापित की जाती हैं; इसी प्र
संसारमें ईश्वरीय ज्ञान फैलानेके लिए, मनमें शांति ल
लिए, अपना कर्त्तव्य ठीकसे पाल सकनेका बल प्राप्त कर
लिए, आत्माके कल्याणके लिए और ईश्वरका स्वरूप जान
लिए स्थान-स्थानपर हरिजनोंकी सत्संगकी मंडलियाँ ह
चाहिये। दूसरे मंडलोंकी अपेक्षा सत्संग मंडलकी संस्था
अधिक आवश्यकता है क्योंकि इनसे हृदय-स्थित दोषो
दूर करनेका उपाय मिल सकता है, हृदयमें पवित्रता आ जा
है और जैसे भूखा भोजन मिलनेसे तृप्त हो जाता है, ऐसे
प्रभुके गुण-गानसे आत्माको संतोष मिलता है। इसलिए ईश्व
ज्ञान प्राप्त करनेके लिए, ईश्वरका ध्यान सीखनेके लिए, उस
स्वरूप जाननेके लिए और सर्वदा सर्व स्थानपर महान ईश्वर
पवित्र नामका जय जयकार करानेके लिए, हरिजनोंकी मं
लियाँ स्थापित करना चाहिये। यही महात्माओंका उपदेश
शास्त्र एवं ईश्वरकी आज्ञा है। इससे सब भाइयोंको ऐस
सत्संग-मंडलियाँ स्थापित करनेका प्रयत्न करना चाहिये औ
से सर्व कल्याण-कारी कामोंको उत्तेजन देना चाहिये तथ
मे उपयोगी कामोंमें जिससे जो बन सके सहायता करन
चाहिये। यह हम सबका कर्त्तव्य है।

१०२

प्रभु जो करता है अच्छा ही करता है, किन्तु हम इसका भेद समझते नहीं, इससे बड़बड़ किया करते हैं

एक बड़ा राजा था। उसके पास एक बड़ा तथा सुंदर उपवन था। एक दिन रानीकी इच्छा इस उपवनकी सैर करने की हुई, जिससे सन्ध्या समय वह अपने सखियोंके साथ वहाँ गयी। घूमते घूमते उसने एक बड़ा सुंदर पुष्प देखा, जिसे तोड़नेकी उसे उत्कट इच्छा हुई और उसने जाकर स्वयं उस पुष्पको तोड़ लिया। वहाँपर उपवनकी रखवाली करनेवाला एक अरब सिपाही उपस्थित था। उसने रानीके पास जाकर अपनी भाषामें कहा कि इस पुष्पको तोड़ो मत, किन्तु रानी साहबने उसकी भाषा समझा नहीं, क्योंकि उस अरबकी भाषा वे जानती न थीं और अरब उस देशकी भाषा नहीं जानता था, रानीजी पुष्प तोड़कर सूंघने जा ही रही थीं कि उस अरबने उसे छीनकर अपने पैरके नीचे कुचल डाला। यह देखकर रानी बड़ी क्रुद्ध हुई। उसने तमतमाकर पूछा कि यह क्या बात है? एक मामूली नौकर मेरे हाथके पुष्प छीन ले और अपने पैरके नीचे कुचल डाले? गजब! गजब! ऐसा अपमान तो एक गरीब मनुष्य भी नहीं सह सकता तब मैं तो एक रानी हूं! मेरा उपवन होनेपर भी मुझे एक पुष्प तक तोड़नेका अधिकार नहीं! उसे बहुत दुख हुआ और वह रिसाकर बैठ गयी। राजाने महलमें आकर पूछा—क्यों, घूम आयी? रानीने उत्तर दिया—बलिहारी है तुम्हारी उपवनकी और मेरे भाग्यकी! तुम्हारी ऐसी आज्ञा कि मैं एक पुष्प भी न तोड़ सकूँ? एक

तीन कौड़ीका नौकर मेरे हाथसे मेरा पसंद किया हुआ पुष्प छीन ले और अपने पैरके नीचे मेरे ही सामने कुचल डाले! महाराज ऐसा अपमान तो एक लौंड़ी भी सहन नहीं कर सकती। इस प्रकारकी बातें रानीने बहुत सी कही जिसमें राजाको भी नौकरपर क्रोध चढ़ आया, उसने नौकरको बुला कर पूछाकि तूने रानीको देखा है कि नहीं? रखवालाने उत्तर दिया—हाँ साहब! देखा है। राजाने कहा—तब तूने उनका अपमान क्यों किया? रानीके हाथसे फूल छीनकर तूने अपने पैरके नीचे कुचल डाला, यह बात क्या सत्य है? सिपाही—जी हाँ! सत्य है। राजा—जरा विचार तो कर, मेरी रानीको क्या तू हाथ लगा सकता है? इस अपराधके लिए तुझे दंड दिया जायगा। तब उसने कहा—हुजूर! किन्तु इसका कारण तो सुन लीजिये। यह फूल मेरे देशका है, इससे मैं इसका गुण जानता हूँ और रानी साहब उसे नहीं जानतीं। यह फूल बड़ा ज़हरीला है। इसे सूंघते ही मनुष्य मर जाता है। इसीलिए मैंने रानी साहबसे पहले तोड़नेके लिए मना किया, किन्तु उन्होंने सुना नहीं और उसे तोड़कर सूंघने जा रही थीं कि मैंने छीन लिया। यदि उन्होंने जरासा भी सूंघ लिया होता तो वे अवश्य मर जातीं। इस फूलकी ऊपरी सुंदरता बड़ी मनोहर है, इससे कोई उसपर लुब्ध होकर उठा ले, इसलिए मैंने उसे कुचल डाला। यह भीतरी भेद सुनकर राजा-रानी दोनों बड़े आश्चर्यान्वित हुए। अनन्तर राजाने रानीकी ओर देखकर कहा-तुमने इसकी भाषा समझा नहीं, इससे ऐसा हुआ है। इसका हेतु तुम्हारा अपमान करना नहीं था बल्कि दूसरा कोई उपाय न होनेसे तुम्हारे प्राण बचाना था अब तो तुम्हें इसे उलटे इनाम देना चाहिये। यह सच्ची बात सुनकर रानीका क्रोध

र गया तथा इसके पश्चात् वे चौकीदारपर अधिक प्रेम
ने लगीं।

माइयो! इसी प्रकार हम एक दूसरेकी बोली न समझ
ते हैं और न एक दूसरेका हेतु ही जान सकते हैं, तब सर्व-
क्तिमान महान प्रभुका भेद हम कैसे कह सकते हैं? हमें
न्दी न लगनेवाली नवीन स्थितिमें पड़ जानेपर हम भी
रोक रानीके समान व्यर्थका क्रोध करके अपना मन बिगा-
हैं और बुरे-बुरे विचारोंमें पड़कर हम हैरान होते हैं।
यो! प्रभु जो करता है अच्छा ही करता है, किंतु हम
का भेद समझते नहीं, ऐसा विश्वास रखना सीखो, इससे
-दुखमें आनन्दपूर्वक रह सकोगे।

पद

राम रखे वैसे रहिये ऊधवजी, राम रखे वैसे रहिये।
हम तो चिट्ठीके चाकर हैं—ऊधवजी॰
कोई दिन पहेरन हीरभर चीर,
तो कोई दिन पटुआ पहरिये—ऊधवजी॰
कोई दिन भोजन क्षीर अरु पूरी,
तो कोई दिन भूखा भी रहिये—ऊधवजी॰
कोई दिन रहनेको बाग बगीचा,
तो कोई दिन जंगल रहिये—ऊधवजी॰
कोई दिन सोवेको गद्दी व तकिया,
तो कोई दिन भुइं पर सुइये—ऊधवजी॰
बाई मीरा कहे प्रभु गिरधरके गुण गो,
सुख दुख सबमें सहिये—ऊधवजी॰

१०३

भक्तोंको बड़ा आनन्द मिला रहता है जिससे वे सबको आनन्द देना चाहते हैं

एक मनुष्यने कोई अपराध किया था जिसके लिए सरकारने उसे कैद कर दिया। कैदखानाके दुखोंको देखकर उसे बड़ा कष्ट हुआ, जिससे उसने प्रतिज्ञा की कि कैदमेंसे छूटने पर दूसरोंको भी छुड़ाऊँगा। मुद्दत पूरी होनेपर जब वह कैदसे छूटा तो पहला काम उसने यह किया कि पकड़े हुए सुग्गोंको खरीदकर उसमेंसे एक एकको उड़ाने लगा। खुशीसे आवेशमें आकर सुग्गोंको जोश भर उड़ता हुआ देखकर आनन्दसे नाचने लगा। यह देखकर उसके एक मित्रने कहा—यह क्या कर रहे हो? जेल भोग कर भी अभी नहीं सूझा? घरका रुपया खर्चकर सुग्गोंको क्या इस प्रकार उड़ाता है? अब तो कुछ समझो।

उसने उत्तर दिया—भाई! बँधे हुओंका बंधन मुक्त करनेसे उन्हें कैसा आनन्द मिलता है, इसे तुम क्या जानो? इसका सच्चा अनुभव तो उसे ही है जो बंधनमुक्त हो गया है और दूसरोंको बंधनसे छुड़ाता है। मैं आज तक कैदमें था इससे मुझे मालूम है कि जेल कैसा दुखदायी है और अब छूटा हूँ तो अनुभव करता हूँ कि स्वतंत्रता क्या चीज है, इससे दूसरोंको भी कैदसे छुड़ाना चाहता हूँ किन्तु अफसोस है कि अभी मुझसे और कुछ भी नहीं हो सकता, इससे बंधनमें पड़े हुए सुग्गोंको ही मुक्त कर संतोष करता हूँ।

भाइयो! इसी प्रकार इस मनुष्यके सदृश हम भी पाप करनेवाले अपराधी हैं, हम मोहके बंधनमें, रागद्वेषकी

बंधनमें, अहंकारकी फंदेमें तथा जन्म-मरणके नरकमें पड़े हुए हैं किन्तु हमारे प्राचीन ऋषि तथा आचार्यगण इस सम्बन्धमें मुक्त हो गए थे और आनन्दके अवतार बन गए थे, इसीसे वे सबको आनन्द देना चाहते थे और दूसरोंके बंधनोंको काटकर उन्हें स्वतंत्रताका आनन्द देकर परमकृपालु परमात्माका अमृत पान करानेमें ही वे अपना जीवन व्यतीत करते थे। इसीके लिए—लोगोंको बंधन-मुक्त करनेके लिए ही—महात्मा बुद्धने राज्य छोड़ा था। इसीके लिए स्वयं मुक्त होनेपर भी योगेन्द्र श्रीकृष्ण भगवानने भक्तोंके साथ रासक्रीड़ा की थी और पांडवोंको शिक्षा देनेके लिए ही राज्यभार ग्रहण किया था। इसीलिए रामने वनवास लेकर राक्षसोंको मारा था, शङ्कराचार्यने छोटी उम्रमें संन्यास लेकर नास्तिकोंको हराया था, रामानुजने दासभाव स्वीकार कर लोगोंको तारा था और वल्लभाचार्यने प्रभुको समर्पण कर जीवन वितानेका सेवाधर्म चलाया था क्योंकि स्वयं मुक्त होकर मनुष्योंको भी बंधनसे छुड़ानेसे कितना पुण्य होता है और कितना आनन्द मिलता है, यह बात वे जानते थे और इसी प्रमाणसे वे चलते भी थे, जिससे वे पूजनीय हैं। भाइयो ! हम ऐसे यदि न हो सकें तो कोई चिंता नहीं, किन्तु अपनी शक्तिके अनुसार अपने घरमें, लड़कोंमें, वैरीमें तथा अपने सगे-संबंधियों और अपने सेठ या नौकरोंमें यदि हम भक्ति फैला सकें तो भी हमने बहुत किया, ऐसा समझना चाहिये। इस प्रकार दूसरोंको भक्तिका आनन्द देनेसे हृदयको दिलासा मिल सकता है और यदि ऐसा न हो सके तो उन महात्माओंके पास चलो जो अपना आनन्द लुटा रहे हैं, वहाँसे कुछ ले आयें। ऐसा करनेसे भी प्रभु हमारी भावनाके अनुसार फल देगा। यदि बंधनसे मुक्त होना है तो भक्तोंसे

आनन्द लेकर अपने दूसरे भाई बहनोंमें फैलानेका प्रयत्न करो इससे धीरे धीरे पूर्ण ईश्वरी आनन्द मिल सकेगा।

१०४

हमने इस जगतमें ईश्वरको जाननेके लिए जन्म लिया है

ईश्वरको जानना अर्थात् ईश्वरमें मुख्य कौन कौनसे गुण हैं, उसकी इच्छा क्या है तथा ईश्वरी ज्ञान प्राप्त करनेके कौन कौनसे साधन हैं? यह सब समझ लेनेका नाम ही ईश्वरी ज्ञान है।

ईश्वरका ज्ञान हमें गुरु तथा शास्त्र द्वारा मिल सकता है, तो भी यह अधूरा है। ईश्वरका सच्चा ज्ञान तो हरिकी सेवामें रहनेवाले मुक्त महात्माओंको ही होता है, हमारा ज्ञान तो नकशामें गांव देखनेके समान है और मुक्त महात्माओंको तो उस स्थानका देखा हुआ अनुभव होता है, इससे उनके जैसा सच्चा ज्ञान हमें नहीं हो सकता; परन्तु ऐसा सच्चा ज्ञान भविष्यमें प्राप्त करनेके लिए हमें अभीसे भगवद्ज्ञान अथवा ब्रह्मज्ञान जिसे कहते हैं-यह प्राप्त करनेका प्रयत्न करना चाहिये।

इस ब्रह्मज्ञानका ज़रा भी अंश जिसके हृदयमें नहीं है, उसके घर चाहे जितना वैभव क्यों न हो, वह सुखसे रह नहीं सकता, क्योंकि सुखका सागर और शान्तिका समुद्र तो प्रभु ही है, वह जिसके हृदयमें रहे उसे किसी स्थितिमें और किसी भी स्थलपर दुःख नहीं रह सकता।

ईश्वरका ज्ञान आत्माकी खुराक है। यह खुराक जितनी देर तक आत्माको नहीं मिलती उतनी देर तक आत्मा भूखी

दुखी व असन्तुष्ट रहती हैं; इसलिए जिसके अन्तरमें शांतिदाता ईश्वरी ज्ञान न हो, उसे सांसारिक बहुतसे सुख होनेपर भी शांति नहीं मिलती और ईश्वरी ज्ञान बिना दुखके समयमें दिलासा लेनेका स्थान उन्हें मिलता नहीं। याद रखो कि जिसे ईश्वरका सत्य ज्ञान या पूर्ण श्रद्धा नहीं है वह हृदयमें कभी भी सुखी न होगा। बाहरसे चाहे वह सुखी दिखता हो, किन्तु हृदयमें तो सदा होली ही जला करती है।

इस जगतमें बहुतसे पाप होते हैं, इसका मुख्य कारण ईश्वरी ज्ञानका अभाव ही है। इस अभावके कारण ही अभिमान क्रोध, धनका लोभ, दूसरोंको बिगाड़नेमें वीरता और सदा मज़ा उड़ानेकी हृदयमें इच्छा होती है।

जिस देश या लोकमें ईश्वरका ज्ञान नहीं होता, वहीं सबसे अधिक मारामारी, गाली गलौज़, चोरी, व्यभिचार तथा ऐसे ही और बहुतसे पाप होते हैं।

कैदखानेमें जाकर देखनेसे मालूम होता है कि वहां ऐसेही मनुष्य हैं जिन्हें ईश्वरका ज्ञान नहीं है, इसलिए याद रखो कि जिस देश, जाति या गांवमें ईश्वरके ज्ञान तथा भक्तिभावकी कमी होती है, वहीं अधिक पाप होते हैं, इससे प्रत्येक मनुष्यको ईश्वर-ज्ञान प्राप्त करनेकी आवश्यकता है। आजकल सबसे देशमें बहुत सी बातोंमें ज्ञानका प्रचार होता है यह बड़ी प्रसन्नताकी बात है, किन्तु जब तक मनुष्यों के हृदयमें ईश्वरी ज्ञान न हो तब तक उसे सच्चा सुख प्राप्त नहीं होता। इस विषयमें उपनिषदमें कहा है:—

ईश्वरका अधिक ज्ञान प्राप्त करनेके लिए शिष्यको गुरुके पास जाना चाहिये और ज्ञानी गुरुको शांत तथा कार्य-रत

अन्तःकरणवाले शिष्यको अविनाशी सत्य ईश्वरका ज्ञान हो, ऐसी विद्याका उपदेश देना चाहिये।

ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छंद और ज्योतिष आदि विद्यायें पढ़ लेने पर भी यदि ईश्वरको न देख सके तो वह श्रेष्ठ मनुष्य नहीं है। मतलब कि जबतक ये सब विद्यायें पढ़ लेने पर भी यदि ईश्वरको न देख सके तो वह श्रेष्ठ मनुष्य नहीं है। मतलब कि जब तक ऐसा न हो तब तक ये सब विद्यायें पे भरनेके लिए या बुद्धिका विस्तार करनेके लिए हैं; जिससे ईश्वरका स्वरूप मालूम हो और मोक्ष मिले, उस ब्रह्मविद्याको उस ईश्वरी ज्ञानको—ही ऋषिओंने श्रेष्ठ विद्या कहा है।

भलेही लाखों रुपयेका प्रबंध करने आता हो, भलेही देश का सब कानून जाननेवाले वकील हो, संसारकी भिन्न-भिन्न भाषा जानने वाले हो, चेहरा देखकर चोर पकड़ सकते हो देश परदेशके इतिहासवेत्ता हो, मनुष्यका हाथ देखकर जीवन की बातें कह देने वाले हो, आकाशके ग्रहोंकी चालको देखकर जगतमें होने वाले सब वृत्तांतको बताना भलेही आता हो, जमीन देखकर सोना रूपाकी या हीराजवाहिरकी खान बताना भलेही आता हो, किन्तु इससे क्या होता है? यद्यपि इस प्रकारके ज्ञानकी भी मनुष्योंको आवश्यकता है, किन्तु यह सब जान लेने परभी जब तक हृदयमें ईश्वरका सत्य ज्ञान न हो तब तक सच्चा सुख या आत्माको शान्ति मिलती नहीं, इसलिए प्रत्येक मनुष्यको दूसरे ज्ञानके साथ ईश्वरी ज्ञान प्राप्त करनेकी आवश्यकता है।

१०५

जब तुम्हारा कोई भी उपाय न चले और सब कुछ करके हार जाओ तब निराश न होकर प्रार्थना करो

एक भली स्त्री थी। उसका लड़का बहुत खराब सोहबतमें पड़ गया था जिसे सुधारनेके लिये वह बड़ा परिश्रम करती थी। समयपर उसे शिक्षा देती, अच्छे अच्छे दृष्टान्त देती, बुरी चालसे कितनी आफत चली जाती है, भविष्यमें उससे होनेवाली खराबीको बताती, बारंबार धमकाती, जब हो सकता, बुरी सोहबतमें जानेसे रोकती तथा उसे सुधारनेके लिए किसी बातमें चूकती न थी, किन्तु किसी उपायसे भी वह सुधरा नहीं। अंतमें हारकर उस स्त्रीने एक महात्मासे पूछा कि महाराज! मेरा लड़का बुरी सोहबतमें पड़ गया है और किसी प्रकारसे सुधर नहीं रहा है। मैंने बहुतसे उपाय किये किन्तु उसपर कुछ असर नहीं होता और जब तक वह सुधरेगा नहीं, तब तक मुझे शांति न मिलेगी, इसलिए कोई रास्ता बतानेकी कृपा कीजिये।

महात्माने कहा—बेटी! प्रभुकी प्रार्थना कर और कह कि मेरे लड़केको सद्बुद्धि दो, इससे वह ठीक हो जायगा। स्त्री भावुक स्वभावकी थी तो भी महात्माकी यह बात सुनकर उसके मनमें शंका उत्पन्न हुई। उसने सोचा कि ऐसा लफंगा लड़का प्रार्थनासे कैसे सुधरेगा। मारको कुछ समझता नहीं, उपदेशको गिनता नहीं, आबरूकी परवाह नहीं करता और धर्मके सम्बन्धमें भी कुछ नहीं जानता, वह प्रार्थनासे कैसे सुधर सकेगा? ऐसा सोचती हुई जैसे कुछ कहना चाहती है, इस

प्रकार वह स्त्री महात्माकी ओर देखने लगी। यह देखकर महात्माने कहा—बेटी! प्रार्थनाके बलके विषयमें किसी प्रकारकी भी शंका मत रखो। जो कार्य बड़े बड़े लश्करोंसे नहीं होता, वह प्रार्थनासे होता है, जो बचाव बड़े बड़े किलोंसे नहीं होता, वह प्रर्थनासे होता है, जो जीवन सैकड़ों प्रकारकी विद्यासे नहीं सुधर सकता, वह थोड़ी प्रार्थनासे सुधर जाता है, जो भयंकर शत्रु दूसरे किसी प्रकारसे नहीं हारता, वह प्रार्थनासे हार जाता है, जहाँ किसी भी प्रकारके सहायताकी आशा न हो, वहाँ प्रार्थनासे प्रत्यक्ष सहायता आजाती है, जहाँ दुखके अन्धकार के अतिरिक्त और कुछ दिखाई नहीं पड़ता, वहाँ प्रार्थनासे अविरत सुखकी प्रकाशित किरणें आ पड़ती हैं, और जहां चारो ओर पापकी अग्नि जलती हो, वहाँ भी प्रार्थनासे हृदयको आश्वासन मिल सकता है; और प्रार्थनासे ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त हो सकती हैं, देव वशमें हो सकते हैं, मनुष्य देव बन सकता है, प्रार्थनासे मनुष्य स्वर्गका राज्य भोग सकता है और प्रार्थनासे मनुष्य प्रभुकी सेवामें जा सकता है। तब प्रार्थनाके बलसे यदि तेरा लड़का सुधर जाय तो क्या कोई बड़ी बात होगी? बेटी! विश्वासपूर्वक पवित्र भावसे सर्वशक्तिमान महान प्रभुका नाम स्मरण कियाकर, इससे समय आनेपर तेरा विचार सफल हो जायगा, क्योंकि पवित्र शास्त्रोंके द्वारा दयालु प्रभुने स्वीकार किया है कि अपने भक्तोंकी इच्छाओंको मैं पूर्ण करता हूँ; इसीलिए प्रभुमें तन्मय होकर प्रार्थना कर, इससे मनोवांछित फल मिलेगा।

इसके पश्चात् वह इसी प्रकार करने लगी, जिससे थोड़ेही समयमें संयोग बदल गया और वह लड़का सुधर गया। प्रार्थनामें ऐसा महान् बल है, इसलिए भाइयो! अब किसी

कामें सब ओरसे हार जाओ तो निराश न होकर शुद्ध अंतः करणसे प्रार्थना किया करो, प्रार्थना किया करो।

१०६

प्रभुके स्वरूपके विषयमें वाद-विवाद करना व्यर्थ है। जिस कामके लिए उसने हमें यहाँ भेजा है वही करना अपना तो कर्त्तव्य है

एक महाराजाधिराजका बड़ा महल बन रहा था जिसके लिए उसने हजारों मजदूरोंको रखा था, किन्तु राजा अपनी राजधानीमें ही रहता था और महल पासके गाँवमें बन रहा था जिससे हजारों मजदूरोंमेंसे किसीनेभी राजाको देखा न था। इतना बड़ा महल, इतना खर्च और अद्भुत कारीगरी देखकर बहुत से मजदूर आपसमें बातें करने लगे कि जिसका इतना बड़ा महल है वह स्वयं कितना बड़ा होगा? और कैसा अच्छा कपड़ा पहनता होगा? तब दूसरेने कहा कि वह तो छोटेसे छोटा है और बिलकुल सादा वस्त्र पहनता है। तब एक मौयांजीने कहा—इसकी दाढ़ी कैसी अच्छी होगी? इसपर एक ब्राह्मणने कहा—वह दाढ़ी नहीं रखता, इसके माथेपर चुटिया है। एकने कहा—इसकी नज़र [illegible] रखती होगी तो दूसरेने कहा कि वह नज़र [illegible], वह तो अपने महलमें [illegible] कि वह बहुतही [illegible] यदि वह मना और [illegible]? एकने कहा

कि हाथमें लकड़ी रखता है तो दूसरेने कहा यह कुछ रखताही नहीं। एकने कहा कि यह बड़ा प्रेमी है तो दूसरेने कहा कि कड़ी शिक्षा देनेवाला है। एकने कहा—यह बुड्ढा है तब दूसरेने कहा, नहीं, नवयुवक है, तो तीसरेने कहा, वहतो अभी बालक है। तब चौथेने कहा-अरे यारो! क्यों व्यर्थकी माथापची करते हो? कुछ भी नहीं है। इस प्रकार वादविवाद करनेमें उनका दिनभर व्यर्थ नष्ट हो गया और अन्तमें वे आपसमेंही लड़ पड़े और संध्या हो गयी, तब संध्यासमय राजाके सिपाही उन सब मजदूरोंको पकड़कर अमलदारके पासले गये और बोले—महाराजका महल बनानेके लिये इन लोगोंको रखा था किन्तु इनलोगोंने कुछ भी काम नहीं किया उलटे आपसमें लड़ रहे हैं, इससे इन्हें सज़ा देना चाहिये। इसपर अमलदारने पूछा-बोलो तुम लोग क्या कहते हो? काम क्यों नहीं किया? उन सब मजदूरोंने अपनी अपनी बातें कह सुनायीं और कहा कि हुजूर! हम सब महाराजकीही बात करते थे। दूसरी कोई खराब बात नहीं कर रहे थे, इसीमें हम लोग रह गये जिससे काम न हो सका। यह सुनकर न्यायाधीशने कहा-इस बहानेसे काम नहीं चलेगा। तुम लोग काम करनेके लिये रखे गये हो कि बात करनेके लिये? क्या तुम जानते नहीं कि हमारे महाराज बड़े कृपालु हैं और वे सबको समय आनेपर दर्शन देते हैं। समय आनेके पहले और योग्यता प्राप्त करनेके पहलेही दाढ़ी है कि चुटिया? आदि आदि कह कर तुम्हें लड़नेकी क्या आवश्यकता है? महाराज दाढ़ी रखें तो भी तुमसे क्या मतलब और चुटिया रखें तो तुम्हारा क्या गया? तुम्हें जो काम सौंपा गया है उसे ठीक तौरपर करनाही तुम्हारा कर्त्तव्य है कि ऐसी ऐसी बातें करना तथा आपसमें

हराई करना और सौंपा हुआ काम न करना तुम्हारा कर्त्तव्य है! क्या मुँह लेकर तुम सब यहाँ आये हो? तुम सब बड़े नालायक हो! मुंशी जी! इन सभोंका आजका रोज काटलो और जेलरको हुक्म दो कि जिन्होंने काम नहीं किया है उन्हें दस बेंत लगायें और जिन्होंने काम भी नहीं किया है और लड़ाई भी की है उन्हें बीस बेंत लगायें।

भाइयो! तुमने क्या समझा? यह राजा और कोई नहीं वही परमात्मा है। उसका यह सुविस्तृत महल यह संसार है। इस महलमें काम करनेवाले मजदूर हमलोग हैं। सिपाही यमके दूत हैं। न्याय करनेवाला न्यायाधीश धर्मराज हैं, दिवस हमारी जिन्दगी, संध्याकाल हमारे मौतका समय है, कैदखाना नरक है और राजाकी राजधानी मोक्षधाम है, किन्तु इन सब बातोंको भुलाकर सर्वशक्तिमान महान प्रभुने हमें जो काम करनेके लिए यहाँ भेजा है, उन्हें हम करते नहीं और जिसका हमें अनुभव नहीं है उनपर वादविवाद करनेमें तथा लिपर झगड़ा करनेमेंही अपना जीवन बिता देते हैं। इसलिए भाइयो! चेतो, जानबूझकर नरकमें जाना पसन्द न करो। दयालु प्रभुने जो काम करनेके लिये हमें यहाँ भेजा है उसेही करना हमारा कर्त्तव्य है। इसके बदलेमें यदि धर्मके झगडेमें और कलहकी बातोंमें पड़े रहोगे तो अन्तमें नरकमें जाना पड़ेगा और यमका डंडा खाना पड़ेगा। ऐसा न होने देनेके लिये व्यर्थके वादविवादमें न पड़े रहकर सर्वशक्तिमानकी आज्ञाका पालन करनेका प्रयत्न करो और यदि ईनाम लेनेकी इच्छा हो तो इस जगतरूपी महलमें यथा शक्ति सुन्दरता बढ़ाओ, इससे समय आनेपर ईश्वरका अलौकिक स्वरूपका

ज्ञान हो जायगा, इसलिए केवल बातोंमेंही पड़े न रहकर कर्तव्य पालनमें लगे रहो, इससे थोड़े थोड़े समझमें आ जायगा कि-

दोहा

निराकार निर्गुण प्रभु, तदपि सगुन धर देह।
भक्त हेत माया चरित सेवक भक्त सनेह॥
निर्विकल्प व्यापक सब, न्यायकर निर्वैर।
सबको जैसी भावना, तैसो फल देहिं फेर॥
जिन पापनका अंत है, तिन भक्तोंका देश।
जिन देहका दुःख है, कहे कबीर सन्देश॥
पैर धरे इच्छा धरे, धड लगे शीश लेश।
सीसाटो जहँ गम नहीं, तहँ सतगुरुका देश॥

१०७

'रोपे पेड़ बबूलको आम कहाँ ते होय'

एक महाराज महाराज कहते थे कि बहुतसे लोग या कहते हैं कि भक्तिका फल तुरतही मिलता नहीं। यह सु मुझे बड़ा दुःख होता और सोचता कि हमारे उत्तम धर्ममें निकृष्ट विचार आया कहाँसे? क्योंकि धर्मका फल तुरत नहीं मिलता, ऐसा मान लेनेसे हमारी श्रद्धा ढीली पड़ जाती है, धर्मका मूल्य कम हो जाता है, मन निर्मल पड़ जाता है, पुरुषार्थ कम हो जाता है, ज्ञान संकुचित हो जाता है तथा ईश्वरके साथ हमारा संबंध ठंडा पड़ जाता है, और भक्तिका फल तुरतही नहीं मिलता, यह मानना अपने धर्मका और सर्वशक्तिमान ईश्वरका अपमान करनेके बराबर है। यह धर्म

हो किस कामका जो तुरत फल न दे? यह तो अधूरा धर्म कहा जायगा। फिर सब प्रकारके फलका दाता अनन्त ब्रह्मांड-के नायके यहाँ कमी किस बातकी है कि यह हमारे भक्तिका मूल्य उधार रखेगा? मेरा विश्वास और अनुभव है कि भक्ति-का फल तुरतही मिलता है और शास्त्र तथा महात्मागणभी ऐसाही कहते हैं तथा देवताओंका भी यही अनुभव है, तिसपर भी बहुतसे लोग कहते हैं कि भक्तिका फल तुरतही नहीं मिलता। जहां तहां यह बात बारंबार सुननेसे मैंने विचार किया कि लोगोंके ऐसा कहनेका कारण क्या है? तब मेरी समझमें आया कि मनुष्य एक जातिका बीज बोते हैं और अपनी अज्ञानतासे दूसरे प्रकारके फलकी आशा करते हैं।

जैसे कि एक स्त्रीने कहा था कि जब तब मेरा मन बड़ा उदास हो जाता है, जीव घबड़ाने लगता है, अनेक प्रकारकी चिंतायें घेर लेती हैं, माथा भारी हो जाता है और निष्कारण रुलाई आया करती है, इससे मैंने अपने पुरोहितसे जीवके इस प्रकार उदास होनेका कारण तथा उसका उपाय पूछा? पुरोहितने कहा कि तुम्हारे ग्रह बड़े खराब हैं तथा शनि तुम्हें सताया करता है, इसलिये प्रति शनिवारको हनु-मानजीको तेल चढ़ाया करो तथा सोनेकी मूर्ति सहित शनिका दान दो तो तुम अच्छी हो जाओगी। इसपर चार रत्तीकी सोनेकी मूर्ति, सवा सेर उर्द, सवा हाथका एक काला कपड़ा तथा सवा पाव तेलका दान मैंने दिया तथा आज दो वर्षसे बराबर प्रति शनिवारको हनुमानजीको एक पैसेका तेल चढ़ाती हूं तो भी मेरी तबीयत ठीक नहीं रहती। कौन जाने क्या बात है कि मेरी भक्ति फलीभूत नहीं होती और हनुमानजी मेरे ऊपर प्रसन्न नहीं होते।

भाइयो ! अब विचार करो कि व्यापार करने आये नहीं, व्यापारमें ध्यान दें नहीं, बाज़ारका रंग समझे नहीं, मूर्खोंपर विश्वास रखकर तथा स्वप्नोंपर भरोसा करके काम करें और मनमें ऐसी आशा रखें कि माताजी सहायता करेंगी, नवरात्रकी भक्ति व्यर्थ न जायगी, तो इन सबका परिणाम और क्या होगा ? इससे तो अवश्य सब नष्ट हो जायगा, इसमें भक्तिका क्या दोष ? इन कारणोंको समझे बिना, आस-पास देखे बिना, और जो युक्ति करना चाहिये उसे किये बिना अपने भूलोंका, निर्बलताका, अभिमानका, स्वार्थका तथा अपनी मूर्खताका सब दोष हम धर्मपर ही लाद देते हैं और कहते हैं कि धर्मका फल तुरत और ठीकसे मिलता नहीं, किन्तु याद रखो कि ऐसा करना पवित्र धर्मका तथा सर्वशक्तिमान परमपवित्र परमात्माका बड़ेसे बड़ा अपमान करना है, इसलिए धर्मका फल तुरत नहीं मिलता यह मान बैठनेके पहले हमें कौनसा फल चाहिये, उसके लिए हमें क्या करना चाहिये और हमने क्या किया आदि बातोंपर पहले विचार करना चाहिये। हमें कौनसा फल चाहिये और कौनसा बीज बो रहे हैं इसकी खोज करो तथा आँख दुखती हो तो पाँवको बाँधनेका प्रयत्न मत करो यदि इन सब बातोंपर विचार करोगे तो तुरतही समझमें आ जायगाकि महान्यायी ईश्वरके राज्यमें किसीका भी परिश्रम व्यर्थ नहीं होता और भक्तिका फल तो तुरत ही मिलता है। इसलिए समझ-बूझकर प्रेमपूर्वक भक्ति करो और विश्वास रखो कि भक्तिका परिश्रम व्यर्थ न जायगा, जैसा कि प्रभु प्रेमी महात्मा गण कह गये हैं:—

दोहा

तुलसी सत्य न छोड़िये, निश्चय कीजे काम।
मनुष्य मजूरी देत है, क्यों राखेगो राम॥
राम झरोखे बैठ के, सबका मुजरा लेत।
जैसी जिनकी चाकरी, तैसा तिनको देत॥

१०८

प्रभुका गुण गानेसे तप करनेका फल मिलता है

भाइयो! तप करनेका हेतु इन्द्रियोंको वश करना, मनको जीतना, जीवको ईश्वरमय करना और आत्माका परमात्माके साथ संबन्ध जोड़कर अलौकिक आनन्द लूटना है और इसीके अनुसार कार्य हो, यही तप करनेका फल है, ये सब फल प्रभुका गुण गानेसे भी मिलते हैं। इससे विकार कम होते हैं, मन वशीभूत होता है, हृदयमें आनन्द आता है और जीव ईश्वरमें तल्लीन होता है, इसलिए शास्त्रमें कहा है कि प्रभुका गुणगानेसे तप करनेका फल मिल जाता है क्योंकि तप सबसे नहीं हो सकता किन्तु प्रभुका गुणगान सबसे हो सकता है, इसलिए महात्माओंने भी तपकी अपेक्षा ईश्वरके गुणगानको श्रेष्ठ माना है। इससे भाइयो! सर्वशक्तिमान, सच्चिदानन्द मोक्षदाता, परमकृपालु परमात्माका गुण गाओ और परमात्माका नाम स्मरण करो क्योंकि नाम स्मरणसे ही तप करनेका एवं दूसरे सब फल आ जाते हैं, किन्तु वह नामस्मरण कैसे होना चाहिये, यह तुम्हें क्या मालूम है! इसके लिये ये पद रचे हैं:—

दोहा

राम नाम सब कोई कहे, ठग ठाकुर और चोर।
बिना प्रेम रीझे नहिं, तुलसी नंदकिशोर॥
माला फेरत जन्म गयो, गयो न मनको फेर।
करका मनका छोड़कर, मनका मनका फेर॥
माला तो करमें फिरे, जीभ फिरे मुख माहिं।
मनवा तो दश दिश फिरे, ये तो सुमरन नाहिं॥
सुमरनकी सुधि यों करो, जैसी कामी काम।
एक पलक बिसरे नहिं, निशदिन आठो जाम॥
सुमरनकी सुधि यों करो, ज्यों गागर पनीहार।
हाले चाले सुरतमें, कहे कबीर विचार॥
सुमरनकी सुधियों करो, ज्यों सुरभि चित सुतमाहिं।
कहे कबीर चारो चरत बिसरे बछु नाहिं॥
सुमरनकी सुधि यों करो, जैसे दाम कंगाल।
कहे कबीर बिसरे नहिं, पल पल ले संभाल॥
तुलसी छल बल छोड़िके, करिये राम सनेह।
अंतर कहो मरयार सो, जिन देखी सब देह॥

१०६

जो ऊँचे चढ़ता है उसे प्रभु नीचे गिराता है और जो नीचे उतरता है उसे ऊपर चढ़ाता है

इस दुरङ्गी दुनियाँमें एकही प्रकारके मनुष्य नहीं होते बड़े विचित्र स्वभावके मनुष्य होते हैं, इनमेंसे बहुतोंको धर्मकी ओर होती है और बहुतसे धर्मकी, चेष्टामात्र कर वाले होते हैं। इन्हींमें से एक अभिमानी मनुष्यने किसी भक

दोहा

राम नाम सब कोई कहे, ठग ठाकुर और चोर।
बिना प्रेम रीझे नहिं, तुलसी नंदकिशोर॥
माला फेरत जुग गयो, गयो न मनको फेर।
करका मनका छोड़कर, मनका मनका फेर॥
माला तो करमें फिरे, जीभ फिरे मुख माहिं।
मनवा तो दश दिश फिरे, ये तो सुमरन नाहिं॥
सुमरनकी सुधि यों करो, जैसी कामी काम।
एक पलक बिसरे नहिं, निशदिन आठो जाम॥
सुमरनकी सुधि यों करो, ज्यों गागर पनीहार।
हाले चाले सुरतमें, कहे कबीर बिचार॥
सुमरनकी सुधियों करो, ज्यों सुरभि चित सुतमाहिं।
कहे कबीर चारो चरत बिसरे वह्नु नाहिं॥
सुमरनकी सुधि यों करो, जैसे दाम कंगाल।
कहे कबीर बिसरे नहिं, पल पल ले संभाल॥
तुलसी छल बल छांड़िके, करिये राम सनेह।
अंतर कहो भरथार सो, जिन देखी सब देह॥

१०६

जो ऊँचे चढ़ता है उसे प्रभु नीचे गिराता है और जो नीचे उतरता है उसे ऊपर चढ़ाता है

इस दुरङ्गी दुनियांमें एकही प्रकारके मनुष्य नहीं होते। बड़े विचित्र स्वभावके मनुष्य होते हैं, इनमेंसे बहुतोंकी रुचि धर्मकी ओर होती है और बहुतसे धर्मकी, चेष्टामात्र करते वाले होते हैं। इन्हींमें से एक अभिमानी मनुष्यने किसी मक्के

दोहा

ऊँचे पानी ना टिके, नीचेही ठहराय।
नीचे होय सो भरपीये, ऊँच पियासा जाय॥
लघुतासे प्रभुता बढ़े, प्रभुता से प्रभु दूर।
कीड़ो मिसरी खात है, हस्ती फाँकत धूल॥

११०

यह कैसे समझ सकते हैं कि प्रभुके मार्गपर चलनेके लिए जीव जागा है कि नहीं

सर्वशक्तिमान परमात्माकी इच्छा यही है कि सर्वजीवोंकी उन्नति हो तथा मनुष्य सम्पूर्णताको प्राप्त हों अर्थात् अनंत कालका मोक्षधाम प्राप्त करके वहाँका अपरम्पार सुख भोगें। इसीके लिए दयालु प्रभुने जीवोंके अन्तःकरणमें उच्चताकी लगन दिया है। यह लगन हमें प्रभुकी ओर आकृष्ट करती है और संसारका मोह विषय-सुखकी ओर खींचता है। प्रत्येक मनुष्यके मनमें सर्वदा इस दैवी और आसुरी वृत्तिके बीच युद्ध चला करता है, इनमेंसे जिनका जीव जागृत रहता है उनके अंतरमें प्रारंभमें बड़ा भारी युद्ध होता है क्योंकि जीभ कहती है कि यह स्वाद चखना है किन्तु अन्तर कहता है कि नहीं, बहुत समय हो गया, अब मिताहारी बन, किन्तु अन्तरकी यह बात मन मानता नहीं। वह तो स्वादके पीछे-पीछे दौड़ता है और जीभको प्रसन्न रखता है। इस प्रारम्भिक लड़ाईके समय मन बड़ा उत्तेजित रहता है क्योंकि उसे जो पुरानी आदत पड़ी है उसे छोड़ना अच्छा नहीं लगता, किन्तु जीवात्मा हमारे

उनके दुःखमें भाग लेता है, उसे अनन्तकालका वैभव मिल सकता है, जो कुलाभिमान त्यागकर प्रभुके पुत्रोंके साथ "आत्मवत् सर्वभूतेषु"के अनुसार व्यवहार करता है, वह स्वर्गका देव हो सकता है, जो अपने अधिकारका अभिमान छोड़कर अपने बन्धुओंसे नम्रताका व्यवहार करते हैं, उनका अधिकार बढ़ता जाता है, क्योंकि अधिकारिओंका अधिकार तो बाहर होता है किन्तु दीनताके गुणवाले मनुष्य तो लोगोंके अन्तःकरणमें अधिकार जमा सकते हैं और धर्मकी दीनतावाले भक्त हरिकी सेवामें जा सकते हैं। इस प्रकार प्रभुके लिये दीनतासे नीचे उतरनेमें बड़प्पन है, नमनेमें लक्ष्मी है, दीनतामें कीर्त्ति है, अधीनतामें ज्ञान है, सेवामें अधिकार है और पवित्र सनातन धर्मके लिये नीचे उतरनेमें महान प्रभु स्वयं साथ रहता है और प्रभुके साथमें होनेसे स्वर्गका द्वार खुल जाता है, देव हमारे मित्र बन जाते हैं, ईश्वरीय ज्ञानकी कुञ्जी मिल जाती है, और प्रभु स्वयं हमारा पथ प्रदर्शक बन जाता है, क्योंकि दीनता हमें जगतके जीवोंके साथ तथा प्रभुके साथ जोड़नेवाली महाशक्ति है और अभिमान सबसे जुदा करनेवाली नाशकारक भयंकर शक्ति है, इसलिए भाइयो! यदि अपना कल्याण चाहते हो तो सर्वशक्तिमान महान प्रभुके लिए नीचे उतरो अर्थात् सेवाधर्ममें आजाओ। बड़े बनकर ऊपर टिक न सकोगे क्योंकि महात्माओंने कहा है कि "हारेसे हरि मिले" अर्थात् हारनेवालोंके लिएही स्वर्ग है, इससे अभिमानका हथियार फेंककर दीनतासे प्रभुकी शरणका बल लेकर सेवा धर्म स्वीकार करो, इससे प्रभु तुम्हारा हो जायगा और तुम प्रभुके हो जाओगे।

दोहा

ऊँचे पानी ना टिके, नीचेही ठहराय।
नीचे होय सो भरपीये, ऊँच पियासा जाय॥
लघुतामें प्रभुता बढ़े, प्रभुता से प्रभु दूर।
कीड़ी मिसरी खात है, हस्ती फांकत धूल॥

११०

यह कैसे समझ सकते हैं कि प्रभुके मार्गपर चलनेके लिए जीव जागा है कि नहीं

सर्वशक्तिमान परमात्माकी इच्छा यही है कि सर्वजीवोंकी उन्नति हो तथा मनुष्य सम्पूर्णताको प्राप्त हो अर्थात् अनंत कालका मोक्षधाम प्राप्त करके वहांका अपरम्पार सुख भोगें। इसीके लिए दयालु प्रभुने जीवोंके अन्तःकरणमें उच्चताकी लगन दिया है। यह लगन हमें प्रभुकी ओर आकृष्ट करती है और संसारका मोह विषय-सुखकी ओर खींचता है। प्रत्येक मनुष्यके मनमें सर्वदा इस दैवी और आसुरी वृत्तिके बीच युद्ध चला करता है, इनमेंसे जिनका जीव जागृत रहता है उनके अंतरमें प्रारंभमें बड़ा भारी युद्ध होता है क्योंकि जीभ कहती है कि यह स्वाद चखना है किन्तु अन्तर कहता है कि नहीं, बहुत समय हो गया, अब मिताहारी बन, किन्तु अन्तरकी यह आज्ञा मन मानता नहीं। वह तो स्वादके पीछे-पीछे दौड़ता है और जीभको प्रसन्न रखता है। इस प्रारम्भिक लड़ाईके समय मन बड़ा उत्तेजित रहता है क्योंकि उसे जो पुरानी आदत पड़ गयी है उसे छोड़ना अच्छा नहीं लगता, किन्तु जीवात्मा हमारे

अन्तर द्वारा इस आदतको छोड़नेके लिए उसपर दबाव डालता है जिससे वह दूने जोरसे सामने खड़ा हो जाता है। इस समय मनका जोर बहुत बढ़ जाता है जिससे केवल अंतर-प्रेरणासे वह वशमें आ नहीं सकता. परन्तु सृष्टिकी रचना और ईश्वरकी इच्छाही ऐसी है कि सब जीवोंका कल्याण होना चाहिये जिससे इस महायुद्धके समय प्रकृति स्वयं उच्च वृत्तियों-की सहायक हो जाती है। जैसे महाभारतके युद्धके समय श्रीकृष्णभगवानने दैवी संपत्तिवाले अर्जुनकी सहायता करके विजय दिया था, वैसेही जागृत जीवसे हृदयमें होनेवाले त्याग और भोगके युद्धके समय प्रकृति स्वयं त्यागकी सहायता करनेके लिए उपस्थित रहती है। मनका अपनी इच्छानुसार स्वाद लेनेके लिए जानेपर प्रकृति उसे पीछे लौटा लेती है, क्योंकि भीतरसे जीव जागृत रहता है जिससे उसके विचार बदलते जाते हैं, उसका रहन-सहन बदलता जाता है, उसका शरीर बहुतसी बातोंमें अति दृढ़ होता जाता है, उसकी लगन उच्च विचार ग्रहण करनेवाली बनती जाती है, उसका धर्म-ज्ञान बढ़ता जाता है और संसारकी आनन्द देनेवाली चीजोंसे उसे वैराग्य होने लगता है। ऐसा होनेपरभी मनको बहुत दिनोंसे जो आदत पड़ गयी है और जो गति मिली हुई है उसमेंसे सरलतासे वह अपने आप निकलता नहीं जिससे भोग और त्यागमें प्रति दिन लड़ाई हुआ करती है। इस युद्धके समय मन अधैर्य होकर खाता है किन्तु प्रकृतिके विरुद्ध होनेसे पहलेके सा स्वाद उसे नहीं मिलता। पहलेके सदृश पाचन होता नहीं और आसपासके संयोग ऐसे बदल जाते हैं कि जीवने ... अवस्थामें जैसा स्वतन्त्रतापूर्वक वह वर्त्तता है वैसा ... स्वभावतः वह नहीं कर सकता, तो भी मन खानेपीनेके

पीछे दौड़ा करता है। पहरने ओढ़नेमें भी यही होता है। मन कहता है कि यह धोती, यह शाल, यह पगड़ी, यह शतरंजी, यह बटन, यह घड़ी, यह बूट तथा यह कलम चाहिये किन्तु हृदय कहता है कि इस सबमें कब तक पड़ा रहेगा? आज तक जीवन इसीमें बिताया तो भी क्या तृप्ति नहीं हुई? दुनिया-की नवीनताका क्या कोई हद है? फैशनका क्या शुमार है? सौंदर्यका कहीं किनारा तथा भोगकी वस्तुका कहीं पार है? नहीं, तब विचार कर कि इन सबको कैसे पा सकेगा? इतना इतना समझानेपरभी मन नयी बातोंमें जाता है, पचता नहीं तो भी मिष्टान्न खानेका मन चलता है, जो नहीं मिलता वह शर्बत पीनेका मन चलता है और जिस बातकी प्रतिज्ञा किये रहता है कि नहीं करूंगा, उसे करनेका भी समय समयपर मन करता है, क्योंकि पुरानी आदतें वह सरलतासे नहीं छोड़ सकता। जो गति उसे पहलेसे मिली हुई है उसे एक दम रोकनेवाला ब्रेक (वह कल जो इञ्जिनके पहियेको एक दम रोक देती है) हमारे पास नहीं है जिससे भक्तिके प्रारम्भमें प्रायः जीवके भीतर बड़ा भारी युद्ध होता है। मन कहता है कि इस बारातमें जाना है तो अन्तर कहता है कि वहाँ तुम्हारा काम नहीं है। तुम्हारे जैसे विचारके मनुष्य वहाँ कहां हैं? तेरे पास ऐसा कपड़ा कहाँ है कि तू जा सके? मत जा, यदि जायगा तो अलग पड़ जायगा। मन कहता है कि यह नाटक देखने जाना है, तब हृदय उत्तर देता है कि अब तुझे इसमें रस कहाँसे आयेगा? ऐसा शरीर कहाँ है जो अधिक रात्रि तक जाग सके। रंगरोलनेमें तथा निम्न श्रेणीके गानोंमें आनन्द आये, ऐसी वृत्ति तेरी अब कहाँ है? तथा अब तुझे इतना बकवादी कहाँ है? मन कहता है कि इस महाराजाकी

सवारी देखने जाता है तो अंतर कहता है कि अरे मूर्ख! भीड़
धक्का खाने क्यों जाता है? इतनी वार देखा तो भी तृप्ति नह
हुई? ठीक है, जा घूम फिर आ। -"मज़ेदार लड्डू है, खायग
सो पछतायगा, और जो नहीं खायगा वह भी पछतायगा।" इ
प्रकार सभामें, सरकसोंमें, मेलोंमें तथा परदेश आदि स्थानों
जानेके लिए मन भटका करता है। जहाँ जाता है वहाँ थोड़
देरमें अरुचि होने लगती है, थकावट आ जाती है, परिश्र
पडता है तथा मनमाना होता नहीं, जिससे हृदयमें दुख होत
है और पीछेसे पछतावा होता है, तिसपर भी मन इन्हीं बातों
जाता है क्योंकि बहुत समयसे ऐसेही संस्कार उसमें जमा ह
गये हैं। जब ट्रेनको एक पटरीसे दूसरी पटरी पर ले जान
होता है उस समय उसे आगे पीछे हटाना बढ़ाना पड़ता है
तथा बहुत समय लगता है, इसी प्रकार तुच्छ सांसारिक
विषयोंमेंसे मनको निकालकर प्रभुमें लगानेके समयभी ऐसाही
होता है। इस समय जो धैर्य धरकर इस त्याग तथा भोगके
युद्धमें जय प्राप्त कर सके वही भाग्यशाली, पुरुषार्थी तथ
कृतकृत्य है। इसलिए भाइयो! जब तुम्हारे मनमें ऐसा युद्ध प्रारंभ
हो तो समझ लेना कि तुम्हारा जीव जागृत हुआ है, और जब
इसमें सफलता मिलती जाय तब समझना कि महान ईश्वरकी
कृपा तुमपर हुई है। यह कृपा नष्ट न होकर बढ़ती जाय,
इसीका प्रयत्न करना, इससे महान भक्त होकर जीवन सार्थक
कर सकोगे। यह सब दैवी-आसुरी संपतिके मानसिक युद्धसे
होता है, इससे इस बातका ध्यान रखना कि इसमें हार न खा
जाओ और जब मन सुधरकर प्रभुके मार्गमें आगे बढ़ता जाय
तब जानलो कि जीव जागा है। इस समय जीवको इस प्रकार
मालूम होगाः—

दोहा

पहले यह जीव काग था करता जीवन घात।
अबतो मन हंसा भया, मोती चुनचुन खात॥
कबीर मन पर्वत हता, अब मैं पाया जान।
टाँकी लागी प्रेमकी, निकसी कंचन खान॥

जब ऐसा अनुभव हो तभी समझना कि जीव
र अब प्रभुके मार्गमें आगे बढ़ा है। ऐसा हुए बिना
सकता इसलिये जैसे बने वैसे मनमें होनेवाले दै
सुरी संपतिके मानसिक युद्धमें दैवी संपतिको
नेका प्रयत्न करो।

१११

हमें किस लिए दूसरोंके साथ भ्रातृभाव रखना चा

हम जगतके सब प्राणीमात्रका पिता प्रभु है और
के पुत्र हैं। पिता जैसे अपने घरमें अपने लड़कों
देखकर प्रसन्न होता है वैसेही हम सबको मेल
मिलकर चलते हुए देखकर महान प्रभु प्रसन्न ह
भ्रातृभाव रख सकें, इसीलिये प्रभुने हमें एक
बन बनाया है।

हम सबके साथ हिलमिल कर रह सकें इसीलिये
र भिन्न देशोंमें प्रभुने भिन्न भिन्न वस्तु उत्पन्न किया
भिन्न जाति तथा मनुष्यमें भिन्न भिन्न गुण दिया
में रुई पैदाकी है तो विलायतमें कारखाना व कारीग
रिकामें लोहे, आस्ट्रेलियामें जानवर, लङ्कामें मोती,

सोनेकी खान, वर्मामें लकडीके जंगल, चीनमें रेशम
मेवाके वृक्ष, अरबमें उच्चजातिके घोड़े, इसतंबोलमें
लिए अनुकूल हवा पानी और काश्मीरको अतिश
दिया है, यह क्यों ? इसीलिये कि एक देशको दूस
आवश्यकता पड़े और इसके द्वारा भिन्न-भिन्न देश, ज
तथा भाषा बोलनेवाले मनुष्य एक दूसरेके साथ हिल
चल सकें तथा बन्धुत्वका व्यवहारकर सकें। भ्रातृभाव
लिए जैसे भिन्न-भिन्न देशमें प्रभुने भिन्न-भिन्न वस्तु उत्प
है वैसेही भिन्न-भिन्न जाति व मनुष्योंमें भी भिन्न-भि
दिया है क्योंकि इन गुणोंके आकर्षणसे भी मनुष्य
सूत्रमें बँध सकते हैं। जैसे अग्निबोट :बनानेकी कला
दक्ष होते हैं, नयी नयी खोज करनेमें अमेरिकन आगे बढ़े
व्यापारमें जर्मन आगे बढ़े हुए हैं, नवीन सुधारोंको अ
जापानी तेज हैं, दयाके विषयमें जैनी, भक्तिमें वैष्ण
तत्त्वज्ञानके विषयमें दुनिया भरमें ब्राह्मणोंका दर्शन प्रसि
यदि भिन्न-भिन्न जातिमें भिन्न-भिन्न प्रकारकी कोई विशे
लता न होती तो सच्चे प्रेमसे मनुष्य एक दूसरेको प्रेमकी
देख न सकता, किन्तु प्रभुकी इच्छा यह है कि हमारा अ
सम्बन्ध टूटने न पावे। इसीलिये उस दयालु परमात्माने
भिन्न जातिके मनुष्योंको कोई विशेष गुण दिया है, जिस
हम अपनी आवश्यकताके कारण अन्तरकी प्रेरणासे एक
से प्रेम कर सकें तथा इस अलौकिक प्रेम द्वारा अंत
धीरे ईश्वरके प्रेममें आ सकें, इसलिए हम सबको भ्रातृभ
आवश्यकता है।

पुरुष स्त्रीको तथा स्त्री पुरुषको चाहे, बाप लड़केको
लड़का बापका भला करे, और सेठ नौकरको तथा

सेठको लाभ पहुँचाये, इसीका नाम भ्रातृभाव नहीं है, बल्कि जगत-प्राणीमात्रपर समान दृष्टि रखे तथा परमकृपालु परमात्माका जीव समझ सबका कल्याण करे, इसीका नाम भ्रातृत्व व ईश्वरी सगाई है।

ऐसी ईश्वरी सगाईमें छोटा या बड़ा, धनवान या निर्धन, विद्वान या मूर्ख, जात-परजात, देश परदेश, धर्म-परधर्म, स्त्री या पुरुष तथा काला या गोरा देखा नहीं जाता, बल्कि सबको महान पिता सर्वशक्तिमान परमात्माका पुत्र व पुत्री, भाई व बहन समझकर योग्यतासे व्यवहार करनेका नामही भ्रातृभाव है। इस जगतके भिन्न भिन्न मनुष्योंमें भिन्न-भिन्न गुण व अवगुण तो रहेंगे ही, किन्तु इसके लिए हमें ईश्वरी सगाई नहीं तोड़ देना चाहिये।

एकही उपवनमें भिन्न-भिन्न जातिके अनेकों वृक्ष होते हैं और उनके फलोंमें भिन्न-भिन्न गुण व उनका भिन्न-भिन्न स्वभाव होता है; कोई खट्टा, कोई मीठा, कोई खारा, कोई तीखा, कोई कड़वा, कोई खटमिट्ठा और कोई चरपरा होता है; इसी प्रकार जगतके मनुष्योंका स्वभाव और प्रकृति भी भिन्न-भिन्न होती है। जैसे कोई मनुष्य क्रोधी, कोई लोभी, कोई कामी, कोई भोलाभाला, कोई लज्जाशील, कोई बकवादी, कोई खूनी, कोई बेअदब, कोई अज्ञानी और कोई स्वार्थी होता है, किन्तु हमें अपने भाईबन्धुओंके दोषोंकी ओर न देखकर इस प्रकार विचार करना चाहिये कि ये लोग बाहरसे चाहे जैसे दोषयुक्त दिखाई पड़ते हों किन्तु हैं हमारे महान प्रभुके उत्पन्न किये हुए ही, और उनमें भी पवित्र आत्मा विराजमान है। ऐसा समझकर तथा सबके साथ दिल मिलकर रहनेका और उनका आश्रयी हो देनेका अर्थ ही भ्रातृभाव है और इसीका नाम ईश्वरीय सगाई

मन, धन, वचन या कर्म किसीका भी हम पूरा उपयोग नहीं करते बल्कि उलटे गरीबोंको ही लूटते हैं और सबके पहले उन्हें ही ठोकर मारते हैं, और प्रभु कहते हैं कि मेरी शरणमें आओ किन्तु इसके बदलेमें सर्वभावसे मृगतृष्णाके जलवत् मायाको ही हम पकड़े हुए हैं। इस प्रकार भक्तिके लिए जिन विकारोंका त्याग करना चाहिये उन्हें हम कर नहीं सकते तथा जिन नियमोंका पालन करना चाहिये उनका हम पालन नहीं कर सकते जिससे हम भक्तिमें पीछे रह जाते हैं और हमारी भक्ति फलीभूत नहीं होती। इसलिए भाइयो! याद रखो कि क्षणिक विकारोंके लिए सच्चिदानन्द रूप परमकृपालु प्रभुको छोड़ देना, एक आलपिनके लिए बड़े राज्यको छोड़ देनेसे भी बढ़कर खराब है। पानीके बबूलेके समान अपने देहके लिए जो थोड़ी देरमें श्मसानमें जल जानेवाली है अथवा जो कीड़ियों द्वारा खा जानेवाली है, स्वर्गका राज्य छोड़ देनेसे तथा क्षण भरके लिए मनको प्रसन्न रखनेके लिए नरककी भयङ्कर अग्नि पसन्द करनेसे बढ़कर मूर्खता और क्या हो सकती है? हमारे अन्तःकरणको स्वभावतः भक्ति अच्छी लगती है किन्तु मनको खराब वस्तु छोड़ना अच्छा नहीं लगता, इससे यह अशक्यतामें पड़ा रहकर अन्नदाता, प्राणदाता, शांतिदाता, और जगत्कर्त्ता महान प्रभुको भूल न जाय, इसका ध्यान रखना क्योंकि इसीके स्मरणमें भक्तिकी सिद्धि, स्वर्ग, मोक्ष, तथा सर्वस्व है और उसके लिए अपनी शक्तिके अनुसार त्याग करना तथा नियमका पालन करना ही सच्चा स्मरण है। यदि भक्तिका फल लेना हो तो महान ईश्वरके नियमोंका पालन करनेका प्रयत्न करो क्योंकि महात्मा कहते हैं कि केवल बातोंसे नहीं बल्कि कर दिखानेसे ही पार लगेगा। जैसा संत कहते हैं:—

दोहा

करनी बिन कथनी कथे, गुरुपद लहे न सोय।
बातोंके पकवानसे, धाया नाहीं कोय॥
करनी बिन कथनी कथे, अग्यानी दिन रात।
कूकर ज्यों भूकत फिरत, सुनी सुनाई बात॥
कहते सो करते नहीं, मुखसे बड़े लबाड़।
काला मुखले जायँगे, साहेबके दरबार॥
लिखना पढ़ना चातुरी, तीनों बातें सहल।
काम दहन, मनवश करन, गगन चढ़न मुश्किल॥
कहनी मिसरी खांड़ है, रहनी ताता लोह।
कहनी कहे, रहनी रहे, ऐसा विरला कोइ॥
बानी तो पानी भरे, चारो वेद मजूर।
करनी तो गारा करे, रहनीका घर दूर॥

११३

जैसे सब कुछ होनेपर भी केवल पानी बिना बादशाहकी सेना रेतके मैदानमें नष्ट हो गयी, वैसे ही संसारके सब वैभव होते हुए भी प्रभु-प्रेम न होनेसे हमारा भी यही हाल होगा

इतिहास पढ़नेवाले जानते हैं कि महमूद गजनीने अकारण सोमनाथपर चढ़ाई करके बड़ी लूट-पाट मचायी थी। इसके पश्चात् वह अपने देशकी ओर लौटा तब भीमदेवने उसका सामना किया जिससे कच्छके रेगिस्तानसे होकर जाना पड़ा था। इस समय रेगिस्तानमें पानी न मिलनेसे उसके हजारों बहादुर तड़प तड़पकर बिना पानी मरने लगे। इस प्रकार उन्हें मरते देखकर बादशाहने अपने खजानचीसे पूछा कि तुम्हारे

पास क्या क्या सामान है। खजानचीने कहा—हजूर! सोना... मोहरसे ऊँट लदे हुए हैं, चाँदीसे लदा हुआ छकड़ा चला आ... रहा है, युद्धसे तथा मार्गमें पकड़े हुए हजारों गुलाम आपकी... खिदमतके लिए हाज़िर हैं, घास-दानासे लदी हुई गाड़ियाँ... साथमें हैं, और अरबी घोड़े व पहाड़ी खच्चर बहुतायतसे हैं,... सरदारगण अपना माथा झुकाकर आपकी आज्ञाकी बाट जोह... रहे हैं, आपकी सवारीको आते हुए देखकर आसपासके पचीस... कोस तक शत्रु हिरनोंके समान भाग जाते हैं, और सैकड़ों... प्रकारकी हिन्दुस्तानी स्वादिष्ट मिठाइयाँ लदी हुई चली... आ रही हैं। हजूर! इस बार तो खूब गहरी विजय... मिली है। केवल पानी नहीं है, और सब कुछ है। यह सुन... कर बादशाहने कहा—जब हमारे पास सब कुछ है तब पानी... क्यों नहीं मिलेगा? पानी, पानी, जल्दीसे पानी लाओ, जैसे हो... वैसे पानी लाओ, रुपया प्याला पानी मिले तो भी ले आओ,... खजानचीने कहा—हजूर सलामत! इस रेगिस्तानमें सोनाके... बदलेमें सोनाभर भी पानी नहीं मिल सकता। यह सुनकर... बादशाह बड़ा क्रुद्ध हुआ और अपने लश्करमें ढिंढोरा पिटवा... दिया कि जो कोई पानी लायेगा उसे मुँह मांगा इनाम मिलेगा।... ला... या गाँवका गाँव इनाममें दिया जायगा बशर्तें की... । अरे मेरे तड़पते हुए सिपाहियोंके लिए... आओ किन्तु अफसोस! उस रेगिस्तानमें पानी... ...र हजारों मनुष्य तड़पतड़पकर मर गये।

इस बातका सार क्या है, कुछ समझमें आया?... ...ने कहा कि इस घटनासे अपनी तुलना करो।... ...पना जीव है। सोमनाथपर चढ़ाई, प्रभुके साथ... युद्धमें जो हम विजय प्राप्त करते हैं वह...

तूने अपने लड़कोंको क्यों नहीं बताया? तेरी स्त्री तो तेरा कहना मानती थी। उसे तूने क्यों नहीं समझाया? तुझे अधिक ज्ञान मिला था, यह सत्य है किन्तु सामान्य समझ तो थी। इसका क्या तूने उत्तम उपयोग किया है? अपने भाई बंधुओंके साथ हठ करके लड़ता था तब क्या तुझे मालूम नहीं था कि ये मेरे भाई हैं? उस समय क्या मालूम नहीं था कि एक दिन मुझे भी मर जाना है? उस समय क्या मालूम नहीं था कि मरनेके बाद मेरा न्याय होगा? और क्या मालूम नहीं था कि मेरे नियमोंसे कोई निकल नहीं जा सकता? यह सब जानते हुए भी तूने अपने बंधुओं तथा बालकोंके साथ अच्छा बर्ताव नहीं किया। इसीका मैं हिसाब चाहता हूँ। जिस बातको मैंने तुझे बुद्धि नहीं दी थी उसके विषयमें मैं तुझसे नहीं पूछता, इसलिए 'मेरेमें बुद्धि होती तो यह करता और वह करता' यह जवाब किस कामका? ऐसा होता तो ऐसा करता और ऐसा होता, ऐसी भविष्यकी बातें मुझे नहीं चाहिये। मुझे तो जो कुछ हो गया है उसका हिसाब दो और जितना मैंने तुझे दिया था उसीका हिसाब दो।

भाइयो! अनंत ब्रह्मांडका नाथ सर्वशक्तिमान परमात्मा स्वयं जब इस प्रकार पूछेगा, उस समय हम क्या उत्तर देंगे? इसलिए ऐसा होता तो ऐसा करता और ऐसा हो तो ऐसा करूँगा, आदिका बहाना छोड़कर तथा व्यर्थकी आशामें न रहकर ईश्वरकी कृपासे जो कुछ हमें मिला है उसीका सदुपयोग करनेका प्रयत्न करो और सर्वदा ऐसी ही भावना रखो कि:—

पद

सबका करो कल्याण दयालु प्रभु, सबका करो कल्याण,
नरनारी पशु पक्षी सहित जीव जंतुका तमाम—दयालु०

दोहा

पारसमणि अरु कामधेनु, कल्पतरुकी बाड़।
तुलसी हरिके भजन बिन, ताते भलो उजाड़॥
ऊँचा कुल किस कामका, जहँ नहिं हरिको नाम।
तुलसी ताते सुपच भलो, जिस मुख हरिको नाम॥

११४

अपने दरिद्र प्रारब्धको फेरनेका उपाय

देखा जाता है कि बहुतसे मनुष्य गरीब होते हैं। वे क
हैं कि हमारा प्रारब्धही ऐसा है, किन्तु जब वही मनुष्य कि
सेठ या राजाके यहाँ नौकर हो जाता है तब राजाके संग
प्रारब्धके प्रतापसे उस गरीब मनुष्यका छोटा प्रारब्ध भी
हो जाता है। इसके बारेमें एक खवास भक्त कहता था
मेरे घरका छप्पर आज टूटे कल टूटे जैसा हो रहा था, उ
मूसा दौड़ा करते थे, वर्षाकालमें आधा पानी नीचे गिरत
और ज़मीनके तर रहनेसे मच्छरोंकी सेना भनभनाया क
और थोडी देर भी सुखसे सोने न देती। ज्वारकी टंडी
खाता था किन्तु यदि किसी दिन देर हो जाती तो ल
आपसमें लड़कर शाक खा जाते और मेरे लिए ज़रा भ
छोड़ते। पानी पीनेके लोटेमें तीन छिद्र थे, उसमें कपड़ा
काम चलाता था किन्तु वह भी चोरी हो गया। सो
यही हाल था। अंगरखा भी फटा हुआ था। मेरे मा
वह था ही नहीं, इसलिए इसके संबंधमें कुछ क
है। इसके पश्चात् ईश्वरकी कृपासे राजाके

पहरेदारने भी कहा—यदि दियासलाई, गंधक, तेज़ाब या ऐसी और कोई चीज़ आपके पास हो तो यहां रख जाइये। मैंने पूछा—क्यों? उसने उत्तर दिया कि यह दारूखाना है, इसमें ऐसी चीज़ें ले जायी नहीं जातीं। मैंने कहा—यह सत्य है, किन्तु मैं तुम्हारा शत्रु तो हूँ नहीं, मैं तो मित्र हूँ। तब तुम मेरा इतना विश्वास क्यों नहीं करते? मेरे जेबके किसी कोने अतरेमें एक आध दियासलाई यदि पड़ी हो तो तुम इतना डरते क्यों हो? तब चौकीदारने कहा—साहब! आपका विश्वास है तभी तो आपको यह दारूखाना देखने दिया जाता है, किन्तु ऐसा चीज़ोंका, जो जल उठें विश्वास नहीं किया जा सकता। यदि उनका विश्वास किया जाय तो आप और मैं सब एक क्षणमें मार डाले जायँ, इसलिए यदि भीतर जाना हो तो ऐसी चीज़ें यहां रख दीजिये।

यह दृष्टांत देकर वह भक्त कहता—भाइयो! दारूका स्वभाव एकदम सुलग उठनेका है, इससे वहां ऐसी चीज़ें नहीं ले जायी जा सकतीं जिससे अग्नि लगनेका भय हो और यदि हठ करके ले भी जायी जांय तो ज़रा सी भूलसे बड़ी हानि हो जानेकी सम्भावना है। इसी प्रकार याद रखो कि मनका स्वभाव भी सुलग उठनेका है, बिगड़ जानेका व तुच्छ वस्तुकी ओर दौड़ जानेका है; इसलिए जैसे दारूखानामें सुलग उठने वाली चीज़ोंके ले जानेमें सावधानी रखी जाती है, वैसेही हमारा मन भी बुरे संयोग में न पड़ जाय, इसकी सावधानी रखना चाहिये क्योंकि दारूखानामें आ गयी हुई एक छोटीसी दियासलाई सब नष्ट कर देती है वैसेही मनमें आया हुआ छोटासा पाप भी सब सत्यानाश कर देता है, क्योंकि स्वर्गको और सौन्दर्य्यके स्वामी परमात्माको छुड़ा देनेसे बढ़कर खराब

तेजवाले, सदा सर्वका कल्याणकर्त्ता, दयासागर, मोक्षदा महान प्रभुके मार्गमें आओ। ऐश्वर्यके मालिकके मित्र ब लक्ष्मीके नाथके दास बनो और जिनके लिए प्रभु अवतार लेते उन सन्तोंकी सहायता करो, इससे उनके साथसाथ तुम्हा प्रारब्धभी फिर जायगा। क्या ऐसा होगा? इसकी शंका क करते हो? ज़रा विचार तो करो कि मेरे जैसा गरीब खवा एक छोटेसे राजाके प्रतापसे जब इतनी मौज करता है तो उ संसारके वंदनीय जगतके स्वामी, पापनाशक, अधमउद्धार परमानन्दरूप परमात्माकी शरणमें जानेसे क्या नहीं मिलेगा इसलिए यदि अपने भाग्यको फेरना हो तो सर्वशक्तिमान महा प्रभुको अपने हृदयमें आने दो और अपने जीवात्माको उस साथ तन्मय होने दो, इससे कृपाके भंडार, निराधारके आधार अनाथके नाथ, दीनजनपालक, सर्वश्रेष्ठ, अखंडानन्द, महा ईश्वरके ऐश्वर्यके प्रतापसे तुम्हारा भाग्य भी खुल जायगा इसलिए भाइयो

दारूखानामें जैसे अग्निकी बहुत सावधानी रखना पड़ता है वैसेंही ध्यान रखो, कि मन भी खराब संयोगोंमें न पड़ने पाये

एक भक्तने कहा—एक बार मैं दारूखाना देखने गया, वहाँ भीतर घुसते ही दरवाजेपर बड़े बड़े अक्षरोंमें लिखा था कि

हरेदारने भी कहा—यदि दियासलाई, गंधक, तेजाब या ऐसी
ौर कोई चीज आपके पास हो तो यहाँ रख जाइये। मैंने
हा—क्यों? उसने उत्तर दिया कि यह दारूखाना है, इसमें ऐसी
ीजें ले जायी नहीं जातीं। मैंने कहा—यह सत्य है, किन्तु मैं
ुम्हारा शत्रु तो हूँ नहीं, मैं तो मित्र हूँ। तब तुम मेरा इतना
विश्वास क्यों नहीं करते? मेरे जेबके किसी कोने अंतरेमें एक
ाध दियासलाई यदि पड़ी हो तो तुम इतना डरते क्यों हो?
स चौकीदारने कहा—साहब! आपका विश्वास है तभी तो
ापको यह दारूखाना देखने दिया जाता है, किन्तु ऐसा
ीजोंका, जो जल उठें विश्वास नहीं किया जा सकता। यदि
नका विश्वास किया जाय तो आप और मैं सब एक क्षणमें
ार डाले जायँ, इसलिए यदि भीतर जाना हो तो ऐसी चीज़ें
हीं रख दीजिये।

यह दृष्टांत देकर वह भक्त कहता—भाइयो! दारूका स्वभाव
क्दम सुलग उठनेका है, इसमें यहाँ ऐसी चीजें नहीं ले
ायी जा सकतीं जिनसे अग्नि लगनेका भय हो और यदि
ड करके ले भी जायी जाँय तो जरा सी भूलसे बड़ी हानि हो
ानेकी सम्भावना है। इसी प्रकार याद रखो कि मनका
वभाव भी सुलग उठनेका है, बिगड़ जानेका व तुच्छ वस्तुकी
ौर दौड़ जानेका है, इसलिए जैसे दारूखानामें सुलग उठने
ाली चीजोंके ले जानेमें सावधानी रखी जाती है, वैसे ही
मारा मन भी बुरे संयोग में न पड़ जाय, इसकी सावधानी
खना चाहिये क्योंकि द
ियासलाई सब नष्ट कर
ाटाला पाप भी सब स
ौर सौन्दर्यके स्वामी प

वस्तु और कौनसी हो सकती है? इसलिए बुरे संयोग
बचनेका प्रयत्न करो।

दारूखानाका चौकीदार जैसे सुलग उठनेवाली वस्तुओं
भीतर जाने देनेकी खबरदारी रखता है वैसेही हमारा मन
ज़रा देरमें भ्रष्ट हो जानेवाला स्वभावका है, विकारोंके व
हो जानेवाला, बातकी बातमें बिगड़ जानेवाला है, मीठा
लुभाजानेवाला, मोहमें फँस जानेवाला, बिना कारण बी
ही मचल जानेवाला, एवं जहाँ चाहे दौड़ जानेवाला है त
अतिशय चंचल है, इसलिए जहाँ कहीं रागद्वेषका प्रसंग
वहाँ मनको मत जाने दो क्योंकि संयोग होतेही वह भ्रष्ट
जाएगा। दारूखानामें जैसे सुलग उठनेवाली वस्तुओं
सावधानी रखना पड़ता है, वैसेही मनको खराब करनेवा
रागद्वेषके प्रसंगोंसे बचाना तथा सर्व प्रकारके सौन्दर्यसे प
पूर्ण, संसारके बंधनसे मुक्त करनेवाला, जगतका गुरु, सर्व
णोंका भण्डार, शांतिदाता, अन्तर्यामी, महाआनन्दस्वरू
सर्वशक्तिमान कल्याणकारी प्रभुके मार्गमें उसे लगाने
प्रयत्न करो।

यह सब सुनानेका कारण यह है कि मनका स्वभाव ब
विचित्र है तथा वह सरलतासे अंकुशमें आनेवाला नहीं
इससे सावधान रहनेकी आवश्यकता है जैसा कि मनके स्व
भावके बारेमें महात्मा भी कह गये हैं:—

दोहा।

कबीर यह मन लालची, समझै नहि गँवार।
भजन करनको आलसी, खानेको हुशियार॥
मनके मारे बन गये, बन तजि बस्ती माँहि।
कहे कबीर क्या कीजिये, यह मन ठहरे नाँहि॥

मनके हारे हार है, मनको जीते जीत।
मन मिलावे रामको, मनही करे फजीत ॥
मनके बहुते रंग हैं, छिन छिन बदले सोय।
एक रंगमें जो रहे, ऐसा विरला कोय ॥
यह तो गति है अटपटी, अटपट लखे न कोय।
जो मनकी खटपट मिटे, घटाट दरसान होय ॥

११६

भक्ति करनेकी हमारी इच्छा होती है किन्तु मन किसी दूसरे विषयमें फँसा रहता है जिससे भक्तिमें हम आगे नहीं बढ़ सकते

शास्त्र कहते हैं कि हमारा जीव प्रभुका अंश है, प्रभुकी जातिवाला है और प्रभुसे छूटा हुआ है, इससे वह प्रभुसे मिलना चाहता है और प्रभुसे मिलनेपरही वह पूर्ण होगा। ऐसा होनेसे स्वभावतः जीव किसी न किसी रीतिसे ईश्वरकी ओर आकृष्ट रहता है, तिसपर भी देखा जाता है कि महान प्रभुके पवित्र मार्गमें कोई कोई मनुष्यही आगे बढ सकते हैं और बाकी तड़फड़ाते हुए जहांके तहां ही रह जाते हैं। यह देखकर एक हरिजनने किसी महात्मासे पूछा—महाराज! प्रत्येक जीव आगे बढ़ना चाहता है, अच्छा काम करनेकी सबकी इच्छा होती है, उच्च होनेके लिए सब तड़फड़ाया करते हैं, सब कैदखानामेंसे छूटना चाहते हैं, ज्ञान मिले तो अच्छा; यह सब चाहते हैं, सब स्वर्ग चाहते हैं, स्वभावतः सब जीव शान्तिदाता, मंगलकारी, सच्चिदानन्द परमात्माकी ओर खिंचा

हता है तौभी जितना चाहिये उतना यह प्रभुके मार्गमें आ
ढ़ नहीं सकता, इसका कारण क्या है ?

महाराजने कहा—एकबार अग्निबोटमें बैठकर बम्बईसे
हरामघाट जा रहा था, वहाँ मुझे एक नवीन अनुभव हुआ
तैर लोग प्रभुके मार्गमें क्यों नहीं आगे बढ़ सकते, इसका
ी भेद मुझपर खुला। इसका सारांश मैं तुम्हें सुनाता हूँ
ाग्निबोट खुलनेकी तैयारी हो गयी थी, इञ्जिनमें स्टीम भ
या था, लंगड़ उठ गया था, सीटी बज चुकी थी, क
ड़खड़ भड़भड़ कर रही थी और कैप्टन सबसे कह रहा था
क "जल्दी करो जल्दी करो" अग्निबोटको छोड़ दो, किन्तु
ग्निबोट चलती नहीं थी। यह देखकर कैप्टन विचारमें पड़
या और क्रुद्ध होकर खलासिओंसे कहने लगा कि यह क्या
म सब बड़े लापरवाह हो ? इतनी देर क्यों कर रहे हो
ह सुनकर वे सब अपने अपने कामके लिए दौड़ने लगे और
प्टन पैर पटकने लगा किन्तु अग्निबोट हिली तक नहीं, तब
ाइलट (माँझी) ने कहा कि अग्निबोटकी रस्सी किनारेपर
धी हुई है उसे खोलो तो यह चले। यह सुनकर कैप्टनने
हा, अहो, बड़ी भूल हुई ! यह रस्सी अभी बंधी हुई है,
ब कहाँसे चलेगी ? इसके पश्चात् रस्सी काट डाली गयी
ौर अग्निबोट तेजीसे चल पड़ा।

भाइयो ! इतनी बड़ी तैयारी व इतनी बड़ी अग्निबोटको
क पतली रस्सीने बांध रखा था इसी प्रकार यदि तुम्हारा
न सांसारिक किसी भी विषयमें बंध गया हो तो बाहरी
ितनीही उछल कूद क्यों न मचाओ किन्तु ईश्वरके मार्गमें
ागे न बढ़ सकोगे। हमें आगे बढ़नेसे रोक रखनेवाली रस्सी
ोभ, क्रोध, मानकी इच्छा, संसारका मोह, वैर, तथा अपने

तुच्छ स्वार्थोंके लिए अन्तःकरणकी पुकारको दबा रखता है। इसीसे हम प्रभुके मार्गमें आगे नहीं बढ़ सकते हैं, यदि सर्व-शक्तिमान अनन्त ब्रह्मांडके नाथ शांतिदायक पवित्र मार्गमें चलकर हरिकी सेवामें पहुँचना हो तो इन सब बातोंसे मनको छुड़ानेका प्रयत्न करो। ध्यान रखो कि किसी भी विषयमें मन फँस न जाय। किसी भी वस्तुमें आसक्ति न हो जाय, इसका ख्याल रखो तथा गुणोंके भंडार, ज्ञान-सागर, सौन्दर्य-कर्त्ता ऐश्वर्यके स्वामी, तथा आनन्दके अवतार परमकृपालु पिता महान परमात्मासे बढ़कर कोई भी वस्तु प्यारी न हो जाय, इसका ध्यान रखो, इससे सरलतासे ईश्वरके मार्गमें आगे बढ़ सकोगे।

११७

गरीब मनुष्यको बड़ा सहयोगी मिलनेसे जैसे उसका काम बढ़ जाता है, उसी प्रकार प्रभुको साथी बनानेसे संसारमें सबसे श्रेष्ठ हो सकते हैं

एक गरीब मनुष्य था। वह अपने बालपनमें तथा युवावस्थाके प्रारम्भमें सांसारिक जंजालमें पड़ा था, थोड़ा बहुत रोजगार-धन्धा करता और व्यावहारिक साधारण लोगोंमें जो स्वाभाविक छोटे-मोटे दोष होते हैं वह भी उसमें विद्यमान थे। इसके पश्चात् सत्संगके बलसे भक्तिमें लग जाकर हृदय-स्थित प्रेमसे वह अपनी चाल-चलनको सुधारने लगा और थोड़ेही दिनोंमें दूर

उसकी था

करने लगे, उसकी प्रशंसा करने लगे तथा विना कहे सुने अपने आपही बहुतसे लोग उसके चेला बनकर पीछे-पीछे फिरने लगे। यह सब यकायक नहीं हो गया था बल्कि इस मनुष्यके अपनी रहन-सहन सुधारनेसे, शास्त्रका सार समझकर अपना ज्ञान बढ़ानेसे, नृस्पृह होनेसे, मानसिक बल बढ़ानेसे तथा सर्वशक्तिमान परमात्मामें तन्मय हो जगतमें उसकी महिमा फैलानेके लिये जो पुरुषार्थ किया था, उससे यह सब हुआ था और ऐसा होना कोई नयी बात नहीं है, क्योंकि जो मनुष्य प्रभुके लिये अपना जीवन अर्पण कर दे, सच्चा धर्म समझनेके लिये अपना स्वार्थका त्याग कर दे तथा धर्मका कर्मकांड करनेमें तथा अपने बन्धुओंकी सेवा करनेमेंही अपना समय बितावे, उसे जगतमें मान मिले, विना मांगे धन मिले, बहुतसे लोग उसके कथनानुसार चलें, सब जगह उसकी वाहवाही हो, और महान प्रभुके पवित्र नामके साथ ऐसे भक्तोंकी जयजयकार हो तो इसमें नवीनताही कौनसी है! यह सब देखकर इस भक्तके एक पुराने मित्रको ईर्षा हुई, जिससे वह विचार करने लगा कि बात क्या है? दुनिया ऐसी पागल क्यों हो गयी है? इसकी अपेक्षा तो मैं बहुत ज्यादः अच्छा हूं। हम दोनों पाठशालामें एक साथ पढ़ते थे, उस समय हमारे दर्जेमें यह सबसे पीछे रहता और मैं सबसे आगे रहता। गणित और व्याकरण तो इसे जरा भी नहीं आती थी। मेरे जितना यह संस्कृत भी नहीं पढ़ा है। मैं जातिमें भी इससे उच्च हूं। मेरे पास चार पैसा भी है तथा यह भिखारी है। पांच-सात वर्ष पहले इसे कोई आंख उठाकर देखता भी नहीं था और मेरी आबरू तो मेरे बाप दादाके समयसे है, तोभी इसकी सब जगह पर पूजा होती है और मेरी कोई बात भी नहीं पूछता।

सका कारण क्या है ? इसमें कौनसी बात आ गयी है ? से विचारोंके कारण, ईर्षा हँसीके ढंगपर ज़रा हँसते से एक दिन उस भक्तसे इस मनुष्यने कहा—ओहो! म्हारा काम तो बन गया है ? अब तो तुम गुरु हो गये हो ? क्तने उत्तर दिया-हाँ, इसमें क्या गया है, अभी तो मैं इससे भी ा होऊँगा क्योंकि मेरा साथी कौन है, इसकी क्या तुम्हें खबर ? मुझे बड़ा भारी साथी मिल गया है। अनंत ब्रह्मांडका य सर्वशक्तिमान महान ईश्वर हमारा साथी है, तब भी यदि न बढ़ूँ तो यह मेरी भूल है। मुझे क्या देखते हो ? मेरे थोंको देखो। उसे देखोगे तो ऐसा लगेगा कि मेरे घरपर नाकी वर्षा होनी चाहिये, सदाव्रत चलना चाहिये, मेरे घर- नंगे पाँव महाराजाओंको आना चाहिये, असाध्य रोगी भी हो जाने चाहिये, मेरे घरपर अष्ट महासिद्धि व नवनिधि ना चाहिये तथा मेरे घरसे स्वर्गका टिकट मिलना चाहिये ोंकि इसमें कुछ मेरी बलिहारी नहीं है। मैं तो एक तुच्छ कि हूँ, जो मान मिलता है वह कुछ मुझे नहीं मिलता बल्कि मेरे बड़े साथीको मिलता है और मैं जो कार्य करता हूँ अपने सर्वशक्तिमान साथीके बलसे ही करता हूँ। मुझे जय

स बातकी है ! अभी मेरा पुरुषार्थ कम है जिससे पूरा रंग हीं आया है और इसीसे मैं इतनेमें ही रह गया हूँ, यदि पूर्ण निसे सच्चा हो जाऊँ तो यहीं स्वर्ग आ जाय।

भक्तकी यह बात सुनकर उस मनुष्यपर गहरा प्रभाव ा। वह मज़ाक उड़ाने आया था, इसके बदलेमें नमकर

कको प्रशंसा करने लगा। भाइयो! हम देखते हैं कि गरी
नुष्य भी अच्छे साथियोंकी सहायतासे व्यवहारमें बड़ा ला
उठाते हैं। तब सर्वशक्तिमान अनंत ब्रह्मांडके नाथको अपन
साथी बनानेसे हम कितना आगे बढ़ सकेंगे, इसका तो विचा
करो! इससे यथाशक्ति शुद्ध अन्तःकरणसे महान प्रभुको साथ
बनानेका प्रयत्न करो, इससे तुम संसारमें सबसे श्रेष्
बन सकोगे।

११८

भक्त कहते हैं कि हे प्रभु! मुझे ऋद्धिसिद्धि नहीं चाहिये,
मैं तो तुझे ही चाहता हूँ जो सर्वशक्तिका
मालिक है

प्रायः देखा जाता है कि बहुतसे मनुष्य त्यागी हो जाते हैं
क बन जाते हैं तथा प्रभुके लिए बड़ा त्याग करते हैं, तिसपर
ये कोई छोटीसी वस्तुके प्राप्त करनेकी आशामें रह जाते
। कोई खिलौनेके साथ खेलनेमें रह जाता है, कोई लोगोंको
रचयमें डालनेवाले अधूरे चमत्कारोंमें ही रह जाता है
या तुच्छ वस्तुके लिए राज नष्ट कर देता है। जैसे किसी
भुको तांबासे सोना बनानेकी इच्छा होती है, कोई कसौटी
दा बनानेके फेरमें रह जाता है, कोई पाराका भस्म बनानेकी
हा किया करता है, कोई हरतालसे मालिक बनानेकी आशा-
पड़ा रहता है। कोई पारेकी गोलीसे आकाशमें उड़नेकी
न किया करता है, कोई झाड़ फूंकमें तो कोई आसन मारनेमें
रह जाता है, कोई दवा बनानेमें ही आत्माको भूल जाता

कोई वचन सिद्धिके लिए शरीरको जलाया करता है, कोई
ंझ स्त्रियोंको लड़का देनेकी बात करनेमें ही अपने त्यागको
ल जाता है, कोई हाथकी रेखा देखकर अष्टम-षष्टम कहनेमें
अपना बड़प्पन मानते हैं, कोई कालभैरव या हनुमानको
शमें करनेके लिए सिर पटका करते हैं, कोई ऊँगलीपर
न मकर व मेष गिननेमें ही प्रसन्न रहते हैं, कोई वशीकरण-
तिलक, अंजन या पान पटीया ही शोधा करते हैं, कोई
ोंको वशमें करनेके लिए बलिदान देकर पाप किया करते हैं,
ई मारण मोहन तथा उच्चाटन मंत्र सिद्ध करनेकी मूर्खता
ी आशामें ही जीवन बिता देते हैं, कोई दूसरोंके मनकी बात
न लेनेकी इच्छासे तप खर्च कर डालते हैं, कोई सांप
च्छूको वश करनेका मंत्र सीखनेके ढोंगमें अपना कर्त्तव्य
जाता है, कोई भूत-भविष्य जाननेके लिए अपनी शक्ति नष्ट
देते हैं, कोई राजाओंको वशमें करनेकी इच्छासे स्वयं मलिन
ोंके वशमें हो जाते हैं, कोई कायाकल्प साधनेकी
दासे अपने शरीरका नाश करते हैं तथा दूसरे और और लोग
ुत-अद्भुत चमत्कारोंके लिए सर्वशक्तिमान सर्वज्ञानन्द
कृपालु परमात्माको भूल जाते हैं। यह सब देखकर तथा
भूले हुए लोगोंपर तरस खाकर एक महात्माजी कहते कि
यो! चमत्कार और ऋद्धि-सिद्धि तो महान प्रभुकी अनंत
में से किसी एक शक्तिका एक स्वाप अंश है, इसलिए
पूर्ण-प्रेमसे सच्ची भक्ति और सच्चा ज्ञान प्राप्त करो तो वे
ुएँ अपने आपही तुम्हारे पास आ जायँगी। तब अपना
न व शक्ति व्यर्थ क्यों नष्ट करते हो! अपने त्याग-
स्यपर पानी क्यों फेरते हो! और इनोंके लिए विरसा-
से विलग क्यों होते हो! यदि तुम्हारे भक्तिमें बल होगा

ो ये चमत्कार, अपने आपही तुम्हारे दास बन जायंगे,
िन्तु इस समय संतगण उलटे यही कहते हैं कि जाओ यहांसे
रे यहाँ तुम्हारा काम नहीं है। तुम्हें लेकर मैं क्या करूंगा।
झे चमत्कारोंकी, ऋद्धि-सिद्धिका आवश्यकता नहीं है, मुझे
धर्वोंका गायन नहीं सुनना है, मुझे देवोंकी दुंदुभीसे प्रस
ता नहीं होती, मैं सिद्ध किन्नरोंके दानसे लुभ जानेवाला
हीं हूं, मैं आकाशकी पुष्पवृष्टिसे सार्थकता मान बैठनेवाला
हीं हूं और मैं इन्द्रासन पाकर भी प्रसन्न हो जानेवाला नहीं
हीं हूँ। क्योंकि मैं जानता हूं कि परमकृपालु महान परमात्माकी
ो अनंत शक्ति है, उसमें से किसी एक शक्तिके ज़रासे अंशमें
ो यह सब रहता है, तब इन्हें लेकर मैं क्या करूंगा ! मु
ो सर्वशक्तिमान अनंत ब्रह्मांडके नाथकी ही आवश्यकता
सके मिल जानेपर इनके समान बहुतसे अपने आपही
ायेंगे और जब वे मिल जायंगे तब ये सब दूरही
ायेंगे और इनके बदलेमें चिंतामणि, कल्पवृक्ष, अमरत्व, मु
हात्माओंका साथ, प्रभुकी सेवा, हरिकी सेवामें रहनेका लाभ
ग-शोकसे रहित अवस्था, जन्म-मरणसे मुक्ति, ईश्वरी वैभ
था सर्वदा अर्लक्षानंदत्व आदि मिल जायगा। इन सब
ागे क्षणिक मूर्खता-पूर्ण चमत्कारोंकी क्या गिनती है !
ाय भाइयो ! तुच्छ चमत्कारोंकी इच्छा त्यागकर उस नि
ाथको पकड़नेकी चेष्टा करो जिसमें उपरोक्त सब बातें वि
ान हैं जिससे यथा वांछित सब वस्तुएं मिल जायंगी।

११६

माला फेरते समय मन स्थिर नहीं रहता और बाहर दौड़ता है, उसे जीतनेका उपाय

सब हरिजनोंको पवित्र प्रभुका आनन्ददायक नामस्मरण
नेके लिए माला फेरनेका तथा विश्वंभरनाथका ध्यान
नेका मन होता है क्योंकि संसारके सब धर्मोंमें इस बातपर
धिक जोर दिया गया है। पवित्र धर्मशास्त्र बारंबार घूमा
फिराकर भिन्न-भिन्न रूपमें यही बात कहते हैं कि प्रभुका ध्यान
ना चाहिये। धर्मकी बहुत सी बाहरी तथा अंतरकी
ाओंका यही हेतु होता है कि जीवोंमें प्रभु-प्रेम जागृत हो
जिसका महामंगलकारी शांतिदायक उत्तममें उत्तम नाम
न भरको पवित्र करता है, उस आदिनाथ जगद्गुरु परम
ु परमात्मामें जीव तन्मय हों। भिन्न-भिन्न देश व कालके
ता भी यही कहते हैं कि परम आनंदस्वरूप, महान शक्ति-
ी, सर्वज्ञानंद, जगत् व्यापी, ज्ञानस्वरूप प्रभुके साथ
ावसे जब तक तन्मय न होंगे तब तक पार नहीं लगेगा।
रखो कि ऐसा मन, वचन, कर्मकी तन्मयता बिना ध्यानके
हो सकता और ध्यानका सर्व प्रथम चरण उस पवित्र
का नाम स्मरण ही है, इसलिए नामस्मरण तथा ध्यान
हरिजनोंको चल नहीं सकता। अनुभवसे मालूम होता है
में ध्यान करना आता नहीं तथा ध्यानके समय हमारा
स्थिर नहीं होता, किन्तु जरा शान्त होकर विचार करनेसे
म पड़ता है कि हमारा अन्तःकरण हमसे कह रहा है कि
नाम-स्मरण करना चाहिये, ध्यान धरना चाहिये तथा
तन्मय होना चाहिये क्योंकि तुम प्रभुके हो, इससे

तुम्हारा आनंद उसीमें है। यह सब जानबूझकर भी म
फेरने या ध्यान धरनेके समय जब मन स्थिर नहीं होता, त
भटका करता है, उस समय मनको धिक्कारो और कहो कि
भर तो धूल फांका करता है तब भी इस समय जरा
नहीं रहता ? इतना जीवन तो भटकनेमें ही बिता दिया तब
जरा शांति नहीं लेता ? इतना भी शांत न रहेगा ? लज्जा न
आती ! इस प्रकार धिक्कारकर पीछे ऐसे विचार करो
अरे मूर्ख मन ! अब तो कुछ समझ ! आज तक इतने स्था
में घूमा, इनसे तुझे कौनसा लाभ हुआ ? अविनाशी ईश्वर
अलौकिक आनंदको छोड़कर जिसके लिए तू दौड़ता है
कितनी देरकी है ? जिस वैभवके लिए तू स्वर्गका सुख छो
देता है वह वैभव कहाँ तक तेरे काम आयेगा ? जिस क्षणभंगु
शरीरके लिए इतनी धूमधाम करता है उस शरीरके साथ ते
संबंध कब तक बना रहेगा ? जीवोंको आनन्द देनेवाला, हरि
जनोंका प्यारा, देवोंका देव, पूर्णानंदस्वरूप प्रभुके दिव
आनन्दकी अपेक्षा हजाम, मोचीके घरमें, कुत्ते बिल्लीमें, गाड़ी
घोड़ेमें या मिथ्या कल्पनाका चित्र खड़ा करनेमें क्या अधि
आनन्द मिलता है ? ऐ मन ! अरे पागल ! अब तो कुछ समझ
अब तुझे यह सब शोभा नहीं देता। अब तो तू प्रभुके मार्गमें,
हरिजनोंके साथमें आया है, अब तेरा जीव जागृत हुआ है,
इससे नया रंग तुझपर चढ़ा है तथा अब जगतका मिथ्यापन
और प्रभुका बड़प्पन तेरी समझमें आता जाता है, इसलिए ऐ
प्यारे मन ! अब तुझे नरकमें पड़ना अच्छा नहीं लगता, अब
माला फेरते समय तुझे राग-द्वेषके विचारमें नहीं पड़ना
चाहिये और प्रभुके अतिरिक्त और किसी वस्तुको प्रिय नहीं
गिनना चाहिये।

मन ! मैं तुझे कितना समझाऊँ ? कब तक तू ऐसाही बना
हेगा ? याद रख कि मैं तुझे अब छोड़नेवाला नहीं हूँ । चाहे तू
कितनाही हठी क्यों न हो, मैं तुझे तेरी इच्छाके अनुसार चलने
दूँगा । आजतक तूने मुझे मदारीके बन्दरके समान नचाया
किन्तु अब तेरा गुरु जीव जागा है, जिससे सत्य वस्तुपर
रा प्रेम दृढ़ हो गया है और अब तेरा कुछ भी वश नहीं चल
सकता । चाहे तू कितनाही उछल-कूद करे, अन्तमें तुझे मैं
कड़ही लूँगा क्योंकि अजय, अपने मनको स्थिर रखनेवाला,
लको भी जीतनेवाला परम कृपालु परमात्मा स्वयं मेरा
हायक है और मैं उसीके दिखाये मार्गपर चलना चाहता हूँ ।
सके व्यर्थ अब हाथ पैर पटकना छोड़ दे तथा भजनके समय
के शान्तिमें रहने दे । हे शांतिदाता प्रभु ! मनको जीतनेका
झे बल दे ।

भाइयो ! जरा शांत चित्तसे इस प्रकार मनको यदि
ड़ना होगे, उसे वैराग्यको ओर लगाओगे और इधर-उधर
टकने न देकर स्थिर रखोगे तो वह तुम्हारे परिश्रम व
न्तरके बलके अनुसार तुम्हारी शुभेच्छाके अधीन होने
गेगा । सर्वशक्तिमान महान प्रभुके पवित्र नामस्मरण व
नके समय प्रारम्भमें यदि मन न ठहरे तो घबड़ा न जाकर
नेक युक्तिसे उसे समझानेका प्रयत्न करो, ईश्वर कृपासे
ड़ेही समयमें वह अधीन होने लगेगा और उसी प्रकार तुम्हें
आनन्द तथा बल मिलने लगेगा क्योंकि यह सब ईश्वर
पापर निर्भर है इसलिए यथाशक्ति समझा-बुझाकर
से वशमें करनेका प्रयत्न करो, मनको वशमें करनेका
न करो ।

पद ।

भजन बिन जीव बड़ा दुःखी, मन तू राम-भजन करिले;
जीव तू जायगो जरूर मन तू राम भजन करिले।
लख रे चौरासी फेरा फिरेगो जीव जनमि जनमि मरे—भजन०
मातु पिता तेरा दारा अरु बंधु वामे कारज कछु न सरे—भजन०
हस्ती अरु घोड़ा माल खजाना धन भंडार भर्यो घरमें—भजन०
बाई मीरा कहे प्रभु गिरधरके गुण अरे मेरो चित्त भजनमें धरे—भजन

१२०

प्रारंभमें दोष रहे तोभी भक्तिमें लगे रहो, इससे धीरे-धीरे सुधर जाओगे

कोई कोई मनुष्य कहते हैं कि अभी मैं भक्ति करने योग्य नहीं हूँ क्योंकि मेरेमें अभी बहुतसे पाप भरे हैं। इन पापोंके दूर होनेपर भक्ति करूँगा, किन्तु सद्गुरु कहते हैं कि यह बात बुरी है क्योंकि आयुष्यका कोई भरोसा नहीं है। प्रकृति बदलना सब मनुष्योंसे सरलतासे नहीं हो सकता और छोटे बड़े पापभी सबसे यकायक नहीं छोडा जा सकता। मनुष्योंमें कम वेश दुर्गुण तो रहेंगेही। ये दुर्गुण कब दूर होंगे इसके लिए कोई निर्धारित नियम या काल नहीं है, इसलिए दुर्गुणोंके दूर होनेपर भक्ति करूँगा, ऐसी निर्मूल आशापर भक्ति छोड़ नहीं देना चाहिये-

यह सत्य है कि पापवासनासे भरी भक्ति करनेसे कुछ लाभ नहीं है, तो भी ऐसी भक्तिसे भक्तिके नियम समझमें आ जाते हैं, भक्ति करनेकी टेव पड़ती है, बाहरी लोकलाज मिटती है, हरिजनोंके साथ मुलाकात होती है, समय व्यर्थ नहीं जाता

तथा बाहरके प्रतिदिनके परिश्रमसे धीरे-धीरे अंतरमें भी धक्का लगने लगता है और बाहरी खोटी भक्ति अन्तरके सच्चे रूपमें परिणत हो जाती है, किन्तु यह सब भक्तिमें लगे रहनेसे होता है। इसलिए अन्तरके सब विकारोंके शान्त न हो जानेपर भी भक्तिमें लगे रहना चाहिये। सब पापोंके दूर हो जानेपर बिल-कुल सच्चे होकर भक्ति करूंगा, ऐसी खोटी आशामें पड़े नहीं रहना चाहिये क्योंकि हमारे आस पासके संयोग बड़े निर्बल हैं, हमारे रीतिरीवाज अन्त तक हमें बाहरही। बाहर रख छोड़नेवाले हैं, संसारके सब धर्मोंकी बाहरकी क्रियायें दुर्बल मनवाले मनुष्योंको ऊपरी व्यवहारमेंही नचाया करती हैं, हमारा मन नीचेकी ओर ले जानेका स्वभाववाला है, तथा सच्चा ज्ञान प्राप्त होनेके पहलेही इन सब संयोगोंके वशीभूत हो जानेवाला हमारा जीव है, इससे जानमें या अज्ञानमें किसी न किसी प्रकारका पाप तो हमसे होही जायगा क्योंकि संसारकी रचनाही ऐसी है। इसीसे श्रीकृष्ण भगवानने भी कहा है कि हे अर्जुन ! जैसे अग्निके साथ धुआँ

जानेपर भक्ति करूँगा बड़ी भारी भूल है। इसलिए भाइयो! ऐसी भूलमें न पड़े रहकर भक्तिमें लग जाओ, इससे परमकृपालु प्रभु तुम्हें पाप छोडनेका बल देगा, जिससे भक्तिके प्रतापसे एवं ईश्वरकी कृपासे थोड़ेही समयमें तुम पवित्र हो जाओगे। इस-लिए जैसे भी बने भक्तिमें लगे रहो, भक्तिमें लगे रहो। इसका फल बहुत बड़ा है।

१२१

परदेशमें स्वदेशवासीके मिल जानेपर बड़े प्रेमसे लोग मिलते हैं ऐसेही एक हरिजनको दूसरे हरिजनके मिल जानेपर बड़ा आनन्द मिलता है

यात्रासे लौटकर आये हुये एक मनुष्यने अपने गुरुसे कहा—मैं बद्रीनारायण गया था वहां जंगलोंमें, पहाड़ोंमें तथा ऊबड़-खाबड़ढंगमें अनजान मनुष्योंके साथ बहुत दिन मैंने बिताया। पश्चात् गांवके दो मनुष्य वहां मुझे मिल गये। उन्हें देखकर मुझे बडा आनन्द हुआ। मैंने पूछा–आप यहां कहां? उन्होंने उत्तर दिया कि यात्रा करनेके लिये हम यहां आये हैं। मैंने कहा—तब तो बहुत अच्छा है, आपके सहवाससे मुझे बड़ा आनन्द होगा। इन पहाड़ियोंके साथ प्रतिदिन माथा-पच्ची करना पड़ता है। ये मेरी बात भी पूरी नहीं समझते, हमारे आचारविचार भिन्न हैं तथा इनके भिन्न हैं। आपतो बड़े अव-सरपर मिल गये अब तो आपके साथही रहूंगा। उन्होंने कहा-बहुत ठीक, हम भी आपकेही समान किसी अपने गांवके रहने-वालेकी खोजमें थे। महाराज! हम एक स्थानके रहनेवाले

या स्वजाति नहीं थे और एक दूसरेसे कभीकी मुलाकात भी नहीं थी किन्तु केवल पोशाक व चेहरा देखकरही एक दूसरेपर ऐसा प्रेम उमड़ा कि कुछ बातही न पूछिये, मानो सोनेका सूर्य उदय हो गया है। यात्राके देवदेवियों और मंदिरोंको देखकर तथा तीर्थस्थानोंमें स्नान करनेसे हमें जितना आनन्द हुआ, उससे कहीं अधिक परदेशमें स्वदेशवासिओंके मिलनेसे हुआ क्योंकि उस समय मेरा अन्तर इस प्रकार धड़कने लगा मानो कोई नवीन सहायता मिल गयी हो, नयी ताकत आ गयी हो, या बड़ी विजय मिल गयी हो। महाराज! मैं सत्य कहता हूँ कि अनजान पहाड़पर स्वदेशवासियोंको देखकर जितना आह्लाद मुझे हुआ वैसा अपनी स्त्री या अपने पुत्रको भी देखकर नहीं हुआ था। महाराज! अनजान मनुष्योंपर इतना प्रेम कैसे आ गया, यह मैं समझ नहीं सका।

महाराजने उत्तर दिया—भाई ये तुम्हारे देश भाई थे जिससे तुम्हें इतना प्रेम उत्पन्न हुआ, क्योंकि परदेशमें देशके मनुष्य कहाँ मिल सकते हैं? परदेशमें और सब कुछ मिल सकता है, धन, माल, मान, तथा और सब आवश्यक वस्तुएं मिल सकती हैं किन्तु स्वदेशवासी कहां मिल सकते हैं? इसी प्रकार बेटा! याद रखो कि जो भक्त धर्मके मार्गपर चलते हैं, उन्हें यह सांसारिक-जंजाल परदेशके समान हो जाते हैं, जिससे सब प्रकारके साधन होते हुए भी उनका हृदय अपने देश-वासियोंकी ओर अर्थात् हरिजनोंकी ओर खींचा रहता है, क्योंकि यही उनकी मदद, एवं उनका बल है तथा इसीमें उनकी विजय है। इन हरिजनोंके भिन्न-भिन्न ग्राम, जाति तथा बाहरी लोकाचारमें रीतिभांतवाले होनेपरभी उनमें आपसमें एक दूसरे-पर अतिशय प्रेम रहता है, क्योंकि उन सबके अंतरका मूल

हेतु एक ही होता है और वे सब भिन्न-भिन्न मार्गसे एक ही प्रभुको भजनेवाले होते हैं। इससे उनका स्नेह ईश्वरी आकर्पणवाला होता है जिससे संसारके बनावटी स्वार्थी स्नेहोंकी अपेक्षा प्राकृतिक शुद्ध स्नेह अधिक आनन्द देनेवाला होता है। जिन दैवी जीवोंको अपने देशवासिओंपर अर्थात हरिजनोंपर अतिशय प्रेम उत्पन्न हो उन्हें सच्चा भक्त समझना चाहिये, और जिन्हें हरिजनोंपर प्रेम उत्पन्न न हो, उन्हें कच्चा समझो। ऐसा कच्चा न रह जानेका प्रयत्न करो।

१२२

सच्चा संबंधी भिन्न है और तुम जिसके पीछे पीछे फिरते हो वह संबंधी भिन्न प्रकारका है

अपने कुटुम्बी तथा मित्रोंपर हमारा अतिशय प्रेम होता है क्योंकि हम समझते हैं कि ये हमारे हैं, हमपर उन्होंने उपकार किया है तथा हमने उनपर उपकार किया है और इन उपकारोंका बदला लेने-देनेका समय अब आ रहा है, इसीलिए उनके लिए हम अधर्म करते हैं, गुलामी भोगते हैं, तड़प-तड़प कर मरते हैं तथा उन्हें क्षणिक सांसारिक सुख पहुंचानेके लिए स्वयं नरकमें जाना पसंद करते हैं।

बेशक, यह सत्य है कि संबंधिओंके स्नेह तथा अपनी स्थितिके अनुसार उनके लिए अपने कर्त्तव्यका अवश्य पालन करना चाहिये, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है और इन कर्त्तव्यों के करनेका नाम ही धर्म है किन्तु बहुत स्थानपर ऐसा देखा जाता है कि मानो सम्बन्धिओंके लिए प्रभुको भूल जानेमें आता

है अथवा प्रभुके लिए बाहरी वैराग्य लेकर संबंधियोंको छोड़ देना पड़ता है, किन्तु यह नहीं सोचते कि ये दोनों मार्ग अपूर्ण हैं क्योंकि हमारे पवित्र आर्यधर्मके दो मुख्य कर्त्तव्य हैं—पहला पवित्र कर्त्तव्य प्रभुपर प्रेम तथा दूसरा जगतके साथ अभेद वृत्ति। सब जीवोंके साथ "आत्मौपम्येन सर्वत्र" के अनुसार व्यवहार करनेकी रीति अर्थात् जैसी हमारी आत्मा है वैसेही सबकी है, हमें जैसे सुख अच्छा लगता है और दुख अच्छा नहीं लगता, ऐसेही जगतके सब जीवोंको सुख अच्छा लगता है और दुख अच्छा नहीं लगता, इसलिए हमारे कारण कोई जीव दुखी न हो, बल्कि सबको आनन्द हो, इस प्रकार वर्त्तना हमारे श्रेष्ठ धर्मका दूसरा उत्तम कर्त्तव्य है, किन्तु अफसोस कि इन दोनों-मेंसे किसी कर्त्तव्यका भी हमें अच्छी तरह पालन करना नहीं आता, जिससे मानो बाबाजी बनकर कुटुम्ब स्नेहको लात मार देते हैं या स्त्रीके रूप तथा हावभावसे मोहित हो जाते हैं, मा-बापके उपकारसे दब जाते हैं, लड़कोंकी भविष्यकी आशामें पद-दलित हुआ करते हैं, स्नेहियोंके साथ स्नेह बढ़ानेका प्रयत्न किया करते हैं, संसारमें मान प्राप्त करनेके लिए विवेकके कायदोंको तौक़ गलेमें पहन लेते हैं, जातिमें अच्छा समझा जानेके लिए, जो अब हमें अच्छे नहीं लगते, उन पुराने कायदों की बेड़ीमें पड़े रहते हैं और अमलदारों तथा गुरुजनोंको प्रसन्न रखनेके लिए पुराने विचारकी गुलामी जैसे जालमें बँध जाते हैं किन्तु यह नहीं सोचते कि ये संबंधी कब तक विद्यमान रहेंगे। ये बाहरी नियम जिनका हम, अपना अंत:करण बेचकर पालन करते हैं, कब तक हमारे काम आयेंगे ? स्त्रीमें जितना रूप है उसकी अपेक्षा जगतकी सब सुंदरताको बनानेवाले सर्वशक्तिमान प्रभुमें कितना अधिक रूप होगा, इसका तो

विचार करो ! हमारे ऊपर मा बापका बहुत ही अधिक उपकार है किन्तु उससे भी बढ़कर दयालु प्रभुका कितना अनंत उपकार है इसका तो विचार करो। अपने मित्रके स्नेहका बदला हम स्नेहसे देना चाहते हैं तब अनंत ब्रह्मांडके नाथके पवित्र स्नेहकी ओर तो ज़रा देखो ! और इस स्नेहका बदला किस प्रकारके स्नेहसे देना चाहिए इसका तो कुछ विचार करो ! लड़कोंकी भविष्यकी मीठी मीठी आशामें जीवनका अधिकांश भाग देते हो किन्तु करुणाका भण्डार सर्वशक्तिमान परमात्मा लड़कोंसे बढ़कर हमारी कितनी आशायें पूरी कर सकेगा, इसपर ज़रा विचार करो ! राजाओं तथा गुरुजनोंको प्रसन्न रखना तो उचित है किन्तु इन सभोंकी अपेक्षा, इन सभों-को तथा चन्द्र, सूर्य, इन्द्र, बिजली, आकाश, पाताल, स्वर्ग, नरक और मोक्षधामको बनानेवाले सर्वशक्तिमान आदिअन्त-रहित पवित्र पिता परमेश्वरकी सत्ता कितनी अधिक है, इसे तो देखो ! जातिका, संसारका, विवेकका, कुटुम्बकी रीतिरि-वाजका तथा राज्यके कायदोंका पालन करना तो बहुत आव-श्यक है किन्तु इनकी अपेक्षा नरककी अग्निको सुलगानेवाले, आत्मज्योतिको प्रकट करनेवाले तथा जगतकी उत्पत्ति और प्रलय करनेवालेकी आज्ञामें कितना बल होगा, इसका तो खयाल करो ! इन सबपर विचार करके जो तुम्हें सच्चा संबंधी मालूम पड़े उसपर प्रेम रखो, उसके पास जाओ, उसकी सेवा करो, उसके सम्बन्धिओंका सामान करो तथा उसका होकर रहो, यही संसार-सागरसे तरनेका मार्ग है, इसलिए भाइयो ! ईश्वरी स्नेहके लिए, प्रभुके लिए सब प्रकारका प्रेम कायम रखो, किन्तु उसमें जो सच्चा सम्बन्धी हो उसे बाहर निकाल लो तथा उसका अधिक पूजन करो।

१२३

दूसरेका इन्साफ करनेके पहले अपना हृदय टटोलो

एक महात्मा थे। वे चौमासामें किसी ग्राममें रहकर कथा
र रहे थे। कुछ दिन पश्चात् यात्रा पर जानेके लिए वे उद्यत
ए। उन्हें पहुँचानेके लिए गये हुए भक्तोंने कहा, महाराज!
ब गाड़ी छूटनेका समय हो गया है, इसलिए कोई अन्तिम
पदेश दीजिये। आपकी सब बातें एकसे बढ़कर एक सरस हैं
और यदि उनका पालन किया जा सके तो क्षणभरमें कल्याण
ो जाय, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है तौभी आपकी अमृतरूपी
णी सुननेसे हमें तृप्ति नहीं होती। अब आपसे कब भेंट
गी, इसका कोई निश्चय नहीं है, इससे अब तो कोई सर्वश्रेष्ठ
त कह दीजिये।

यह सुनकर उस महात्माने कहा—भाइयो! विद्याका पार
हीं है, ज्ञानकी सीमा नहीं है, बुद्धिके विलासपर विलास
और चमत्कारों पर चमत्कार भरे हुए हैं। एकही बातपर
ाफिराकर सैकड़ों दृष्टान्त दिये जा सकते हैं और इसलिए
ादिकालसे अंतकाल तक संसारका प्रत्येक मनुष्य प्रति पल
दि धर्मकी बात किया करे तो भी यह समाप्त नहीं हो सकती
ौर जब तक इन्हींके अनुसार चला न जाय तब तक किसी
रहसे भी उद्धार नहीं हो सकता। ऐसा समझकर जो कुछ
ुझे कहना था मैं तुम्हें पहलेही बहुत बार कह चुका हूँ, तो
भी अब तुम सर्वश्रेष्ठ उपदेश सुनना चाहते हो तो ध्यान
दर सुनो:—

श्रीपरमेश्वरकी कृपासे श्रीसद्गुरु महाराजने मुझे तो केवल
यही सिखाया है कि किसीका न्याय करते समय पहले

अपना हृदय टटोलो तथा उससे दूसरोंकी तुलना करो। इसके अतिरिक्त मुझे और कुछ कहना नहीं है क्योंकि यही धर्मका सार है, पापसे बचनेका उपाय है, यही उच्च प्रकारका य[illegible] तथा धर्मका सरल मार्ग है और यही प्रभुकी प्रिय वस्तु [illegible] इसीसे श्रीकृष्णभगवानने श्रीमद्भगवद्गीतामें भी कहा है:—

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन।
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः॥ (अ. ६ श्लो० [illegible]

हे अर्जुन! जिन कामोंसे हमें सुख होता है, उनसे दूसरों[illegible] भी सुख होता है और जिन कारणोंसे हमें दुख होता है उन[illegible] दूसरोंको भी दुःख होता है, इस प्रकार अपने अंतःकरणसे [illegible] दूसरोंकी तुलना करता है और सबको आत्मवत् समझता [illegible] उसे मैं उत्तम योगी समझता हूँ।

हमारी यही इच्छा रहती है कि सब लोग हमारे सा[illegible] नीति तथा धर्मसे व्यवहार करें तो अच्छा है, इसी प्रकार ह[illegible] भी सबके साथ नीति व धर्मसे व्यवहार करना चाहिये। जैसे कठोर वचन हमें अच्छे नहीं मालूम पड़ते, वैसेही दूसरोंको भी अच्छे नहीं लगते, इससे हमें किसीको कड़ी बात नहीं कहना चाहिये। हमारी चीज़ चोरी चली जाय तो हमें [illegible] दुख होता है वैसे ही दूसरोंकी चीज़ चोरी चली जानेपर उन्हें भी दुख होता है। इससे हमें किसीकी भी चीज़ चुराना नहीं चाहिये। अपना कुटुंब पवित्र रहे, यह सब चाहता है और उससे कोई भूल हो जानेपर हमें दुख होता है, वैसे ही सब लोग चाहते हैं कि हमारा कुटुंब पवित्र रहे और कोई भूल होनेपर उन्हें भी दुख होता है, इसलिए सबको आत्मवत् समझकर किसीकी पवित्रताको हानि नहीं पहुंचाना चाहिये।

तें दुख न हो और बहुत काल तक जीवित रहें, यही हम चाहते हैं, इसी प्रकार जगतके सब जीव सुखसे बहुत काल तक जीवित रहनेकी इच्छा रखते हैं, इसलिए सब जीवोंको आत्मवत् समझकर किसी भी जीवकी हिंसा नहीं करना चाहिये और न ऐसा काम करना चाहिये जिससे उन्हें दुख पहुँचे। हम नहीं चाहते कि दूसरा कोई हमारे सामने झूठ बोले, वैसेही हमारा झूठ बोलना दूसरोंको भी अच्छा नहीं लगता, इससे हमें झूठ न बोलना चाहिये और भूल हो जानेपर हम चाहते हैं कि कृपालु ईश्वर हमारे अपराधको क्षमा कर दे, इसी प्रकार हमारे दूसरे भाई बहन भी भूलोंसे भरे हुए हैं, इससे उनकी भूलोंपर क्रुद्ध न होकर उनकी भूलोंको हमें क्षमा करना चाहिये। इस प्रकार अपने सुख दुखोंसे दूसरोंके सुख दुखोंकी तुलना करके सबको आत्मवत् जानकर किसीको दुख न हो बल्कि सबको सुख हो, इस प्रकार जो व्यवहार करता है उसे श्रीकृष्ण भगवानने सबमें उत्तम योगी कहा है क्योंकि यह प्राकृतिक, स्वाभाविक या अंतःकरणका धर्म है, यही संसार भरके सब जातिका सामान्य तथा प्रभुका प्यारा धर्म है, इसलिए भाइयो! पहले अपना अंतर टटोलो तथा उससे दूसरोंकी तुलना करना सीखो, इससे धीरे-धीरे ईश्वर कृपासे तुम भी उत्तम मनुष्य हो जाओगे।

१२४

हम किस प्रकार दूसरोंका न्याय करें ?

एक भक्तराज महाराजने हरिजनोंसे कहा—किसीका न्याय करनेके पहले अपना अंतर टटोलो तथा उससे दूसरोंकी तुलना

करो। यह सुनकर वहांपर बैठे हुए एक मनुष्यने कहा-दूसरों
इन्साफ़ तो गाँवका न्यायाधीश करते हैं तथा सबका न्याय प्र
करते हैं। हम कहां किसीका इन्साफ करते हैं? दूसरों
इन्साफ़ करनेकी सत्ता हमारेमें कहां है? महाराजने कहा-यदि
ईश्वरने हमें ऐसी सत्ता दी होती और हम दूसरोंका इन्सा
करते होते तो इसमें कोई बुराई नहीं है, किन्तु हमारे हाथ य
सत्ता न होनेपर भी हजारों मनुष्योंका, सैकड़ों बातका न्या
कर डालते हैं। यह बड़ा भारी पाप है, इससे इसे छोड़नेके लि
हम कहते हैं।

जब हम सुनते हैं कि फलां मनुष्य बड़ा क्रोधी है, तब हम
उसपर मुंह बिगाड़ते हैं, उसकी निन्दा करते हैं, उससे दूर
रहना चाहते हैं और समयपर उसको फजीहत करनेसे भी
बाज नहीं आते, किन्तु यह नहीं सोचते कि पहले हम भी घरसे
जरा सी बातपर क्रुद्ध होकर भागे थे। मित्रसे झगड़ा हुआ तो
उससे बोलना तक छोड़ दिया। स्त्रीके साथ मतभेद हो गया तो
उसे बहुत दिनों तक कैसा हैरान किया था? और जरा सी
भूलके लिए नौकरोंपर तथा लड़कोंपर कैसा मिजाज बिगाड़ते
हैं? इसका तो विचार करो! यह सब क्रोध कहा जायगा
अथवा नहीं? दूसरोंके क्रोधकी बात करते हो तथा उन्हें नीचा
दिखाते हो किन्तु अपना अन्तर तो टटोलो!

दृष्टान्तः—तुमसे कोई कहे कि यह मनुष्य व्यभिचारी है तो
तुम उसे आंखें दिखाते हो, उससे दूर दूर भागते हो और
उसके बारेमें यदि कोई अच्छी खराब बातचीत हुई हो तो
तुम उसकी हंसी उड़ाते हो तथा नमक मिर्च लगाकर झूठी
सच्ची बातें करते हो, किन्तु स्वयं कैसे हो, इसकी भी कुछ
खबर है? दूसरोंके पापकी बात करके उनका इन्साफ करते

देते हैं तथा उनके पापके भागीदार बनते हैं किन्तु अपने हृदयपर हाथ रखकर इस प्रकारके पापके बारेमें भी कभी विचार किया है? विचार करनेपर मालूम होगा कि फलां देशमें नज़र बिगड़ गयी थी, श्वसुरालयमें विवाहपर ज़रा मन चला था, एक समय रेलवे स्टेशनपर बुरे बुरे विचार उत्पन्न हो गये थे, नाट्यशालाके किसी प्रसंगपर मन फडक उठा था, गाँवमें अकेले रहनेपर पापी विचार आ जाया करते थे, एक बार गंगा स्नान करने गया था तो वहाँ पापवासनाका स्फुरण हुआ था, एक बार ईश्वरकी उत्तम कलाका सुन्दर नमूना रूप अद्भुत सुंदरताकी मूर्तिको मार्गमें देखा था, उस समय उसे देखकर ईश्वरकी महिमा समझनेके बदले नीच विचारोंसे उसे आँखें फाड़-फाड़कर देख रहे थे, यह सब याद है क्या? और अधमउद्धारण, पापनाशक, क्षमा-सागर, दयालु प्रभु हमें क्षमा करें किन्तु सत्य कहो कि किसी समय पवित्र मंदिरमें भी क्या तुम्हारा मन नहीं बिगड़ जाया करता था। अपने हृदयपर हाथ रखकर अपनी भूलोंको याद करनेसे समझमें आ जायगा कि दूसरोंको व्यभिचारी कहनेका हमें कुछ भी अधिकार नहीं है।

अब तीसरा दृष्टांत सुनो। कहा जाता है कि अमुक व्यक्ति बड़ा लोभी है, इसका मुँह जले। इस समय उसका नाम क्यों लिया? यह किसी दिन बिना मौत मरेगा तथा अपने धनकी रक्षा करनेके लिए सांपका अवतार लेगा। इस प्रकारकी दूसरों की बातें करके नाहक हम अपने मनको बिगाड़ते हैं, किन्तु ऐसी बातोंमें अपना निजी आचरण कैसा है, इसकी भी कुछ खबर है? हम अपने मालिककी कितनी चोरी करते हैं, इसका तो विचार करो। भाईको हिस्सा देनेमें कितना लोभ किया था तथा उसे कितना दुख पहुँचाया था, इसे तो देखो। खिस्सामें

पैसा था, मनमें दया आ गयी थी, तथा भिखारी भी सचमुच लाचार था किन्तु लोभके वशीभुत होकर उसे धुतकार दिया था, यह क्या भूल गये ? रसोइया तथा नौकरके साथ पटी नहीं तो कुछ दिनका वेतन रोक रखा है, यह क्या याद है ? बाजार जरा तेज थी ग्राहकोंको दबाकर कांटा मार दिया, यह क्या याद है ? पैसा होनेपर भी लोभवश लड़केको अच्छी तरह नहीं पढाया तथा उसका स्वार्थ बिगाड़ा, क्या मालूम है कि यह कितना बडा पाप है? थोडा स्वार्थके लिए तथा लोकलाजके लोभसे लड़कीको खाईमें झोंक दिया और उसका जीवन नष्ट कर दिया, यह लोकलाज तथा मान-प्राप्तिका लोभ क्या छोटा है ? माँ बापका, गुरुओंका तथा सगे-संबंधिओंका जो तुमपर अधिकार है उन अधिकारोंपर लोभमें पड़कर कैसा कुठाराघात किया है, इसका तो विचार करो ! यदि इन सब बातोंपर विचार करोगे तो समझमें आ जायगा कि अपने आंखमें फूली पड़ी हुई है उसका तो उपाय कुछ करने नहीं बनता तथा दूसरेके आंखमें पड़े हुए कणको निकालनेके लिए दौड़ते हैं।

भाइयो ! इसी प्रकार दूसरोंकी बातें करनेमें, दूसरोंकी भूल निकालनेमें तथा दूसरोंका न्याय करनेमें तो हम बड़े बहादुर हैं किन्तु यह नहीं सोचते कि यदि हम दूसरोंका इन्साफ करेंगे तो प्रभु हमारा इन्साफ करेगा और यदि दूसरोंका इन्साफ नहीं करेंगे तो प्रभु भी हमारा इन्साफ नहीं करेगा, इसलिए उस दयालुकी दया प्राप्त करनेके लिए पहले अपने हृदयको तोल करके तब दूसरोंकी बात करो। ऐसा करनेसे दूसरोंका दोष देखनेका मन न करेगा, किसीपर राग-द्वेष न होगा तथा किसीपर हमसे अन्याय न होगा और ऐसी समता आ जानेपर तथा सबको आत्मवत् जान लेनेपर प्रभु

ष आनेपर तथा सबको आत्मवत जान लेनेपर प्रभु दूर
हां रह जायगा ! इसलिये दूसरोंका दोष देखनेके पहले अपना
दोष खोजते रहो, इससे सब प्रकारके पापोंसे बच सकोगे तथा
ईश्वरके प्रियपात्र बन सकोगे।

१२५

ईश्वरने हमें जो कुछ दिया है उसीका वह हिसाब माँगेगा इससे जो कुछ मिला है उसीका उत्तम उपयोग करना चाहिये

बहुतसे मनुष्य कहते हैं कि मेरे पास पैसा नहीं है जिससे लाचार हूँ, पैसा होता तो रंग दिखा देता। कोई कहता है कि समय नहीं है जिससे चुप बैठा हूँ यदि समय मिले तो खूब उथल-पुथल मचा दूँ। कोई कहता है कि प्रभुने मुझे बुद्धिही नहीं दी तो क्या करूँ, यदि शास्त्रोंमें मेरी बुद्धि काम देती होती तो मैं बहुत कुछ कर दिखाता। कोई कहता है कि मेरे हाथमें सत्ताही नहीं है तो क्या करूँ ? थोड़ी सी भी सत्ता मिल जाय तो चमत्कार दिखा दूँ और कोई कहता है कि समय बदल गया जिससे कोई चारा नहीं है, नहीं तो कठिन क्या है, जो कहता करके दिखा देता। धर्मका कार्य करनेमें इसी प्रकार सब मनुष्य कोई कोई बहाना निकाला करते हैं और बहुतसे मनुष्य पैसेही बहानेमें रह जाया करते हैं तथा बिना कुछ किये हुये खाली हाथ चले जाते हैं। ऐसे बहाना निकालनेवालोंसे एक साधु महात्मा कहते थे—भाइयो ! यह नहीं है और यह नहीं है, ऐसा होता तो ऐसा करता और ऐसा होता तो ऐसा हुआ होता, ऐसी तुच्छ बातोंमें क्यों पड़े रहते हो ?

क्योंकि जो कुछ तुम्हें दिया गया है उसीका हिसाब मांगा जायगा, जो तुम्हें नहीं मिला है उसके लिए कोई तुमसे पूछेगा भी नहीं, इसलिए इस समय जो कुछ तुम्हारे पास है उसीके अनुसार चलो। प्रभु तुमसे तुम्हारी शक्ति भरकी आशा रखता है। तुम्हारी शक्तिसे बाहरकी कोई वस्तु वह तुमसे नहीं मांगता। तुम्हें जितनी बुद्धि, बल, पैसा, सत्ता, अनुकूलता और जितना समय दिया गया है, उसीका हिसाब तुमसे लिया जायगा। उस समय तुम्हारा यह जवाब कुछ भी काम न आयेगा कि मेरे पास पैसा नहीं था, यदि पैसा होता तो धर्मशाला बनवाता, किन्तु प्रभु कहेंगे कि मैं धर्मशाला तुमसे बनवानेके लिये कब कहता हूँ। मैं तो उस पैसेका हिसाब मांगता हूँ जो कि तुम्हारे पास था। इस पैसेका तुमने क्या किया? तुम्हारे पास एक अधेलेका चना मांगनेके लिये एक भूखा मनुष्य आया था, उसे तुमने धमका कर निकलवा दिया और उसे व्यर्थ पान-पत्तोंमें तथा बीड़ी पीनेमें उड़ा दिया, उसीका हिसाब मैं चाहता हूँ। सोचो तो सही कि धर्मशालाके संबंधमें तुमसे कौन पूछ रहा है?

इस समय तू कहता है कि पैसा होता तो सदाव्रत चलाता किन्तु मुझे तेरे सदाव्रतका काम नहीं है। तूने पाप करके, दगासे, ज़ोर जुल्म करके, गरीबोंको सताकर, खुशामद करके, लोभमें व झूठ बोलकर अधर्मसे जो पैसा बटोरा है तथा ज़मीनके नीचे गाड़ रखा है मैं तो तुझसे उसका हिसाब मांगता हूँ! अब यह तेरे किस काममें आयेगा? जो मैंने तुझे नहीं दिया है उसका हिसाब नहीं चाहता, किन्तु जो कुछ तुझे सरलतासे मिला है, हाय हाय करके प्राप्त किया है तथा मेरा मेरा करके लिया है, ज़मीनमें गड़े हुए उन रुपयोंका हिसाब दे। इन्हें तूने अधर्मसे

लिया है जिसका पाप तेरे सिरपर चढ़ा हुआ है किन्तु धर्मके मार्गपर व्यय करनेका पुण्य कहां है ? विचार कर कि जिस समय तू संसारमें था, तब तूने क्या ऐसा कोई कार्य किया था ? अपने ऊपर हुक्मनामा, वारंट निकलवाना, पुलिसकी मार खाना, अपनी आबरू नष्ट करना, जेलमें जाना तथा किसी नालायक मूर्खके लिए पैसा छोड़ जानेका कार्य क्या तूने नहीं किया ? उस समय तो किसीको तूने एक पाई भी नहीं दिया, किसीके साथ जरा भी भलाई नहीं की तथा अब सबको जहांका तहां छोड़कर क्यों चला आया ? तब तो "आगे हाथ पीछे हाथ व रक्षा करें गोरख नाथ" था तिसपर भी पाप किया, मेरा अपराधी हुआ, महाभयंकर नरककी अग्निको स्वीकार किया, तथा पाई पाई जोड़ बटोर कर जमीनमें गाड़ आया ! बता तो सही, यह मूर्खता किस कामकी है ?

अनन्तर एक गरीब स्त्रीसे पूछा कि बता तूने कौन कौन धर्म किया है ? उसने उत्तर दिया-मेरे पास कुछ भी नहीं था। मैं तो दुःखसे किसी न किसी प्रकार अपना पेट भर लिया करती थी। मैं धर्म कहांसे करती ? यदि आपने दिया होता तो मैं प्रसन्नतासे धर्म करती। धर्म करना किसे अच्छा नहीं लगता ? किन्तु मेरे पास कुछ नहीं था तो मैं क्या करूं ? उस समय प्रभु कहेंगे कि मैं तुझसे धर्मशाला नहीं मांगता हूं किन्तु मैंने तुझे जो चक्की दिया था और जिसे तू दूसरोंको देने नहीं देती थी, वह क्या याद है ? वह चक्की तेरे साथ श्मशानमें नहीं आ सकती थी, उसका पत्थर तुझे स्वर्गमें नहीं लेजा सकता था, इससे तेरे आत्माका कल्याण नहीं हो सकता और न इसी चक्कीपर तेरा जीवनही निर्भर था तो भी तू अपने पड़ोसिनको पीसे देने न देती थी। अरे बुड्ढी ! जब कि मेरे दिये हुये पत्थर को

जो कि गलेमें बाँधा जा नहीं सकता, दूसरोंको तू नहीं दे सकं
तब यदि मैंने हीरा मोती दिया होता तो न मालूम तू क्य
करती और उन्हें न मालूम किस प्रकार छिपा कर रखती
यदि तू चाहती तो इसी पत्थरसे बहुत सा धर्म कर सकती थ
किन्तु तूने मेरी तथा धर्मकी अपेक्षा इस पत्थरको अधिक प्यार
समझा, इसलिये यहाँसे जा और पुनः जो इससे बड़ा पत्थ
दिया गया है उसके साथ जीवनभर अपना सर पटक। स्त्रीने
कहा—कृपानाथ! दया करो, दया करो। इस पत्थरसे मेरा
दिल टूट गया है, मेरा कलेजा फूल गया है तथा मैं दुखित हो
गयी हूँ इससे अब मेरा इस पीड़ासे छुटकारा दीजिये। अब
मुझे दुबारा यह दुख क्यों दे रहे हैं? अब मैं ऐसा नहीं करूंगी।
मुझपर दया कीजिये। तब प्रभुने कहा—मैं तो भावनाके अनु-
सार फल देता हूँ। तेरे मनमें पत्थरसे बड़ी आसक्ति थी, वह
तुझे बड़ी प्यारी थी और उस चक्कीके खराब होनेसे तेरा मन
खराब हो जाता था, इसलिये फिर उससेभी बडा पत्थर तुझे
दिया गया है। अपनी चक्कीको तूने किसीको देने नहीं दिया,
इससे तुझको दण्ड देनाही पड़ेगा।

अनन्तर वहाँ पर एक धोबी आया। उससे पूछा कि तूने
कौनसा धर्म किया है? उसने कहा—मेरे पास थाही क्या जो
मैं धर्म करूँ। मेरे पास कपड़ा गरम करनेका लोहा तथा कपड़ा
धोनेका पत्थर यही दो चीज़े थीं, इनसे मैं क्या धर्म करूँ?
प्रभुने कहा कि ऐसा जवाब क्यों देते हो? मैं तुमसे एक तिल-
भर भी अधिक तो माँग नहीं रहा हूँ, मैंने जो कुछ तुम्हें दिया
था उसीका हिसाब मैं चाहता हूँ। बड़े कामोंसे ही लोग तर
सकते हैं ऐसा तुम क्यों समझ रहे हो? मैंने तुम्हें जिस स्थिति-
में रखा है उसी स्थितिमें कल्याणके साधन हैं, यह बात क्यों

नहा जाते हो ? मुझे तो तुमसे बड़ा काम न कराकर प्रतिदिनके व्यवहारी कामोंसे ही तुम्हें मोक्ष देना है, इसीसे शास्त्रमें कहा है कि अपने कर्मको उत्तम रीतिसे करनेवालेही सिद्धि पाते हैं और अपने धर्मको अच्छी तरहसे पालन करनेवालेका ही कल्याण होता है। दूसरेका धर्म पालनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। तू गरीब था इसलिए मैं तुझसे गरीबोंकाही धर्म मांगता हूँ। मैं तुझसे धीमन्तोंका धर्म तो चाहता नहीं। तू कहता है कि मेरे पास कुछ था नहीं तो धर्म कहाँसे करूँ? मैं तुमसे यह तो कह नहीं रहा हूँ कि तूने पुल क्यों नहीं बँधवाया? मैं तो केवल इतनाही पूछता हूँ कि एक गदहा जो मैंने तुझे दिया था उसे तूने दुख क्यों दिया? उसे निर्दयतासे मारता था, भूखा रखता था तथा उसपर अत्यधिक भार डालता था, यह क्या स्मरण है? तुम्हारे पास पैसा क्या नहीं था? जातिका चौधरी बननेके लिये, गाँवमें बड़प्पन दिखानेके लिए, एकपर दूसरी स्त्री रखनेके लिये, नशा पीनेके लिए, तथा कपड़ा धोनेकी कूंड़ीके नीचे गाड़ कर रखनेके लिये पैसा मिला था किन्तु जो गदहा तेरा काम करता था उसे घास देनेके लिये पैसा नहीं था क्यों? यह गदहा भी क्या मेराही जीव नहीं है? तेरे हिसाब यह गदहा है किन्तु याद रख कि तेरे जैसे पापी मनुष्योंकी अपेक्षा ऐसा निर्दोष जीव मुझे अधिक प्यारा है क्योंकि सब जीव मेरेही बनाये हुए हैं तथा मेरे यहाँ सब जीव अपने असल स्वरूपमें एक समान हैं, इसलिए किसी भी जीवको दुख देना मुझे दुख देनेके समान है और तुझे सहायता देनेके लिए, तुझे आगे बढ़ानेके लिए तथा तेरी परीक्षा लेनेके लिए तुझे यह गदहा दिया था। यदि इस परीक्षामें उत्तीर्ण हुआ होता तो तेरा कल्याण होता, किन्तु तू अपने मलीन स्वार्थसे

ऐसा अंधा हो गया था कि तू स्वयं गद्धा बन गया, जिससे इस गद्धेका मूल्य नहीं समझ सका। यह गद्धा तेरे पास रखी हुई मेरी धरोहर थी, यही तुझे ऊपर चढ़ानेकी सीढ़ीरूप था, यही गद्धा संसार-सागर तरनेके लिए तेरा सहारा था, इसीके द्वारा तुझपर मेरी अनुकम्पा हुई थी और यही गद्धा तेरे कल्याणका साधन था, क्योंकि यही गद्धा तेरा तीसरा दर्जा था। यदि इसमें उत्तीर्ण हुआ होता तो चौथेमें जाता अर्थात् तुझे घोड़ोंका सरदार बनाता। घोड़ोंकी सरदारीमें यदि तू उत्तीर्ण होता तो तुझे पालकी देता, पालकीका मान बढ़ानेपर क्षत्रिय देता, अनन्तर देव बनाता और यदि तू देवत्वको सुशोभित करता तो तुझे मोक्ष देता, किन्तु इस गद्धेको भी जब तू रख नहीं सका तब तुझे ऊँचा दरजा कहांसे देता। जो अपने कर्त्तव्यका ठीकसे पालन नहीं कर सकता, उन अमलदारोंको राजा नीचे पदपर उतार देता है और जो विद्यार्थी ऊँचे श्रेणीमें नहीं चल सकता, उसे गुरु निम्न श्रेणीमें उतार देता है इसी प्रकार जो मनुष्य अपने धर्मका पालन नहीं करता, उसे मैं नीच योनिमें भेज देता हूं, इसलिए ओ नालायक! आगे बढ़नेके लिए दिये हुए साधनका अपनी मूर्खतासे तूने लाभ नहीं उठाया बल्कि उलटे उसका दुरुपयोग किया, इसलिए जा तू गद्धा हो जा क्योंकि तूने इस गद्धेका जैसा बुरा हाल किया है, तेरी उससे भी बुरी गति होनी चाहिये।

बोल तू क्या कहता है? अरे बापरे! क्षमा कीजिये, क्षमा कीजिये! मेरी बुद्धि नष्ट हो गयी थी। यदि मुझे बुद्धि होती तो बहुतसे मनुष्योंको अच्छे मार्गपर ले जाता। इसपर प्रभु कहते हैं कि यह मैं तुझसे कहां कह रहा हूं, कि तू बहुतसे मनुष्योंको विद्वान बना। तुझे गणना आती थी कि नहीं, इसे

तूने अपने लड़कोंको क्यों नहीं बताया ? तेरी स्त्री तो ते
कहना मानती थी। उसे तूने क्यों नहीं समझाया ? तु
अधिक ज्ञान मिला था, यह सत्य है किन्तु सामान्य समझ
दी। इसका क्या तूने उत्तम उपयोग किया है ? अपने भ
बंधुओंके साथ हठ करके लड़ता था तब क्या तुझे माल्
नहीं था कि ये मेरे भाई हैं ? उस समय क्या माल्म नहीं
कि एक दिन मुझे भी मर जाना है ? उस समय क्या माल्
नहीं था कि मरनेके बाद मेरा न्याय होगा ? और क्या माल्
नहीं था कि मेरे नियमोंसे कोई निकल नहीं जा सकता ? य
सब जानते हुए भी तूने अपने बंधुओं तथा बालकोंके सा
अच्छा बर्ताव नहीं किया। इसीका मैं हिसाब चाहता हूँ। जिस
बातको मैंने तुझे बुद्धि नहीं दी थी उसके विषयमें मैं तुझसे
नहीं पूछता, इसलिए 'मेरेमें बुद्धि होती तो यह करता और
वह करता' यह जवाब किस कामका ? ऐसा होता तो ऐस
करता और ऐसा होता, ऐसी भविष्यकी बातें मुझे नही
चाहिये। मुझे तो जो कुछ हो गया है उसका हिसाब दो और
जितना मैंने तुझे दिया था उसीका हिसाब दो।

भाइयों ! अनंत ब्रह्मांडका नाथ सर्वशक्तिमान परमात्मा
स्वयं जब इस प्रकार पूछेगा, उस समय हम क्या उत्तर देंगे ?
इसलिए ऐसा होता तो ऐसा करता और ऐसा हो तो ऐसा
करूँगा, आदिका बहाना छोड़कर तथा व्यर्थकी आशामें न रह-
कर ईश्वरकी कृपासे जो कुछ हमें मिला है उसीका सदुपयोग
करनेका प्रयत्न करो और सर्वदा ऐसी ही भावना रखो कि:—

पद

सबका करो कल्याण दयालु प्रभु, सबका करो कल्याण,
नरनारी पशु पक्षी सहित जीव जंतुका तमाम—दयालु०

जगके वासी सब सुख भोगें, आनन्दित रहि आठो जाम—दयालु०

दुनियामें दरद दुकाल पड़े नहिं, लड़े नहिं कोई ग्राम—दयालु०

सब जगह पर सुख बढ़े, अरु बढ़े धन धान्य—दयालु०

कोई कोईका बुरा न चेते, सबकी इच्छा सब समान—दयालु०

अपने अपने धर्मानुसार सब भजें भगवान—दयालु०

नारायण ! नारायण !! नारायण !!!

हमारी प्रकाशित पुस्तकें

बंकिम-ग्रन्थावली (प्रथम खण्ड)—बंकिम बा
के 'आनन्दमठ' 'लोकरहस्य' तथा 'देवी चौधरानीका' अविकल
अनुवाद। पृष्ठ-संख्या ५१२। मूल्य १) सजिल्द १।~)॥। द्वितीय
संशोधित संस्करण शीघ्र छपेगा।

गोरा—जगद्विख्यात् रवीन्द्रनाथ ठाकुर कृत 'गोरा
नामक पुस्तकका अविकल अनुवाद। पृष्ठ-संख्या ६८८। मूल्य
।।~)॥, सजिल्द १।≋)। द्वितीयावृत्ति शीघ्र छपेगी।

बंकिम-ग्रन्थावली (द्वितीय खण्ड)—बंकिम बाबू
के 'सीताराम' तथा 'दुर्गेशनंदिनीका' अविकल अनुवाद। पृष्ठ-
संख्या ४३२, ॥।~)॥, सजिल्द १≋)।

**चंडीचरण-ग्रन्थावली (प्रथमखण्ड) अर्थात
टामकाकाकी कुटिया**—Uncle Tom's Cabin के आधा-
रपर स्वर्गीय चण्डीचरणसेन लिखित 'टामकाकार कुटीर' का
अविकल अनुवाद। पृष्ठ-संख्या ५९२। मूल्य १≠)॥, सजिल्द १॥)

बंकिम-ग्रन्थावली (तृतीय खण्ड)—बंकिम बाबू
के 'कृष्णकान्तेर विल' 'कपाल-कुण्डला' तथा 'रजनी' का
अविकल अनुवाद। पृष्ठ-संख्या ४३२। मूल्य ॥।~)॥, सजिल्द १≋)।

चण्डीचरण-ग्रन्थावली (दूसरा खण्ड)—चण्डी-
चरणसेन लिखित "दीवान गंगागोविंदसिंह' का अविकल
अनुवाद। पृष्ठ-संख्या २६०। मूल्य ॥)।

वाल्मीकीय रामायण (बालकांड)—पृष्ठ-संख्या
बड़े साइज़के १९२ अर्थात् साधारण साइज़ के ३८४। मूल्य ॥)

वाल्मीकीय रामायण (अयोध्याकांड)—पृष्ठ संख्या बड़े साइज़के ३८४, अर्थात् साधारण साइज़ के ७६८ मूल्य १

वाल्मीकीय रामायण (अरण्यकांड)—पृष्ठ-संख्या बड़े साइज़के २०८, अर्थात् साधारण साइज़के ४१६ । मूल्य ॥

वाल्मीकीय रामायण (किष्किन्धाकांड)—पृष्ठ संख्या बड़े साइज़के २०८ अर्थात् साधारण साइज़के ४१ मूल्य ॥-) ।

वाल्मीकीय रामायण (सुन्दरकांड)—पृष्ठ संख्या बड़े साइज़ के २४० अर्थात् साधारण साइज़ के ४८० मू० ॥

स्वर्गका खजाना—आपके हाथमें है, पृष्ठ संख्या २६८ मूल्य ॥≠)॥

मूर्खराज और चतुरसिंह—बालोपयोगी, शिक्षाप्रद अत्युत्तम पुस्तक पृष्ठ-संख्या १३० मूल्य ।≠)॥ ।

वाल्मीकीय रामायण (लंकाकांड)—छप रहा है ।

वाल्मीकीय रामायण (उत्तरकांड)—छप रहा है ।

व्यवस्थापक—

सस्ती साहित्य-पुस्तक-माला कार्यालय

बनारस सिटी ।

अन्य उपयोगी पुस्तकें

बिहारी सतसई सटीक—७०० दोहोंकी पूरी टीका। टीका०-लाला भगवानदीन मू० १॥) संशोधित संस्करण शीघ्र छपेगा।

श्रीकृष्ण जन्मोत्सव—लेखक-श्रीयुत देवी प्रसाद 'प्रीतम' मूल्य केवल ।~), एँटीक कागजके सचित्र संस्करण का ।ɇ)

भ्रमर-गीत—महात्मा नन्ददासजी कृत, सम्पादक बाबू ब्रजरत्नदास मूल्य ɇ)

केशव कौमुदी—रामचन्द्रिका सटीक, टीकाकार लाला भगवानदीन द्वितीय संशोधित तथा परिवर्द्धित संस्करण शीघ्र छपेगा।

रहीम रत्नावली—(रहिमन विलासका संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण) संम्पादक पं० मयाशंकर जी याज्ञिक रहीमकी कविताओंका सबसे बड़ा संग्रह। पृष्ठ संख्या २५० के ऊपर मूल्य १)

विनय-पत्रिका—गो० तुलसीदास जी कृत टीकाकार श्री वियोगीहरि। पृष्ठ संख्या ७०० से ऊपर। द्वितीय संशोधित संस्करण शीघ्र छपेगा।

गुलदस्तए विहारी—अर्थात विहारी सतसईकी उर्दू पद्यमय टीका। लेखक-श्रीयुत देवीप्रसाद 'प्रीतम' मूल्य ॥ɇ) सचित्र राज संस्करण १॥)

भ्रमरगीत-सार—महात्मा सूरदास जी प्रणीत पाद टिप्पणी सहित। सम्पादक पं० रामचन्द्र शुक्ल। मूल्य १)

अनुराग-वाटिका—श्री वियोगी हरिजी प्र
व्रजभाषाकी कविताओंका संग्रह। मूल्य ।~)

तुलसी सूक्ति-सुधा—सम्पादक-श्री वियोगी हरि
इसमें जगन्मान्य गोस्वामी तुलसीदास जी प्रणीत समस्त प्र
की चुनी हुई अनूठी उक्तियोंका संग्रह किया गया है। प
टिप्पणी भी दी गयी है। पृष्ठ संख्या लगभग ५०० मूल्य २)

झरना—श्री जयशंकर 'प्रसाद' जी द्वारा लिखित
उत्तमोत्तम कविताओं का संग्रह। मूल्य ।≠)

भावना—लेखक-श्री वियोगी हरि। यह एक भाव
रिमक गद्य काव्य है। छपाई सफाई सुन्दर मूल्य ॥≠)

कुसुम-संग्रह—लेखिका श्रीमती बंग महिला, सं
दक पं० रामचन्द्र शुक्ल। इसमें रवीन्द्र नाथ ठाकुर, हेम
कुमार राय, रामानन्द चट्टोपाध्याय आदि धुरन्धर विद्वानों
गल्पों तथा लेखोंका अनुवाद है। सचित्र मूल्य १।)

मुद्राराक्षस सटीक—संपादक व्रजरत्नदास। पृ
संख्या ३५० मूल्य केवल १)

व्यवस्थापक—
साहित्य-सेवा-सदन,
बनारस सिटी।

Please keep it for future reference.

अक्टूबर, १६२६

सोलएजेन्सीकी,

प्रकाशित एवं प्रचारित

पुस्तकोंकी सूची

हमारा पता—

पुस्तक-भवन,

चौक, बनारस

अन्य बाहरी पुस्तकों के लिए बड़ा सूचीपत्र मँगाइए

सोल एजेन्सीकी

'साहित्य-सेवा-सदन' द्वारा प्रकाशित कुछ पुस्तकें

बिहारी-सतसई सटीक

[टीका० लाला भगवानदीन]

हिन्दी-संसारमें श्रृङ्गार-रसकी इसके जोड़की कोई भी दूसरी पुस्तक नहीं है यह अनुपम और अद्वितीय ग्रन्थ है; पर है जरा कठिन। इसी कठिनाईको दूर करनेके लिए कविवर लाला भगवानदीनजी, प्रो० हिन्दू-विश्व-विद्यालय, काशी ने अर्वाचीन ढंगकी नवीन टीका तैयार की है। टीका कैसी होगी, इसका अनुमान पाठक टीकाकारके नामसे ही करलें। इसमें बिहारीके प्रत्येक दोहेके नीचे उसके शब्दार्थ, भावार्थ, विशेषार्थ, वचननिरूपण, अलंकार आदि सभी ज्ञातव्य बातोंका समावेश किया गया है। संशोधित सचित्र संस्करण मूल्य १॥)

'सरस्वती' 'सौरभ' 'शारदा' 'विद्यार्थी' आदि पत्रिकाओं तथा बड़े बड़े विद्वानोंने इस पुस्तककी मुक्तकंठसे प्रशंसा की है।

This book is sanctioned as a reference book for Hindi Teachers in High Schools of Central Provinces and Berar.

—*Vide Order No. 6801, Dated 28-9-20*

श्रीकृष्ण-जन्मोत्सव

(लेखक—श्रीयुत देवीप्रसाद 'प्रीतम')

इस पुस्तकके परिचयमें हम केवल इतना ही कह देना चाहते हैं कि यह ग्रन्थ भगवान् श्रीकृष्णकी जन्म-सम्बन्धिनी पौराणिक कथाओंका एक खासा दर्पण है। घटनाक्रम, वर्णन-शैली तथा विषय-प्रतिपादनमें लेखकने कमाल किया

This book is sanctioned as a reference book for Hindi ...ers in High Schools of Central Provinces and Berar.

— Vide order No 6801, Dated 28-9-26

अनुराग-वाटिका

(प्रणेता— श्रीवियोगीहरिजी)

...योगीहरिजीसे हिन्दी साहित्य प्रेमीगण भलीभाँति परिचित हैं। साहित्य-...चिन्तनादि, व्रजमाधुरीसार कविकीर्तन, भावना आदि ग्रंथोंके देखनेसे ...साधारण प्रतिभाका परिचय मिल जाता है। इस पुस्तिकामें इन्हीं ...रिजी-प्रणीत व्रजभाषाकी कविताओंका संग्रह है। इतनी सजीव भावपूर्ण ...ताएँ बहुत कम देखी होंगी। छपाई-सफाई सुन्दर। मूल्य।–)।

गुलदस्तए विहारी

(लेखक—देवीप्रसाद 'प्रीतम')

...ी-सतसईके परिचय देनेकी कोई आवश्यकता नहीं, सभी साहित्य-प्रेमी ...से परिचित हैं। यह 'गुलदस्तए विहारी' उसी विहारी-सतसईके ...हुए उर्दू शेरोंका संग्रह है, अथवा यों कहिए कि विहारी-सतसईकी ...टीका है। ये शेर सुननेमें जैसे मधुर और चित्ताकर्षक हैं, वैसे ही ...ख्यालसे भी अनुपम हैं। इनमें दोहोंके अनुवादमें, मूलके एक भी ...नहीं पाये हैं, बल्कि कहीं-कहीं उनसे भी अधिक भाव शेरोंमें आगये ... इतने सरल हैं कि मामूली हिंदी जाननेवाला उन्हें अच्छी तरह समझ ... इन शेरोंकी पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी, पं० पद्मसिंह शर्म्मा, ...ा भगवानदीन, वियोगीहरि आदि बड़े बड़े विद्वानोंने मुक्तकंठसे प्रशंसा ...ऊपर विहारीका मूल दोहा देकर, नीचे प्रीतमजी-रचित उसी दोहे ... दिया गया है। मूल्य ॥।≈) सचित्र राजसंस्करण १॥)

सोल एजेन्सीकी

'साहित्य-सेवा-सदन' द्वारा प्रकाशित कुछ पुस्तकें

बिहारी-सतसई सटीक

[टीका० लाला भगवानदीन]

हिन्दी-संसारमें शृङ्गार-रसकी इसके जोड़की कोई भी दूसरी पुस्तक नहीं है यह अनुपम और अद्वितीय ग्रन्थ है; पर है जरा कठिन। इसी कठिनाईको दूर करनेके लिए कविवर लाला भगवानदीनजी, प्रो० हिन्दू-विश्व-विद्यालय, काशी ने अर्वाचीन ढंगकी नवीन टीका तैयार की है। टीका कैसी होगी, इसका अनुमान पाठक टीकाकारके नामसे ही करलें। इसमें बिहारीके प्रत्येक दोहेके नीचे उसके शब्दार्थ, भावार्थ, विशेषार्थ, वचननिरूपण, अलंकार आदि सभी ज्ञातव्य बातोंका समावेश किया गया है। संशोधित सचित्र संस्करण मूल्य १॥)

'सरस्वती' 'सौरभ' 'शारदा' 'विद्यार्थी' आदि पत्रिकाओं तथा बड़े बड़े विद्वानोंने इस पुस्तककी मुक्तकंठसे प्रशंसा की है।

This book is sanctioned as a reference book for Hindi Teachers in High Schools of Central Provinces and Berar.

—*Vide Order No. 6801, Dated 23-9-23*

श्रीकृष्ण-जन्मोत्सव

(लेखक—श्रीयुत देवीप्रसाद 'प्रीतम')

इस पुस्तकके परिचयमें हम केवल इतना ही कह देना चाहते हैं कि यह ग्रन्थ भगवान् श्रीकृष्णकी जन्म-सम्बन्धिनी पौराणिक कथाओंका एक खासा दर्पण है। घटनाक्रम, वर्णन-शैली तथा विषय-प्रतिपादनमें लेखकने कमाल किया

शृंगारसोरठ, रहीम काव्य, पाठान्तर (Parallel Quotations) दो चित्र दिये गये हैं। इन सबके अतिरिक्त प्रारम्भमें गवेषणापूर्ण बृहद् भूमिका भी इसमें जोड़ दी गयी है, जिसमें रहीमके काव्यकी आलोचना साथ-ही-साथ उनके सम्बन्धकी किम्वदंतियाँ, जीवनी आदि दी गयी हैं। इसके कारण पुस्तकका महत्त्व अत्यधिक बढ़ गया है। पुस्तकान्तमें टिप्पणियाँ भी भरपूर दे दी गयी हैं। सुपरिचित साहित्यसेवी प० मयाशंकरजी याज्ञिकने इस संस्करणका सम्पादन किया है। पृष्ठ-संख्या २१० के ऊपर, मूल्य १)।

गो० तुलसीदासजी कृत

विनय-पत्रिका

(टीकाकार—श्रीवियोगीहरि):

सर्वमान्य 'रामायण' के प्रणेता महात्मा तुलसीदासजीका नाम भला कौन नहीं जानता? गोस्वामीजीकी सर्वश्रेष्ठ रचना यही विनयपत्रिका है। विनय-पत्रिकाका-सा भक्ति-ज्ञानका दूसरा कोई ग्रन्थ नहीं है। इसमें शिव, हनुमान, भरत, लक्ष्मण आदि पार्षदों-सहित जगदीश श्रीरामचन्द्रकी स्तुतिके बहाने वेदान्तके गूढ़ तत्त्वोंका समावेश किया गया है। वेद, पुराण, उपनिषद, गीतादिमें वर्णित ज्ञानकी सभी बातें इसमें गागरमें सागरकी भाँति भर दी गयी हैं। इसकी टीका उच्चकोटिके विद्वान एवं लब्ध-प्रतिष्ठ वियोगीहरिजीने की है। इस टीकामें शब्दार्थ, भावार्थ, विशेषार्थ, प्रसंग, पदच्छेद आदि सब ही कुछ दिये गये हैं। भावार्थके नीचे टिप्पणीमें अन्तर्कथाएँ, अलंकार, शंकासमाधान आदिके साथ-ही-साथ समानार्थी हिन्दी तथा संस्कृत कवियोंके अवतरण भी दिये गये हैं। अर्थ तथा प्रसंगपुष्टिके लिए गीता, वाल्मीकि रामायण तथा भागवत आदि पुराणोंके श्लोक भी उद्धृत किये गये हैं। दार्शनिक भाव तो खूब ही समझाये गये हैं। इन सब बातोंके कारण टीका अद्वितीय हुई है। नवीन संशोधित तथा [illegible]त संस्करण। पृष्ठ-संख्या लगभग ७००। मूल्य २॥), सजिल्द २॥), [illegible] जिल्द ३)।

पुस्तकें मिलने का पता पुस्तक भवन, बनारस सिटी।

This book is sanctioned as a reference book for Hi
Teachers in High Schools Central Provinces and Berar.
No 6801, Dated 28-9-

अनुराग-वाटिका

(प्रणेता श्रीवियोगीहरिजी)

वियोगीहरिजीसे हिन्दी साहित्य प्रेमीगण भलीभाँति परिचित हैं। साहि
विहार, अन्तर्नाद, ब्रजमाधुरीसार कविर्कीर्तन, भावना आदि ग्रंथोंके देख
इनकी असाधारण प्रतिभाका परिचय मिल जाता है। इस पुस्तिकामें
वियोगीहरिजी-प्रणीत ब्रजभाषाकी कविताओंका संग्रह है। इतनी सजीव भा
कविता आपने बहुत कम देखी होगी। छपाई सफाई सुन्दर। मूल्य ।-)।

गुलदस्तए बिहारी

(लेखक—देवीप्रसाद 'प्रीतम')

बिहारी-सतसईके परिचय देनेकी कोई आवश्यकता नहीं, सभी साहित्य
उसके नामसे परिचित हैं। यह 'गुलदस्तए बिहारी' उसी बिहारी-सत
दोहोंपर रचेहुए उर्दू शेरोंका संग्रह है, अथवा यों कहिए कि बिहारी-सतस
उर्दू-पद्यमय टीका है। ये शेर सुननेमें जैसे मधुर और चित्ताकर्षक हैं, वै
भाव-भंगीके ख्यालसे भी अनुपम हैं। इनमें दोहोंके अनुवादमें, मूलके प
भाव छूटने नहीं पाये हैं, बल्कि कहीं-कहीं उनसे भी अधिक भाव शेरोंमें
हैं। ये शेर इतने सरल हैं कि मामूली हिंदी जाननेवाला उन्हें अच्छी तरह
सकता है। इन शेरोंकी पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी, पं० पद्मसिंह श
मिश्रबन्धु,लाला भगवानदीन, वियोगीहरि आदि बड़ेबड़े विद्वानोंने मुक्तकंठसे प्र
की है। इसमें ऊपर बिहारीका मूल दोहा देकर, नीचे प्रीतमजी-रचित उस
का शेर हिंदी लिपिमें दिया गया है। मूल्य ।।।=) सचित्र राजसंस्करणका

शृंगारसोरठ, रहीम काव्य, पाठान्तर (Parallel Quotations) दो चित्र दिये गये हैं। इन सबके अतिरिक्त प्रारम्भमें गवेषणापूर्ण वृह भूमिका भी इसमें जोड़ दी गयी है, जिसमें रहीमके काव्यकी आलो साथ-ही-साथ उनके सम्बन्धकी किम्वदन्तियाँ, जीवनी आदि दी गयी इसके कारण पुस्तकका महत्त्व अत्यधिक बढ़ गया है। पुस्तकान्तमें टिप्प भी भरपूर दे दी गयी हैं। सुपरिचित साहित्यसेवी प० मयाशंकरजी या इस संस्करणका सम्पादन किया है। पृष्ठ-संख्या २१० के ऊपर, मूल्य १)

गो० तुलसीदासजी कृत

विनय-पत्रिका

(टीकाकार—श्रीवियोगीहरि):

सर्वमान्य 'रामायण' के प्रणेता महात्मा तुलसीदासजीका नाम भला नहीं जानता? गोस्वामीजीकी सर्वश्रेष्ठ रचना यही विनयपत्रिका है। वि पत्रिकाका-सा भक्ति-ज्ञानका दूसरा कोई ग्रन्थ नहीं है। इसमें शिव, हनु भरत, लक्ष्मण आदि पार्षदों-सहित जगदाधार श्रीरामचन्द्रकी स्तुतिके बहाने न्तके गूढ़ तत्त्वोंका समावेश किया गया है। वेद, पुराण, उपनिषद, गीता वर्णित ज्ञानकी सभी बातें इसमें गागरमें सागरकी भाँति भर दी गयी इसकी टीका उच्चकोटिके विद्वान एवं लब्ध-प्रतिष्ठ वियोगीहरिजीने की है। टीकामें शब्दार्थ, भावार्थ, विशेषार्थ, प्रसंग, पदच्छेद आदि सब ही कुछ गये हैं। भावार्थके नीचे टिप्पणीमें अन्तर्कथाएँ, अलंकार, शंकासमाधान आ साथ-ही-साथ समानार्थी हिन्दी तथा संस्कृत कवियोंके अवतरण भी दिये हैं। अर्थ तथा प्रसंगपुष्टिके लिए गीता, वाल्मीकि रामायण तथा भागवत पुराणोंके श्लोक भी उद्धृत किये गये हैं। दार्शनिक भाव तो खूब ही समझ गये हैं। इन सब बातोंके कारण टीका अद्वितीय हुई है। नवीन संशोधित परिवर्द्धित संस्करण। पृष्ठ-संख्या लगभग ८००। मूल्य २॥), सजिल्द ३॥ बढ़िया कपड़ेकी जिल्द ३)।

This book is sanctioned as a reference book for Hindi Teachers in High Schools of Central Provinces and Berar.

—Vide Order No 6801, Dated 28-9-26

अनुराग-वाटिका

(प्रणेता— श्रीवियोगीहरिजी)

वियोगीहरिजीसे हिन्दी साहित्य प्रेमीगण भलीभाँति परिचित हैं। साहित्य-विहार, अन्तर्नाद, ब्रजमाधुरीसार, कविकीर्तन, भावना आदि ग्रंथोंके देखनेसे इनकी असाधारण प्रतिभाका परिचय मिल जाता है। इस पुस्तिकामें इन्हीं वियोगीहरिजी-प्रणीत ब्रजभाषाकी कविताओंका संग्रह है। इतनी सर्वांग भावपूर्ण कविता आपने बहुत कम देखी होगी। छपाई सफाई सुन्दर। मूल्य ।-)।

गुलदस्तए बिहारी

(लेखक—देवीप्रसाद 'प्रीतम')

बिहारी-सतसईके परिचय देनेकी कोई आवश्यकता नहीं, सभी साहित्य-प्रेमी इसके नामसे परिचित हैं। यह 'गुलदस्तए बिहारी' उसी बिहारी-सतसईके दोहोंपर रचेहुए उर्दू शेरोंका संग्रह है, अथवा यों कहिए कि बिहारी सतसईका उर्दू-पद्यमय टीका है। ये शेर सुननेमें जैसे मधुर और चित्ताकर्षक हैं, वैसे ही भाव भंगीके ख्यालसे भी अनुपम हैं। इनमें दोहोंके अनुवादमें, सूक्ष्मसे सूक्ष्म भाव छूटने नहीं पाये हैं बल्कि कहीं-कहीं उनसे भी अधिक भाव दर्शाये गये हैं। ये शेर इतने सरल हैं कि मामूली हिंदी जाननेवाला इन्हें अच्छी तरह समझ सकता है। इन शेरोंकी पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी, पं० पद्मसिंह शर्मा, मिश्रबन्धु, लाला भगवानदीन, वियोगीहरि आदि बड़े बड़े विद्वानोंने मुक्तकंठसे प्रशंसा की है। इसमें ऊपर बिहारीका मूल दोहा देकर, नीचे [illegible] शेर हिंदी लिपिमें दिया गया है। मूल्य ।।=) सजिल्द [illegible] १)

स काव्यों से अच्छी उक्तियाँ बिना प्रयास एक ही जगह मिल जायँगी। साहित्यके प्रेमी तथा जनसाधारण दोनों ही इसके पाठसे लाभ उठा सकते हैं। इसमें गम्भीर आलोचनात्मक विशद भूमिका भी संपादकजीने अध्येताओंके लिए दे दी है। पाद-टिप्पणीमें कठिन स्थलोंकी पूर्णरूपसे व्याख्या भी कर दी गयीहै। काव्यप्रेमियोंको इसे अवश्य देखना चाहिये। पृष्ठ संख्या ५०० के ऊपर। मूल्य २)।

झरना

(प्रणेता—जयशङ्करप्रसाद)

हिन्दीके अर्वाचीन लेखकोंमें बाबू 'जयशंकरप्रसादजी' का आसन बहुत ऊँचा है। उच्चकोटिका साहित्यिक नाटक लिखनेमें एवं नवीन शैलीकी चुहचुहाती भावपूर्ण कविताएँ करनेमें आप अपना सानी नहीं रखते। आपकी पुस्तकें आधुनिक समाजमें काफी ख्याति प्राप्त कर चुकी हैं और विश्वविद्यालयोंमें पाठ्य-ग्रन्थोंमें स्वीकृत हो चुकी हैं। प्रस्तुत पुस्तक आपही की रची हुई छायावादी कविताओंका संग्रह है। कविता बडी ही सरल और भावपूर्ण है। इसकी एक-एक लाइन हृदयग्राही है। जिनलोगोंका कहना है कि छायावादी कविताएँ बड़ी नीरस होती हैं, उसके सिर पैरका कहीं पता ही नहीं चलता, उनसे मेरा अनुरोध है कि छः आने पैसेमें इस पुस्तकको खरीदकर अपना भ्रम मिटा डालें।

भावना

(लेखक—वियोगीहरि)

यह एक आध्यात्मिक गद्यकाव्य है। इसकी रचना साहित्य-मर्मज्ञ काव्य-कला-कुशल एवं मंगलाप्रसाद-पारितोषिक-प्राप्त वियोगीहरिजीने की है। इसमें मानव-हृदयमें नित्य उठनेवाली नाना प्रकारकी भावनाओंका सजीव चित्रण है। विश्वप्रेमका विमल स्रोत है। जिस प्रकार कबीर और सूरने समस्त संसारको प्रेममय देखा, उन्हें उसीमें परमात्माकी झलक दिखाई दी, उसीको उन्होंने मुक्तिका मार्ग समझा, इसी प्रकार हरिजीने मनुष्यकी प्रत्येक दैनिक क्रियाको

इसका अनुवाद गद्य-पद्यमय हिन्दी भाषामें किया है। यह अनुवाद मूल ...ने कितना ही आगे बढ़ गया है, इसमें मौलिकता आगयी है। यह नाटक ...तना लोकप्रिय हुआ है कि भारतकी प्रायः सभी यूनिवर्सिटियों तथा साहित्य-...विद्यालयोंमें पाठ्यग्रन्थ रक्खा गया है। हमने विद्यार्थियोंके लाभार्थ इसी पुस्तकका ...यह नया उपयोगी संस्करण निकाला है। इसमें अध्येताओंके लिए ८० अस्सी ...की आलोचनात्मक भूमिका भी प्रारम्भमें दे दी गयी है, जिसमें कवि-प्रतिभा, नाटकका इतिहास, लेखनशैली आदिपर गवेषणापूर्ण आलोचना की गयी है। ...अन्तमें करीब १५० डेढ़ सौ पृष्ठों में भरपूर टिप्पणी दी गयी है, जिसमें नाटकमें ...आये हुए पद्यांशोंकी पूरी टीका तथा पद्यांशोंके कठिन शब्दोंके अर्थ दिये गये हैं, अलंकार आदि बतलाये गये हैं, स्थल स्थलपर तुलनाके लिए संस्कृत मूल भी उद्धृत किये गये हैं, प्रमाण के लिए साहित्यदर्पण, काव्य-प्रकाश आदि ग्रन्थोंके अवतरण भी दिये गये हैं। इसका संशोधन प० रामचन्द्र शुक्ल तथा बा० श्यामसुन्दरदासजी बी० ए०, प्रो० हिन्दू विश्वविद्यालय, ने किया है। ...सम्पादन, नागरी-प्रचारिणी सभाके मन्त्री, बाबू व्रजरत्नदासजी बी० ए० ने ...किया है। पृष्ठ-संख्या ३५० के लगभग, मूल्य १) मात्र।

...सोल एजेन्सी की

सस्ती साहित्य-पुस्तकमाला द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

बंकिम ग्रन्थावली (प्रथम खण्ड)—बंकिमबाबूके 'आनन्दमठ', 'लोक-रहस्य' तथा 'देवी चौधरानी' का अविकल अनुवाद। पृष्ठ-संख्या ५१२। मूल्य१) ...जिल्द १।–॥, द्वितीय संशोधित संस्करण शीघ्र छपेगा।

गोरा—जगद्विख्यात रवीन्द्रनाथ ठाकुर कृत 'गोरा' नामक पुस्तकका अवि-

कल अनुवाद। पृष्ठ-संख्या ६८८। मूल्य १।-)॥, सजिल्द १॥≡)। द्वि
शीघ्र छपेगी।

बंकिम-ग्रन्थावली (द्वितीय खण्ड)—बंकिम बाबूके 'सीताराम
'दुर्गेशनंदिनी' का अविकल अनुवाद। पृष्ठ संख्या ४३२, ॥।-)॥, सजि

चंडीचरण-ग्रन्थावली (प्रथम खण्ड) अर्थात् टामकाकाकी
Uncle Tom's Cabin के आधारपर स्वर्गीय चण्डीचरणसेन लिखि
काकार कुटीर' का अविकल अनुवाद। पृष्ठ-संख्या ५१२। मूल्य
सजिल्द १॥)।

बंकिम-ग्रन्थावली (तृतीय खण्ड)—बंकिमबाबूके 'कृष्णकान्त
'कपाल-कुण्डला' तथा 'रजनी' का अविकल अनुवाद। पृष्ठ-संख्या
मूल्य ॥।-)॥, सजिल्द १≡)।

चण्डीचरण-ग्रन्थावली (दूसरा खण्ड)—चण्डीचरणसेन लिखित
गंगागोविंदसिंह' का अविकल अनुवाद। पृष्ठ-संख्या २६०। मूल्य ॥)।

वाल्मीकीय रामायण (बालकाण्ड)—पृष्ठ संख्या बड़े साइज़के
अर्थात साधारण साइज़के ३८४। मूल्य ॥।)।

वाल्मीकीय रामायण (अयोध्याकाण्ड)—पृष्ठ-संख्या बड़े सा
३८४, अर्थात् साधारण साइज के ७६८ मूल्य १।)।

वाल्मीकीय रामायण (अरण्यकाण्ड)—पृष्ठ-संख्या बड़े सा
२०८, अर्थात् साधारण साइज़के ४१६। मूल्य ॥।-)

वाल्मीकीय रामायण (किष्किन्धाकाण्ड)—पृष्ठ संख्या बड़े साइ
२०८, अर्थात् साधारण साइज़के ४१६। मूल्य ॥।-)

वाल्मीकीय रामायण (सुन्दरकाण्ड)—पृष्ठ संख्या बड़े साइज़के २
अर्थात् साधारण साइज़के ४८०। मूल्य ॥।≡)

वाल्मीकीय रामायण (लङ्का काण्ड)—छप रहा है।

वाल्मीकीय रामायण (उत्तर काण्ड)—शीघ्र छपेगा।

। विद्वानोंसे सम्बन्ध, भाषा क्या है, उसके रूपात्मक और भावात्मक अंग, ये, उसके समुदाय, परिवर्तन, एवं आर्य, सेमेटिक, हेमेटिक और धातविक एँ, आर्योंका आदिम निवास स्थान, उनकी शाखाएँ और भाषाएँ, त, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश आदि समस्त देश भाषाएँ, पुरानी हिन्दी, चमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी आदि सबकी उत्पत्ति और विकास के भेद, भावा विकास के भेद और स्वरूप, अर्थ-संकोच, अर्थ-विस्तार, संज्ञा, विशेषण य, क्रिया और सर्वनाम आदि की उत्पत्ति, आधुनिक भारतीय भाषाओंमें सकी आरम्भसे लेकर अन्त तककी अवस्था, विकास तथा राजस्थानी, अवधी भाषा, बुँदेली, खड़ी बोली आदिका बहुत ही अच्छा विवेचन किया गया है य ३)

साहित्यालोचन

(ले० बा० श्यामसुन्दरदास)

अंग्रेजी और संस्कृतकी बीसियों पुस्तकोंका अध्ययन करके यह पुस्त लखी गयी है। इसमें इस बात का बहुत ही पाण्डित्य पूर्ण विवेचन किया ग है कि कला, काव्य साहित्य, रस, नाटक, उपन्यास आदिका वास्तविक रूप है और कैसा होना चाहिए और उनकी रचना, अध्ययन अथवा आलोचना किस प्रकार होनी चाहिए। कवियों, लेखकों, सम्पादकों और साहित्य प्रेमियोंके यह सचमुच एक अमूल्य रत्न है। बड़े-बड़े दिग्गज विद्वानोंने मुक्तकंठसे इसकी प्रशंसा की है। पृष्ठ संख्या ४०० के लगभग मूल्य २)

जनमेजयका नागयज्ञ

(लेखक—जयशंकर प्रसाद)

हिन्दी के कृतविद्य लेखकोंमें जयशंकर प्रसादजीका दरजा है। वर्तमान समयके नाटकाचार्य कहे जाते ... पौराणिक कालकी एक घटना, महाराज परीक्षितकी मृत्यु कविका ... त्या, जनमेजय द्वारा

नागों का पराभव होना आदिके आधारपर इस नाटककी सृष्टि हुई है। नाटक पौराणिक तथा ऐतिहासिक दोनों ही दृष्टियों से अपूर्व है। मूल्य।

बौद्धकालीन भारत

(लेखक—पं श्रीयुत् जनार्दन भट्ट एम० ए०)

अँग्रेजी, हिन्दी आदि सैकड़ों उत्तमोत्तम ग्रन्थोंका बहुत अच्छी तरह मनन और मनन करके यह पुस्तक बहुत ही परिश्रम पूर्वक लिखी गयी है। पुस्तक ऐतिहासिक होनेपर भी उपन्यासकासा आनंद देती है। संक्षेपमें की विषयसूची इस प्रकार है—(१) बौद्ध-कालीन इतिहासकी सा। (२) बुद्धके जन्म-समयकी भारतकी दशा। (३) जैन-धर्मका प्राचीन इति गौतमबुद्ध की जीवनी। (५) गौतमबुद्धके सिद्धान्त और उपदेश। (बौद्धसंघका इतिहास (७) प्राचीन बौद्धकालके राजनीतिक इतिहास। (प्राचीन बौद्धकालके प्रजातंत्र राज्य। (९) मौर्य साम्राज्यकी शासनव (१०) बौद्धकालके राजनीतिक विचार। (११) सामाजिक अवस्था (साम्पत्तिक अवस्था। (१३) बौद्धकालका साहित्य। (१४) बौद्ध शिल्पकला। (१५) बुद्धका निर्वाणकाल। (१६) बौद्धकालके विश्वविद्यालय। (१७) बौद्ध महासभाएँ आदि आदि। हिन्दीमें यह अपने ढंग अनुपम और अपूर्व पुस्तक है। प्रत्येक इतिहास-प्रेमीको इसे अवश्य प चाहिए। पृष्ठसंख्या प्रायः चारसौ से ऊपर है। बढ़िया एण्टिक कागजकी जि बँधी प्रति पुस्तका मूल्य ३), और अच्छे चिकने कागजपर छपी पुस्तकका मूल्य २) है।

जरासंधवध महाकाव्य

भारतेन्दु बा० हरिश्चन्द्रजीके पिता महाकवि बा० गोपालचन्द्र उर्फ गिरिधरदासजीकी यह रचना हिन्दी-साहित्यका प्रथम महाकाव्य माना जाता है। इसका कोई संस्करण अभी तक उपलब्ध नहीं था। हम आपने

की प्रसिद्ध कथानुसार मगधनरेश जरासंधकी मथुरापर चढ़ाई, युद्ध आदिका वर्णन है। यमक, अनुप्रास दर्शनीय है, तथा वीर रस से परिप्लुत है। पदोंकी क्लिष्टता दूर करनेके लिए पादटिप्पणियाँ भी दीगई हैं, भूमिकामें ...का चरित्र तथा चित्र भी दिया गया है। पृष्ठ संख्या २००, छपाई ... अच्छी। मूल्य सजिल्द १।) अजिल्द १)

चन्द्रालोक

प्रसन्नराघवकार पीयूषवर्षी जयदेवकी कृति चन्द्रालोक समस्त संस्कृत-...के विद्यार्थियोंकी परिचित तथा अलंकारियोंकी कंठाभरण है। इसमें अनुष्टुप ...में शेष, गुण, अलंकारादिकी अच्छी विवेचना है, जिससे यह विद्वान् और ...र्थी दोनोंहीके बड़े कामका है। इस संस्करणमें संस्कृत मूल तथा हिन्दी ...दी गई है। भूमिकामें कविकी जीवनी तथा ग्रन्थका पूरा परिचय दिया ...है। श्लोक तथा पारिभाषिक शब्दोंकी अनुक्रमणिका देदी गई है। कागज, ...छपाई उत्तम। पृष्ठ संख्या १३०। मू० ।।=)

इंशा, उनका काव्य तथा केतकीकी कहानी

आरम्भमें फारसी तथा उर्दूके सुप्रसिद्ध कवि इंशाअल्लाहकी जीवनी तथा ...की रचनाओंकी आलोचना चौसठ पृष्ठोंमें दी गई है। फिर चालीस पृष्ठोंमें ...की उर्दू रचनासे कुछ पद्य संकलित किये गये हैं और अन्तमें उतने ही ...पृष्ठोंमें रानी केतकीकी कहानी या उदयभान चरित दिया गया है। इसका पाठ ...करनेमें सौ वर्ष तककी प्राचीन प्रतियाँ एकत्र की गयी थीं। इसी कहानीके ...कारण इंशाको लल्लूलालजीके समकक्ष हिन्दी साहित्य-इतिहासमें स्थान मिला है। ...टीक, अच्छा कागज और छपाई उत्तम, मू० ॥)

निमाई संन्यास नाटक

'अमृत बाजार पत्रिका' के संपादक तथा बंगला के प्रसिद्ध लेखक स्वर्गीय ...० शिशिर कुमार घोषने श्री महाप्रभु कृष्ण चैतन्यके संसार पावनार्थ

संन्यास ग्रहण की लीला के आधारपर इस नाटककी रचना की थी जिसका सरल हिन्दीमें अनुवाद है। ४० पृष्ठोंकी बड़ी भूमिकामें वैष्णवधर्म की ज्ञातव्य बातें भी दी गई हैं, जिससे यह वेष्णवोंके लिए विशेष उपयोगी हो है। इसमें महाप्रभुजीका एक चित्र भी दिया गया है, जिसमें वे सपरिकर क श्रवण कर रहे हैं। पृष्ठ-संख्या लगभग २०० मूल्य ॥)

सर हेनरी लॉरेंस

लेखक—ब्रजरत्नदास बी० ए०

भारतके हितकी आकांक्षा रखनेवाले एक अंग्रेज सज्जनका यह जीवनचरि है। जिस समय भारत सरकार संयुक्त प्रान्त तथा पञ्जाब पर अपना अधिक जमा रही थी, उस समयका इतिहास संक्षेपमें इसमें आगया है। आरम्भ प्रथमवर्षीय युद्धका कुछ उल्लेख है। इसके अनन्तर इस ग्रन्थमें उस विप्लव कारी अफ़गान-युद्धका वर्णन दिया गया है जिसमें एक अँग्रेजी सेनाका भयंक नाश हुआ था और फिर जिसके प्रतिशोधके लिए बड़ी तैयारियाँ हुई थीं इसके बाद सिख-साम्राज्यके उत्थान तथा द्वितीय सिख-युद्ध, काश्मीर राज्यकी स्थापना आदिका संक्षेपमें पूरा इतिहास आगया है। लॉर्ड डलहौज़ीकी ज़ब्तीकी नीतिसे किस प्रकार करौली राज्यकी रक्षा की गई थी इसका भी विवरण दिया गया है। इसके अनन्तर अंतमें अवधका संक्षिप्त इतिहास और सन् ५७ के ग़दर विद्रोहके लखनऊके घेरेका प्रथम दृश्य दर्शित किया गया है। मूल्य ॥)

आरोग्य-मंदिर

यदि आप परिवारको दीर्घजीवी बनाना चाहते हैं, चूना, चोकर, लकड़ी, घास, गूगुल, नीम, गूलर, जामुन, बूहर, इमली, तुलसी आदि द्वारा स्वास्थ्य ... चाहते हैं, यदि आप जानना चाहते हैं कि सरल प्राकृतिक उपायों से ... हो सकता है एवं हिस्टीरिया, चेचक, प्लेग, हैजा, नज़ला, ... जलोदर, नेत्र-रोग, प्रमेह इत्यादि किस प्रकार आसानीसे दूर किये जा

कर देती हैं। इसमें स्त्री पुरुषके आदर्श सम्बंधका बिलकुल नवीन विवेचन है इसमें एक उच्च शिक्षा शिक्षिता और मनस्विनी नारीके १० ऐसे पत्र छापे गये हैं, जो उसने अपने पतिको लिखे थे, हमारे समाजके प्रत्येक दंपति इसमें अपने हृदय की अनेक वेदनाएं देख पाएंगे। नवयुवकों और नवयुवतियोंको पुस्तक मँगाकर पढ़नी चाहिए। मू० १)

प्रोत्साहन

लेखक छविनाथ पाण्डेय। एक सच्ची घटनाके आधारपर लिखा गया मौलिक उपन्यास है। यह उपन्यास शिक्षाप्रद होनेके साथ-ही-साथ मनोरंजक भी बड़ा है। एकबार इसे अवश्य पढ़िए। मू० ॥)

वनिता विनोद

काशी-नागरी प्रचारिणी सभाने स्त्रियोंके पढ़नेकी उत्तम पुस्तकोंका अभाव देखकर यह 'वनिताविनोद' नामकी पुस्तक छपाई है। इसमें १६ उपयोगी विषय हैं। (१) आत्मविस्मृति और पतिभक्ति (२, क्रोध-शांति (३) धैर्य और साहस (४) विद्याके लाभ (५) दूसरोंकी सम्मतिका आदर (६) बालविवाह (७) बहुविवाह (८) व्यय (९ चित्त प्रसन्न करनेके उपाय (१०) संगीत और गृहके काम (११) स्वास्थ्य-रक्षा (१२) व्यायाम (१३) गर्भरक्षा और शिशुपालन (१४) भूत प्रतोंके डरका बुरा परिणाम (१५) गृहचर्या (१६) धूर्तों, बालकों और सेवकोंकी कुचालोंसे बचना। यह पुस्तक हिंदीके १२ चुने हुए लेखकों द्वारा लिखीगई और बाबू श्यामसुन्दरदासजी बी० ए० द्वारा सम्पादित की गई है। मू० सजिल्द पुस्तकका केवल ॥=)

धर्म्म और विज्ञान

सम्पादक लाला भगवानदीनजीने विलायतके मशहूर लेखक मिस्टर ड्रेपर लिखी एक अँग्रेजी पुस्तक "Conflict between Religion Science से इसका अनुवाद किया है। इस पुस्तकने विलायतके अंधविश्वासको दूर करने में बड़ी मदद की है।

अतीत-स्मृति

(ले० प० महावीरप्रसाद द्विवेदी)

सरस्वती-संपादक प० महावीरप्रसादजी द्विवेदीकी लेखनीका जो मज आस्वादन कर चुके हैं उन्हें इस पुस्तकका महत्व बतलानेकी आवश्यकता नहीं द्विवेदीजीने प्रस्तुत पुस्तकमें उन प्राचीन महत्वपूर्ण विषयोंपर लेख लिखा है जि पर कि हिन्दीकी कौन कहे बँगला, मराठी, गुजराती आदि सम्पन्न भाषाओं तक विरलाही कोई लेख मिलेगा । इसमें उन विवादग्रस्त प्राचीन आर्य-सभ्यता जमानेके लेखोंकी पूर्णरूपेण समीक्षा की गयी है जिनके सम्बन्धमें बड़े से ब पाश्चात्य विद्वान् भी भ्रम में पड़े हुए हैं। द्विवेदीजीने कहीं कहीं पाश्चात विद्वानोंके सिद्धान्तोंका ऐसे युक्तिपूर्ण तर्कोंसे खण्डन किया है कि बस रे बस अस्तु, जिनको भारतीय पुरातत्व-सम्बन्धी ज्ञान तथा तत्सम्बन्धी नई नई गवे षणाओं से जरा भी प्रेम है, उन्हें इस पुस्तकको अवश्य पढ़ना चाहिये । हिन्द साहित्यमें यह एक अद्वितीय ग्रन्थ है। मूल्य १।=)।

बङ्गविजेता

यह उपन्यास बङ्गालके साहित्य-शिरोमणि प्रसिद्ध लेखक सर रमेशचन् दत्त लिखित पुस्तकका अनुवाद है। अत्यन्त रोचक होनेका ही कारण है बङ्गला भाषामें इसके सात संस्करण छप चुके हैं। साहित्य ही अच्छी व सु रुचि मनुष्योंमें पैदा करता है, इसलिये हमेशा उत्तम उपन्यास पढ़िये। य उपन्यास बड़ाही रोचक और शिक्षाप्रद है। छपाई और कागज दोनों बहुत उम है। २ रंगीन व सादे चित्र हैं। मूल्य १॥

धर्मशिक्षा

इस पुस्तक में क्रमशः धर्मके दस लक्षण हिन्दू-धर्म के मुख्य-मुख्य धर्मों ग्रन्थों का विवरण, वर्णाश्रमधर्म, मनुष्यकी धार्मिक दिनचर्या, अध्यात्मि धर्म, इत्यादि आर्यधर्मके मुख्य मुख्य अंगोंपर लगभग बाईस विद्वा

सप्रमाण लिखे गये हैं। धर्मशिक्षा पर विद्यार्थियों और सर्वसाधारण के काम की इतनी उत्तम पुस्तक हिन्दी भाषामें दूसरी नहीं है। थोड़े ही समय के अंदर इसके तीन संस्करण निकल चुके हैं। पौने तीन सौ सफे की पुस्तकका मूल्य सिर्फ एक रुपया।

गार्हस्थ्यशास्त्र

हिन्दी भाषामें Domestic Science पर यह पहली पुस्तक है। इसमें घर कैसा हो, घरकी स्वच्छता, वायुका प्रबन्ध, भण्डारघर, रसोईघर, घरकी फुलवाड़ी, आमदनी और खर्चकी व्यवस्था, घरकी चीज़ोंको किस प्रकार सुरक्षित रखना, त्योहारों और उत्सवोंका प्रबन्ध, शिशुपालन, रोगी सेवा, भिन्न भिन्न घरेलू दवाइयोंके सरल नुसखे, इत्यादि गृहस्थियोंके लिए सैकड़ों उपयोगी बातोंका सप्रमाण वर्णन किया गया है। प्रत्येक घरमें बहू बेटियों के हाथमें यह पुस्तक अवश्य रहनी चाहिए। मूल्य एक रुपया।

हृदय का कांटा

यह एक सामाजिक उपन्यास हिन्दी भाषाकी प्रसिद्ध उपन्यास लेखिका कुमारी तेजरानी दीक्षित बी० ए० ने लिखा है। इसमें हिन्दू विधवाओंकी दशा, पतिभक्ति, अँगरेज़ी शिक्षाका बुरा प्रभाव, देशभक्त-स्वयंसेवकोंकी कार्यदक्षता, इत्यादि अनेक बातों का बहुत ही मनोरंजक ढंग से वर्णन किया गया है। पुस्तक को एकबार हाथमें लेकर छोड़नेको जी नहीं चाहता। बहुत बढ़िया छपी है। मूल्य १।) रु०।

बिखरा फूल

बँगलाकी प्रसिद्ध लेखिका श्रीमती स्वर्णकुमारी देवीके एक सामाजिक उपन्यासका यह सुन्दर अनुवाद है। इसमें शृंगार और करुणारसके भावोंमें भिन्न भिन्न पात्रोंका चरित्र दर्शाते हुए लेखिकाने मानसी-चरित्रका बहुत

सुन्दर चित्र खींचा है। कथानक इतना मनोरंजक है कि पढ़कर चित्त प्रसन्न हो जाता है। मूल्य ।॥) रु०।

पाथेयिका

ठाकुर श्रीनाथसिंहजी की लिखी हुई १७ सामाजिक कहानियों का संग्रह है इसकी एक एक कहानी हिन्दू समाजकी वर्तमान दयनीय दशाका भावपूर्ण चित्र सामने रखती है। नवयुवक और नवयुवतियों को इसे अवश्य पढ़ना चाहिये पुस्तककी सुन्दरता देखते ही बनती है। मूल्य १) रुपया।

सचित्र दिल्ली

दिल्ली का मनोरंजक ऐतिहासिक वर्णन सुन्दर चित्रोंके साथ। बारह आने पैसे खर्च करके घर बैठे दिल्लीकी सैर कर लीजिए।

सदाचार और नीति

मनुष्यके प्रतिदिनके व्यवहारमें सदाचार और नीतिकी कैसी आवश्यकता है—यही इस पुस्तकमें कई निबन्धोंके द्वारा बतलाया गया है। संस्कृत और हिन्दी कवियोंके उपदेश भी बीच बीचमें दिये हैं। पुस्तक नवयुवकोंके बड़े काम की है। मूल्य ॥=) दस आने।

अपना सुधार

शरीर, मन और आत्माके सुधार पर वैज्ञानिक निबन्ध। विद्यार्थियों और नवयुवकोंमें इस पुस्तकका बहुत प्रचार हो रहा है। मूल्य ॥) आठ आने

महादेव गोविन्द रानाडे

पं० बनारसीदासजी चतुर्वेदीने यह जीवनचरित्र बहुत ही खोजके साथ लिखा है। सर्वसाधारणके लिए उपदेशप्रद और विद्यार्थियों को पारितोषिकमें देने योग्य है। मूल्य ।॥) बारह आने

बालमनोरंजन ।=)

धातु दौर्बल्य या प्राइवेट चिकित्सा ॥)

प्रचारित पुस्तकें

भाषा विज्ञान ३)

साहित्यालोचन २,

जनमेजय का नागयज्ञ ॥=

बौद्धकालीन भारत २)

जरासंध वध महाकाव्य १)

चंद्रालोक ॥=)

इंशा उनका काव्य तथा केतकी की कहानी ।)

निमाई संन्यास नाटक ।॥)

सर हेनरी लारेंस ।॥)

आरोग्य मंदिर २)

भयंकर डकैती ॥)

दीर्घ जीवन ।)

भाषा विज्ञान २॥।)

गोसाइन ॥)

स्त्री के पत्र १)

जनता विनोद १।=,

धर्म और विज्ञान २।=)

प्राचीन भारत की सभ्यता का इतिहास चारों भाग ५)

गोपाभ ॥।

॥=)

॥।)

धर्म शिक्षा

गार्हस्थ शास्त्र

हृदय का काँटा

बिखरा फूल

पार्थेयिका

ठचित्र दिल्ली

सदाचार और नीति

अपना सुधार

महादेव गोविन्द रानाडे

एब्राहिम लिंकन

कर्मफल

मीठी चुटकी

मुस्कान

ईश्वरी बोध

मनुष्य जीवन की उपयोगिता

ब्रह्मचर्य ही जीवन है

वीर राजपूत

हम सौ वर्ष कैसे जीवें

भाग्यनिर्णय

जगमगाते हीरे

वीरों की सच्ची कहानियाँ

मनोहर कहानियाँ भाग १

" " भाग २

वैद्युत शास्त्रार्थ

सामाजिक रोग

सुन्दर साँझी

पता—पुस्तक-भवन, बनारस सिटी।

सुन्दर चित्र खींचा है। कथानक इतना मनोरंजक है कि पढ़कर चित्त प्रसन्न जाता है। मूल्य ।।।) रु० ।

पाथेयिका

ठाकुर श्रीनाथसिंहजी की लिखी हुई १७ सामाजिक कहानियों का संग्रह इसकी एक एक कहानी हिन्दू समाजकी वर्तमान दयनीय दशाका मार्मिक [illegible] सामने रखती है। नवयुवक और नवयुवतियों को इसे अवश्य पढ़ना चाहिये पुस्तककी सुन्दरता देखते ही बनती है। मूल्य १) रुपया।

सचित्र दिल्ली

दिल्ली का मनोरंजक ऐतिहासिक वर्णन सुन्दर चित्रोंके साथ। चार पैसे खर्च करके घर बैठ दिल्लीकी सैर कर लीजिए।

सदाचार और नीति

मनुष्यके प्रतिदिनके व्यवहारमें सदाचार और नीतिकी कैसी [illegible] कता है—यही इस पुस्तकमें [illegible] निबन्धोंके द्वारा बतलाया गया है। [illegible] और हिन्दी कवियोंके उपदेश [illegible] दिये हैं। पुस्तक [illegible] बड़े काम की है। मूल्य ॥=) [illegible] आने।

अपना सुधार

शरीर मन और आत्माके सुधार का वैज्ञानिक विवेचन। [illegible] नवयुवकोंमें इस पुस्तकका बहुत प्रचार हो रहा है। मूल्य [illegible]

पाप करते हैं, इसमें यह दिखलाया है कि देशके उद्धारका बीड़ा उठाने स्वार्थी लीडर किस प्रकार पबलिकके पैसेका अपव्यय करते हैं। इसमें दिखलाया गया है कि कपट, धूर्तता, पाखण्ड, दंभ आदिने किस प्रकार सम को चारों ओरसे घेर रखा है। इसमें दिखलाया गया है कि बालविधवा कारण समाजमें कितना अधिक व्यभिचार फैल रहा है। इसमें दिखलाया है कि उपाधिके पीछे मर-मिटनेवाले किस प्रकार बादमें गली-गली ठोकर फिरते हैं। इस पुस्तकके पढ़नेसे समाजकी अवस्था एक बार आपकी आँ आगे नाच उठेगी। मूल्य १)

सुन्दर सरोजिनी

यह एक अत्यन्त रोचक सामाजिक उपन्यास है। इसका कथानक बड़ा सुन्दर और शिक्षाप्रद है। इसमें कुशलचन्दकी मित्रता, सरोजिनीका पाति धर्म-पालन, उनके माता-पिताका वात्सल्य प्रेम, ईश्वरकी महिमा, भारत लंकाका अज्ञात इतिहास, प्राकृतिक दृश्योंका वर्णन इत्यादि पढ़कर आप हो जायँगे। इसकी भारतमित्र, बंगवासी, हिन्दी-केशरी, आनन्द बाजार पत्रि हिन्दुस्तान रिव्यू, सरस्वती आदि-आदि पत्र-पत्रिकाओंने मुक्तकंठसे प्रशंसा की मूल्य केवल ॥)

मायावी

या फूल साहब के २० खून

प्रसिद्ध जासूसी उपन्यास-लेखक श्रीयुत पाँचकौड़ीदे-कृत बंगला पुस्तक जासूस-सम्पादक श्रीगोपालराम कृत हिंदी अनुवाद। यदि आपको दुनिया जीता जागता रहना है तो दुष्टों, कुचालियों, नररूपी पिशाचोंका पहचान सीखिये। इसकी योग्य शिक्षा यही "मायावी" आपको देगा। इसमें की विचि घटनायें तथा मायावी की लीला व जासूस की कुशलता पढ़कर आप दंग होंगे सरल व मधुर है। आजतक आपके पढ़े हुए सभी जासूसी उपन्यास इस त हैं। सचित्र। मूल्य १॥)

विहार-उड़ीसा गाइड

इसमें विहार-उड़ीसाके समस्त शहरों तथा कसबोंका विस्तृत हाल ि
हुआ है। दर्शनीय स्थानोंका परिचय देनेके साथ-ही-साथ प्रत्येक स्थानकी त
वहाँकी उपज या व्यापारकी वस्तु, नदियोंके नाम, वहाँकी दलाली बोली, ध
शाला-सूची, बैंक, लोहे, कपड़े, किराने आदिके व्यापारीके नाम भी इसमें ि
हुए हैं। ट्रावेलिंग एजेंटों तथा रोजगारियोंके बड़े कामकी वस्तु है। मूल्य १)

हमारी सोल एजेन्सी को, प्रकाशित एवं प्रचारित पुस्तकों की विषयवार नामावली

(विवरण पीछे दिया जा चुका है)

पद्य काव्य

बिहारी सतसई	।।।)
श्रीकृष्णजन्मोत्सव	।-), ।≤)
केशव कौमुदी	२॥)
रहीम रत्नावली	१)
विनय पत्रिका सटीक (वियोगीहरि)	२॥)
अनुराग वाटिका	।-)
गुलदस्तए बिहारी	।॥=), १॥)
भ्रमरगीतसार (सूरदास)	१)
तुलसी-सूक्ति-सुधा	२)
झरना	।=)
भावना	।।=)
कुसुम-संग्रह	
मुद्राराक्षस	

,, ,, तृतीय भाग।
चंडीचरण-ग्रंथावली प्रथमभाग
,, ,, द्वितीय भाग
गोरा
वाल्मीकीय रामायण (बालकांड
,, ,, अयोध्याकांड
,, ,, (अरण्यकांड)
,, ,, (किष्किन्धाकांड)
,, ,, (सुन्दरकांड)
,,